इतिहासपुराणसाहित्य
का
इतिहास

कुंवरलाल 'व्यासशिष्य'

इतिहासपुराणसाहित्य का इतिहास

प्रक्कथन

डा० पुष्पेन्द्रकुमार, रीडर (संस्कृत)
दिल्ली विश्वविद्यालय

लेखक

डा० कुँवरलाल
'व्यासशिष्य'

इतिहासविद्याप्रकाशन
आगरा दिल्ली

© प्रकाशक—

इतिहासविद्याप्रकाशन

1. धूलियागंज आगरा
2. 10-बी, पंजाबी बस्ती
नाँगलोई, दिल्ली-41

प्रथम संस्करण मई 1978

मूल्य : 10.00

मुद्रक :—
जय भारत प्रिन्टर्स, 2082
मुकीमपुरा सब्जीमण्डी,
दिल्ली-110007

दो शब्द

डा० पुष्पेन्द्रकुमार
भूतपूर्व प्रधानाचार्य श्री लालबहादुर राष्ट्रिय संस्कृत विद्यापीठ
शान्तिनिकेतन, दिल्ली ।

भारतीय वाङ्मय में इतिहास और पुराणों का अपना एक विशिष्ट स्थान है। भारतीयता को अपने समग्र एवं समन्वितरूप में समझने के लिए पुराणों का ज्ञान अत्यन्त आवश्यक भी है एवं महत्वपूर्ण भी। अभीतक इस क्षेत्र में विद्वानों ने कम ही ध्यान दिया था। इतिहासपुराणसाहित्य का इतिहास का अवलोकन करने का मुझे सुअवसर मिला। डा० कुँवरलाल ने पुराणों एवं इतिहास के बारे में भारतीयदृष्टिकोण का सप्रमाण विशदरूप से पर्यालोचन एवं मूल उद्धरणों सहित यह अध्ययन लेखक की चिन्तन शक्ति, शास्त्रज्ञान मौलिक सूझबूझ का परिचायक है। यह पुस्तक कालेज छात्र अनुसंधित्सु, एवं पुराण के सामान्य अध्येताओं के लिये मूल्यवान् प्रमाणित होगी। मैं उदीयमान प्रवुद्ध लेखक डा० कुँवरलाल जी को उनके इस सराहनीय प्रयास पर हार्दिक शुभकामनाएं आशीष देते हुये अत्यन्त हर्ष का अनुभव कर रहा हूं। आशा है भविष्य में भी उनकी लेखनी से आने वाले ग्रन्थों की रचना होती रहेगी। इसी कामना के साथ।

Dr. Pushpendra Kumar Sharma
M.A., Ph.D.; F.R.A.S. (London)

Reader Incharge Sanskrit Deptt.
South Delhi Campus,
University of Delhi
Dated 11-4-1978

रीडर (संस्कृत)
साउथकैम्पस, दिल्ली
विश्वविद्यालय दिल्ली
दि० 11-4-1978

आमुख

भारतीय दृष्टिकोण से इतिहासपुराणसाहित्य का इतिहास' लिखने का यह प्रथम प्रयत्न है। श्री दयानन्दसरस्यती, योगी अरविन्द एवं पाश्चात्य लेखकों यथा मैक्समूलर, राथ, कीथ, मैक्डानल इत्यादि के प्रयत्न से वैदिक वाङ्मय का पर्याप्त प्रकाशन एवं विज्ञापन हुआ परन्तु उपर्युक्त मनीषियों ने इतिहासपुराण की पूर्ण उपेक्षा की। इस दिशा में भारतीय विद्वानो में सर्वप्रथम प्रयत्न पं० भगवद्दत्त जी, का विशेषत: उल्लेखनीय है, जिन्होंने कट्टर आर्यसमाजी होते हुये भी इतिहासपुराणों के महत्व पर पूर्ण ध्यान दिया, इन्होंने सिद्ध किया कि 'इतिहासपुराण' ही प्राचीनभारतीय इतिहास के मूल स्रोत है, परिणामस्वरूप पं० भगवद्दत्त ने 1925 में लाहौर से 'भारतवर्ष का इतिहास' इतिहासपुराणों के आधार प्रकाशित किया जिसके वृहद संस्करण भारतवर्ष का बृहद् इतिहास-2 भागों में दिल्ली से प्रकाशित हुये। पण्डितजी का यह ग्रन्थ भारतीय इतिहास में युगप्रवर्तक है, परन्तु विद्वानों में इस पर अपेक्षित ध्यान नहीं दिया है।

सनातनधर्मी प्रसिद्ध विद्वान् म. म. मधूसूदन ओझा एवं उनके शिष्य पं. गिरधर शर्मा चतुर्वेदी के प्रयत्न भी इस सम्बन्ध में उल्लेखनीय है। ओझा जी की पुस्तक 'पुराणोत्पत्तिप्रसंग' यद्यपि लघुपुस्तक हैं परन्तु पुराणों के सम्बन्ध में उपयोगी ज्ञान की वृद्धि करती है। पं. गिरधरशर्माजी ने 'पुराणपारिजात' आदि ग्रन्थों में कुछ अधिक विस्तार से लिखा।

मैक्समूलर कीथादि ने इतिहासपुराणों की पूर्ण उपेक्षा की। इस सम्बन्ध में पाश्चात्यों में सर्वप्रथम पार्जीटर और किरफेल के प्रयत्न उल्लेखनीय एवं सराहनीय है। पार्जीटर ने पुराणों का गहन अध्ययन करके 'डाइनेस्टीज आफ कलिएज' तथा 'एंशेण्ट इण्डियन हिस्टोरिकल ट्रेडीशन,' नाम के दो महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ लिखे, जिनमें इतिहासपुराणों में उपलब्ध ऐतिहासिक सामग्री का संक्षिप्त अनुशीलन किया गया है। पार्जीटर के प्रयत्न यद्यपि स्तुत्य हैं, तथापि उसकी

दृष्टि भी पर्याप्त दोषपूर्ण थी। उदाहरणार्थ वह वैवस्वतमनु के पूर्वज विवस्वान् यम, इन्द्र, वरुण एवं इनके भी पूर्वज दक्ष, कश्यप, पृथु प्रचेता, स्वायम्भुव मनु को कीथ की भाँति ही काल्पनिक व्यक्ति समझता था। तिथि विषयक मत भी दोषपूर्ण है।

किर्फेल का 'पुराण पञ्चलक्षण' भी महत्वपूर्ण ग्रन्थ है इसमें पुराणों के पांच विषयों का विस्तार से सङ्कलन किया गया है। किर्फेल और पार्जीटर दोनों ने ही पुराणों की भौगोलिक सामग्री (भुवनकोश) का भी अध्ययन किया। इस सम्बन्ध में उनके लेख पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित हुये।

श्रीपाददामोदर सातवलेकर ने वाल्मीकीयरामायण को आठ भागों में प्रकाशित किया, इसमें उनकी अनुसन्धानात्मक दिव्यप्रतिभा के दर्शन होते हैं। इस पर विद्वानों ने बहुत कम ध्यान दिया है, यथा उनके मतानुसार रावण की लङ्का (राक्षसद्वीप—सुन्दद्वीप) आस्ट्रेलिया थी। रामायण युद्धकाण्ड में राक्षसों के अलौकिक शिल्पविज्ञान का ज्ञान होता है, यथा रावणद्वारा राम का कृत्रिम धनुष और शिर बनवाना, मेघनाथ द्वारा कृत्रिम सीतावध। रामायण के अध्ययन से ही इन्द्रजित (मेघनाथ) की वायुसेना का ज्ञान होता है, यह सातलेकर ने सिद्ध किया है।

अनुसन्धान के लिये श्री सुकथांकर की अध्यक्षता में सम्पादित 'महाभारत' पूनासंस्करण विद्वानों में प्रथित ही है, इसमें शोध की अपरिमित सामग्री निहित हैं। इसमें पाठान्तरों एवं क्षेपकों का संकलन इतिहास-अनुसंधान के लिये अत्यन्त उपादेय है। गीताप्रेस का महाभारत और हरिवंशपुराण का संस्करण भी उपयोगी है।

इतिहासपुराणसाहित्य के अध्येताओं के अध्ययनार्थ निम्नलिखित अंग्रेजी ग्रन्थ उल्लेखनीय हैं। श्री डी० आर० पाटिल का 'कल्चरल हिस्ट्री फ्रोम वायु पुराण', आर० आर० दीक्षितार कृत 'सम एस्पेक्टस् ऑफ वायुपुराण', हापकिन्स कृत 'पुराणिक रिकर्ड्स आन हिन्दू रिट्स एण्ड कस्टम्स' डा० काशीप्रसाद जायसवाल कृत अन्धकारयुगीन भारत (अंग्रेजी में 'हिस्ट्री आफ इण्डिया), डा० काणेकृत धर्मशास्त्र का इतिहास (हिन्दी व अंग्रेजी), सीतानाथ प्रधान कृत क्रोनालोजी आफ एंशेण्ट इण्डिया, पी० के० गोडेकृत 'स्टडीज इन महा-

भारत', हापकिन्सकृत 'एपिक माइथोलोजी, पुसालकर कृत 'स्टडीज इन एपिक एण्ड पुराणाज् आफ इण्डिया', जगन्नाथरावकृत 'दी एज आफ महाभारत वार' सी० वी० चिन्तामणि वैद्य कृत 'दी रिडल आफ रामायण।

कुछ विशेष हिन्दी ग्रन्थ तथा शोधप्रवन्ध भी ज्ञातव्य हैं—यथा—कामिल वुल्केकृत—'रामकथा का उद्भव और विकास, डा० शांतिकुमार नानूराम व्यास कृत 'रामायणकालीन संस्कृति' महाभारत की नामानुक्रमाणिका' (गीता-प्रेस), माधवाचार्यशास्त्री कृत 'पुराणदिग्दर्शन', मधुसूदन ओझाकृत 'अत्रिख्याति', अखण्डानन्द सरस्वती कृत 'भागवतरहस्य', ज्वालाप्रसाद मिश्र कृत 'अष्टादशपुराणदर्पण', वलदेव उपाध्यायकृत 'पुराणविमर्श' ग्रन्थ पुराण अध्येताओं के लिये पर्याप्त उपादेय है क्योंकि इसमें पुराण के प्रायः प्रत्येक शीर्षक के विषय में सामग्री सङ्कलित की है।

इतिहासपुराण के सम्बन्ध में भारतीय दृष्टिकोण से लिखने वाले श्रीरामशंकर भट्टाचार्य के ये ग्रन्थ अवश्य पठनीय हैं—

1 अग्निपुराणविषयानुक्रमणी 2 गरुडपुराण की भूमिका। 3 इतिहास पुराण का अनुशीलन और 4 पुराणगत वैदिकसामग्री का अध्ययन।

प्रस्तुत ग्रन्थ की विशेषतायें—यह पुस्तक समन्वित भारतीय दृष्टिकोण से लिखी गई है और चार प्रकार के पाठकों के लिए उपयोगी है—प्रथम अनुसंधित्सु (शोधछात्र) द्वितीय उच्चकक्षाओं के छात्र; तृतीय; जिज्ञासु पाठक इससे इतिहासपुराणों का परिचय प्राप्त कर सकते हैं, चतुर्थ, विद्वद्गण के लिये इसमें पर्याप्त विचारणीय सामग्री है।

पुस्तक के अध्यायों की योजना इस प्रकार है।

प्रथम अध्याय में विस्तार से अट्ठाईस व्यासों का इतिहास लिखा गया है। अट्ठाईस व्यासों का ऐसा विवरण प्रथम वार ही प्रस्तुत किया है और अभी तक देखने में नहीं आया। अनुसंधित्सुओं के लिए यह परमोपयोगी रहेगा। इसमें प्रमुख रूप से खण्डन किया गया है कि पाराशर्य व्यास ही 'इतिहास-पुराण' के प्रवर्तक थे, वलिक यह सिद्ध किया गया है कि वे सर्वान्तिम प्रवक्ता थे। अठारह पुराणों के सम्बन्ध में यह बद्धमूल धारणा है कि ये पुराण पाराशर्य

व्यास की रचनायें है। वस्तुस्थिति यह है कि वे बहुलांशेन 28 व्यासों की रचनायें हैं, अत इस कारण उनको 'व्यासरचित' कहा जाता है। 28 व्यासों का भारतीय-इतिहास के 28 युगों से घनिष्ठ सम्बन्ध था, इस पर भी इसी अध्याय में कुछ प्रकाश डाला है।

द्वितीय अध्याय में पाराशर्य व्यास की इतिहास पुराणसम्बन्धी शिष्य परम्परा का वर्णन किया गया है। तृतीय अध्याय में रामायण का रचना-कालादि निर्णीत हैं, चतुर्थ अ० में महाभारत के रचनाकाल और महत्त्व का प्रतिपादन है। अग्रिम चार अध्यायों में अष्टादश पुराणों के विकास, नाम, संख्या विषय आदि प्रदर्शित किये हैं। यह विवेचन यद्यपि संक्षिप्त ही है तथापि आशा है कि यह चतुर्विध पाठकों के लिये उपयोगी और पर्याप्त रहेगा।

पुस्तक के दोषों के लिये पाठकों के सुझाव सहर्ष आमन्त्रित है।

डा० कुंवरलाल व्यासशिष्य

विषयसूची

संक्षिप्त सङ्केत

अथर्व=अथर्ववेद

आदि०=आदिपर्व

उद्योग०=उद्योगपर्व

कौ० ब्रा०=कौषीतकि ब्राह्मण

जै० ब्रा०=जैमिनीय ब्राह्मण

प०=पर्व

ब्र० वै०=ब्रह्मवैवर्तपुराण

मुण्डक०=मुण्डकोपनिषद्

वन०=वनपर्व

अ०=अध्याय

आप० ध० सू०=आपस्तम्बधर्मसूत्र

का०=काण्ड

छा० या छा०उ०=छादोग्योपनिषद्

तै० ब्रा०=तैत्तिरीयब्राह्मण

पु०=पुराण

ब्र० पु०=ब्रह्मपुराण

रा०=रामायण

हरि०=हरिवंशपुराण

C.H.I.=Cambridge History India

विषयप्रवेश

इतिहासपुराणों का ऐतिहासिक महत्व

नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तम् ।
देवीं सरस्वतीं व्यासं ततो जयमुदीरयेत् ॥

इतिहासपुनर्लेखन—प्राचीनयुगों में इतिहासपुराणविद्या का कितना महत्व था यह तथ्य इस प्रमाण से सुपुष्ट होता है कि छान्दोग्योपनिषद् के ऋषि ने 'इतिहासपुराण' को 'पंचमवेद' और वेदों का वेद कहा है—'इतिहास पुराणं पंचमं वेदानां वेद: ।' (छान्दोग्योपनिषद 7।1), उपनिषद् में यह कथन स्वयं देवर्षि नारद का है, जो स्वयं पुराणाचार्य एवं दीर्घजीवी ऋषि थे— युधिष्ठिर नारद की महिमा का वर्णन करते हुये सभापर्व में कहते हैं—

'इतिहासपुराणज्ञ: पुराकल्पविशेषवित् ।'

(सभापर्व 215।1

जब कि देवयुग (यह एक ऐतिहासिक युग था जिसका स्पष्टीकरण आगे किया जायेगा) में नारद ने इतिहासपुराणविद्या का अध्ययन किया था, छान्दोग्योपनिषद् और महाभारत दोनों के प्रमाण से यह तथ्य सुपुष्ट एवं प्रमाणित होता है इतिहासपुराणवाङ्मय वेदों के समान ही प्राचीन एवं प्रामाणिक है, वरन् बिना पुराणों के अनुशीलन के वेदज्ञ भी विलक्षण विद्वान् नहीं हो सकता—

"यो विद्याच्चतुरो वेदान् साङ्गोपनिषदो द्विज: ।
पुराणं चेन्न संविद्यान्न स: स्याद् विचक्षण: ॥

"जो द्विज साङ्गोपाङ्ग वेदों का ज्ञाता है, परन्तु पुराणविद्या से हीन है वह वास्तविक विद्वान् या विचक्षण बुद्धिमान् नहीं है"

परन्तु पाश्चात्य लेखकों ने उन्नीसवीं शती के प्रारम्भ में जब विशाल संस्कृतवाङ्मय का अध्ययन आरम्भ किया, तब अनेक कारणों से भारतीय

संस्कृति और सभ्यता को नीचा दिखाने के लिये, मैकाले की योजनानुसार इतिहासपुराणों पर तीव्र एवं कटु प्रहार किये। राथ, कीथ मैकडोनल, मैक्स-मूलर विन्टरनित्स आदि ने इतिहास (रामायण और महाभारत) और पुराणों को शत प्रतिशत झूठा एवं निस्सार सिद्ध करने की चेष्टा की। कैम्ब्रिज हिस्ट्री का सम्पादक रैप्सन लिखता है—'It seems impossible to bring the Puranic Genealogies into any satisfactory relation with the vedic literature.' (C. H. I. vol 1 P. 306)

कीथ ने अपने ग्रन्थ वैदिक इन्डैक्स (vedic Index) में वैदिकपदों का परिचय लिखते हुये पुराणगत इतिहास की पूर्ण उपेक्षा की, जिससे कि उसेने भयंकर भूलें की है—उदाहृणार्थ कीथ ने शतपथब्राह्मण में (12। 6 3। 3) 'तदु ह वह्लिकः प्रातिपीयः शुश्राव कौरव्यो राजा') में उल्लिखित वह्लिक को परिक्षित का वंशज लिखा—'Despite the opposition of Balhika Pratipiya whose patronymic reminds us of Pratip who was a descendat of the kuru king parikshit." अर्थात् प्रातिपीय विशेषण कुरुराज परीक्षित् के वंशज प्रतीप की स्मृति कराता है।' वह्लिक और प्रतीप जो पाण्डवों के पूर्वज थे और जो परीक्षित् पाण्डवों का वंशज था, उस परीक्षित को प्रतीत का पूर्वज बना दिया। इस प्रकार के वेदज्ञ थे श्रीमान् कीथ जी! यही हाल मैकडोनल, मैक्समूलर का है, ये लोग वेद में प्रयुक्त 'शिश्नदेव' शब्द को लिंग पूजक (शैवों) का विशेषण मानते हैं, जबकि यास्क और सायण ने 'शिश्नदेव' शब्द का अर्थ 'अब्रह्मचारी या कामुक (जैसे रावण राक्षस कामुक था) माना है।

उपर्युक्त उदाहरणों को यह सिद्ध करने के लिये प्रदर्शित किया गया है कि पाश्चात्य लेखकों ने पुराण की उपेक्षा करके वेदार्थ की कैसी छीछालेदर की और हमारे देश के इतिहास को किस प्रकार भ्रष्ट किया।

भारत सरकार द्वारा पाश्चात्य लेखकों के भ्रष्टग्रन्थों पर प्रतिबन्ध लगा-कर हमारे विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रमों में से की कीथ मैक्समूलर, विन्टर-नीत्स इत्यादि ग्रन्थों का बहिष्कार करना चाहिये, तभी भारतीय विद्यार्थियों को अपने देश के सत्य और शुद्धइतिहास का ज्ञान हो सकेगा।

कीथ जैसे वेदज्ञों के सम्बन्ध में महाभारत में परमर्षि व्यास ने लिखा है—

'इतिहासपुराणाभ्यां वेदं समुपबृंहयेत् ।
बिभेत्यल्पश्रुताद् वेदो मामयं प्रहरिष्यति ।।"

"इतिहासपुराणों के द्वारा वेदार्थ का विस्तार करना चाहिए, अल्पश्रुत (अज्ञानी) से वेद डरता है कि यह मुझ पर प्रहार करेगा ।"

पाश्चात्य वेदज्ञों पर व्यास का उक्त कथन शतप्रतिशत चरितार्थ होता है ।

अतः भारत के राजनीतिक, सांस्कृतिक और साहित्यिक इतिहास के पुनर्लेखन की महती आवश्यकता है । भारतीय विद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में भारतीय इतिहास और संस्कृत के जो ग्रन्थ अँग्रेजी राज्य-काल में पढ़ाये जा रहे थे, वे ही ग्रन्थ आज भी ज्यों की त्यों पढ़ाये जा रहे हैं, हमारे विश्वविद्यालय के प्राध्यापकों के दृष्टिकोंण में वे ही अँग्रेजी काल के विचार भरे हुये हैं क्योंकि वे उन्हीं भ्रष्ट पाश्चात्यग्रन्थों को पढ़ते हैं और उन्हीं के आधार पर पढ़ाते हैं ।

यह ग्रन्थ विश्वविद्यालयों की उच्च कक्षाओं के विद्यार्थियों के लिए लिखा जा रहा है, वैसे भारतीय संस्कृति के प्रेमी प्रत्येक व्यक्ति के लिए यह पुस्तक रोचक एवं ज्ञानवर्द्धक होगी । इस ग्रन्थ से पाठकों की इतिहास पुराण के सम्बन्ध में अनेक भ्रान्तियों का निराकरण होगा, ऐसा लेखक का विश्वास है ।

हाँ तो मैं भारतीय इतिहास के पुनर्लेखन की अथवा उसके भारतीयकरण की आवश्यकता की चर्चा कर रहा था । इतिहास का भारतीयकरण अथवा शिक्षा का भारतीयकरण कोई राजनीतिक नारा नहीं वरन् सत्य के उद्घाटन के लिये भारत के इतिहास को राष्ट्रीय या भारतीय दृष्टिकोण से लिखना अत्यन्त आवश्यक ही नहीं अनिवार्य है । अँग्रेजों तथा अन्य पाश्चात्य लेखकों ने भारतीय इतिहास में कितनी भयंकर भूलें की है, इसको अनेक विज्ञ पाठक गण जानते होंगे लेकिन सामान्यजन इन भूलों से अनभिज्ञ हैं, जिससे हमारे देश का कितना अहित हो रहा है । झूठे इतिहास को पढ़ने का फल है कि

तमिलवासी (मद्रासी) अगस्त्य ऋषि को अपना पूर्वज नहीं मानते। पृथक भाषा पृथक ध्वज, पृथक राज्य, की मांग भारत के अनेक प्रान्तों में उठ रही है। सिक्ख, जैन. ईसाई या मुस्लिम सभी स्वायम्भुव मनु की सन्तान हैं। वेद के ऋषि का "नमस्" (नमस्कार) और कुरान की "नमाज" एक ही वस्तु है। वेद का 'स्वधा' कुरान और अवेस्ता में विकृत होकर 'खुदा' बन गया। सत्य इतिहास का ज्ञान होने पर भारतीयों की भेद दृष्टि स्वतः ही समाप्त हो जायेगा। इसलिए मैं कहता हूं कि सत्य के उद्घाटन के लिए इतिहास पुनर्लेखन अनिवार्य है। इन पंक्तियों के लेखक ने भारत के इतिहास को पुनः सत्य रूप में लिखकर प्रकाशित करने की प्रतिज्ञा की है। यह पुनर्लेखन योजना एक विस्तृत योजना है, जिसका स्पष्टीकरण यथासमय अन्यत्र किया जायेगा।

पुराण भारतीय इतिहास के प्रधान मूलस्रोत हैं। पतञ्जलिमुनि ने लिखा है कि 'प्रधाने कृतो यत्नः फलवान् भवति।' 'प्रधानविषय में किया गया प्रयत्न फलवान् (सफल) होता है।' अतः भारतीय इतिहास के सत्य स्वरूप के ज्ञान के लिए पुराण (तथा रामायण महाभारत) का अध्ययन आवश्यक है। यह पुराणवाङ्मय कितना विशाल है, कितना प्राचीन है, इसके निर्माण में किन-किन ऋषि मुनियों का योग है। उत्तरकाल में पुराणविद्या का क्यों ह्रास हुआ, क्या-क्या गड़बड़ी हुई इन समस्त तथ्यों का रहस्यभेदन इस पुस्तक में यथासम्भव रूप से किया जायेगा।

पुराण और माइथोलोजी का भेद—पाश्चात्यलेखकों के मत में प्राचीन भारतीयवाङ्मय (वेद, इतिहास, पुराणादि में उल्लखित घटनायें काल्पनिक या मिथिकल (Mythical) थीं। पाश्चात्य लेखकों ने यह भ्रम फैलाया है कि पुराण और माइथालोजी का एक ही अर्थ है—ये लेखक वैदिक ग्रन्थों में उल्लिखित वैवस्वतमनु, पुरूरवा नहुष, ययाति, व्यास, राम, कृष्णादि ऐतिहासिक पुरुषों को मिथिकल या काल्पनिक यानी कथाकहानियों के पुरुष मानते हैं। 'इतिहास' पद का अर्थ विन्टरनीत्स इत्यादि पाश्चात्य लेखक 'कहानी' (Legend) करते हैं। लेकिन हम दृढ़ शब्दों में प्रतिपादित करते हैं कि वैदिक ग्रन्थों में 'इतिहास' शब्द उसी प्रकार इतिहास (History) के अर्थ में प्रयुक्त होता था, जिस प्रकार आजकल होता है। परन्तु विन्टरनित्स, कीथ मक्समूलर के

ग्रन्थ इतिहास नहीं हैं, वास्तव में वे कहानियाँ या गप्प (Legends) है। मैक्समूलर का 'प्राचीनसंस्कृतसाहित्य का इतिहास' (History of ancient Sansksit Literature)' वेबर का 'संस्कृतसाहित्य का इतिहास; मैकडोनल का संस्कृतसाहित्य का इतिहास; विन्टरनीत्स का 'भारतीयसाहित्य का इतिहास; (History of Indian Literature) वास्तव में legend या Mythology के ग्रन्थ हैं। उनमें लिखी गई घटनायें, तिथियों या तथ्य अधिकांशतः सत्य नही हैं। उदाहणार्थ ऋग्वेद की तिथि अथवा पाराशर्यव्यास के सम्बन्ध में पाश्चात्यलेखकों का प्रलाप इतिहास नहीं कहा जा सकता। इस सम्बन्ध में जिज्ञासु पाठकों को पण्डित भगवद्दत्त कृत भारतवर्ष का बृहद्इतिहास' (प्रथम भाग) देखना चाहिये इस ग्रन्थ में पाश्चात्य लेखकों के षड्यन्त्रों और असत्यमतों का भण्डा-फोड़ किया गया है।

वास्तव में ऋषि मुनि सत्यवक्ता थे, चरकाचार्य ने लिखा है—

रजस्तमोभ्यां निर्मुक्तास्तपोज्ञानवलेन ये।
येषां त्रिकालममलं ज्ञानमव्याहतं सदा।
आप्ताः शिष्टा विवुद्धास्ते तेषां ज्ञानमसंशयम्।
सत्यं वक्ष्यन्ति ते कस्मात् असत्यं नीरजस्तमाः॥

(चरकसंहिता)

"तप और ज्ञान के बल से जो ऋषिगण रजोगुण और तमोगुण से हीन थे, जिनका ज्ञान तीनों कालों में निर्मल और अप्रतिहत था, वे आप्त, शिष्ट विद्वान् कहे जाते थे, उनका ज्ञान संशय रहित था, वे नीरजस्तम (निष्पाप) मुनि सत्य ही बोलेंगे ?" वशिष्ठ, व्यास, वाल्मीकि आदि ऋषियों ने यह प्रतिज्ञा नहीं की थी कि वे अपने ग्रन्थों में सदा झूठ ही बोलेंगे, जबकि वे सदा यह उपदेश देते थे—

'सत्यं वद'
'धर्मं चर'

फिर राम का इतिहास या कृष्ण का इतिहास वाल्मीकि या व्यास ने झूठा क्यों लिखा यह बात समझ में नहीं आने वाली या बुद्धिगम्य नहीं है।

अतः या तो ऋषि झूठे हैं या पाश्चात्यलेखक झूठे हैं। हमारा निश्चित मत है कि रामायणकालीन या महाभारतकालीन इतिहास के सम्वन्ध में कीथ या मैक्समूलर कोई प्रमाण नहीं हो सकते। यदि प्रमाण हो सकते हैं तो वाल्मीकि, व्यास, कालिदास या हरिषेण ही अपने समकालीन इतिहास के सम्वन्ध में प्रमाण हैं, अतः जो भारतीय पाठक कीथ को प्रमाण मानकर महाभारत की घटना को असत्य मानता है वह मूर्ख है, लेकिन कोई सुनने वाला नहीं—

'उर्ध्ववाहुः विरोम्येप न कश्चिच्छृणोति मे'

व्यास के समान अपना हाथ उठाकर मैं पुकार रहा हूं लेकिन मेरी कोई बात सुनने वाला नहीं।

अव यह ज्ञातव्य है कि इतिहासपुराण और माइथोलोजी में क्या भेद है।

'इतिहास' पद में तीन शब्द है इति + ह + आस। दुर्गाचार्य ने निरुक्त टीका में लिखा हैं "इति हैवमासीदिति यः कथ्यते स इतिहासः।" अर्थात् 'इस प्रकार जो (घटना) थी, इस प्रकार कहा जाता है, वह 'इतिहास' है। उदाहरणार्थ निरुक्त में यास्क लिखते हैं—'तत्रेतिहासमाचक्षते-देवापिश्चार्ष्टिषेणः शन्तनुश्च कौरव्यौ भ्रातरौ वभूवतुः।

"यहां इतिहास कहा जाता है कि आर्ष्टिषेण और शन्तनु कौरव्य भ्राता थे।"

शौनक ने वृहद्देवता में लिखा—

'इतिहासः पुरावृत्तम् ऋषिभिः परिकीर्त्यते।'

'प्राचीन वृतान्त को इतिहास कहते हैं, ऐसा ऋषियों ने कहा है।

पुराणों में प्रायः प्राचीन घटनाओं का वर्णन इस प्रकार प्रारम्भ किया जाता है—

'अत्राप्युदाहरन्तीममितिहासं पुरातनम्'

(मत्स्यपुराण 72 । 6)

महाभारत का प्राचीन नाम जय इतिहास था—
'जयो नामेतिहासोऽयं श्रोतव्यो विजिगीषुणा"

(उद्योगपर्व 136।18)

'पुराण' का अर्थ था पुरातन इतिहास—
'यस्मात् पुरा ह्यभूच्चैतद् पुराणं तेन तत् स्मृतम्'

(ब्रह्माण्ड पु० 1।1।1)

'प्राचीनकाल में यह हुआ था, इस प्रकार जो घटना है उसको पुराण कहते हैं।'

'पुरा परम्परां वष्टि पुराणां तेन तत्स्मृतम् ।'

(पद्म पु० 5।2।56)

'जो पुरातन परम्परा को बतलाता है वह पुराण है।'

वास्तव में इतिहास और पुराण में कोई भेद नहीं था। रामायण और महाभारत को इन्हीं ग्रन्थों में पुराण भी कहा है और इतिहास भी बतलाया है। अतः पुराण वास्तविक इतिहास ही थे।

परन्तु पाश्चात्य माइथोलोजी (Mythology) न तो इतिहास है और न पुराण।

अर्थात् काल्पनिक घटना, जिसका कोई आधार नहीं हो वह माइथोलोजी या माइथ है।

लेकिन यूनानी ग्रंथकार देवताओं की कहानियों या धार्मिक वृत्तों को माइथ कहते थे। यूनानियों की माइथोलोजी स्वयं मिस्र से उधार ली थी। यूनानी इतिहासकार हेरोडोटस ने लिखा है कि यूनानियों ने सभी देवताओं के नाम मिस्र देश से लिये। उदाहरणार्थ यूनानी यह नहीं बता सकते थे कि उनका प्रसिद्ध देव (Hercules) हरकुलीश वास्तव में कौन था। अतः यूनानियों की अस्पष्ट माइथोलोजी अंग्रेजों के लिए पूर्णतः अज्ञेय थी। यूनानियों और

मिस्रियों की माइथोलोजी में वास्तव में प्राचीन इतिहास की सत्य रेखा विद्यमान है, यह इतिहास यूनानियों को स्पष्ट नहीं था, फिर अंग्रेज उसको किस प्रकार समझ सकते थे। यह तथ्य वास्तव में भारतीयग्रन्थों से ही स्पष्ट होता है कि यूनानियों का हरकुलीज देव भारतीय विष्णु था, जिसके बारह भाई (आदित्य) थे—

'Seventeen thousand years (from the death of Hercules) from the reign of Amasis the twelve gods were; they (Egy-Ptians) affirm......... (हेरोरोटस पृ० 133)

अर्थात् "(मिस्री नरेश) अमेसिस के राज्यकाल के सत्रहहजारवर्ष पूर्व द्वादशदेव (आदित्य) थे।"

'The Greeks regard Hercules, Bacchus and Pan as the youngest of the Gods (वही पृष्ट 189) ग्रीकों के अनुसार (और पुराणों के स्पष्टीकरण से)—'हरकुलीज (विष्णु), वृक (दानव) और बाण (दैत्य) सबसे छोटे या उत्तरकालिक थे।'

पुराणों से ही यूनानी देवों के इतिहास का सीधा ज्ञान होता है। देवों की तीन श्रेणियाँ पुराणों में प्रसिद्ध है—पूर्वदेव दैत्य, इनमें पान (बाण) अन्तिम सम्राट था दूसरी श्रेणी दानवों की थी, विप्रचित्ति इनका प्रथम सम्राट था और वृक (शालावृक असुर—उत्तरकालीन शाल्व) अन्तिम राजा था। और विष्णु—

"— — — द्वादशो विष्णुरुच्यते।
जघन्यजस्तु सर्वेषाम् आदित्यानां गुणाधिकः।"

महाभारत। आदिपर्व

द्वादश आदित्यों में विष्णु सबसे छोटे, लेकिन सर्वाधिक गुणवान् थे।'

इन्द्र, विष्णु बाणासुर, विप्रचित्ति इत्यादि सभी ऐतिहासिक पुरुष थे, यह पुराणों से ही स्पष्ट होता है अतः पुरांण भारतीय इतिहास के ही नहीं बल्कि आदिम विश्व इतिहास के भी मूलस्रोत हैं।

अतः प्राचीनकाल में माइथोलोजी काल्पनिक कहानियों को नहीं वास्तविक

सत्यवृत्तों को कहते थे। यूनानियी और अंग्रेजों को इन इतिहासों का ज्ञान नहीं था।

अतः उनके लिये विष्णु, वाणादि कल्पनायें थीं। यह सब इसलिये लिखा है कि प्राचीनपुराणों का कितना महत्व है और माइथोलोजी वास्तव में क्या थी।

इतिहास में युगविभाग—पाश्चात्य लेखकों ने भारतीय राजनीतिक इतिहास का युगविभाग साहित्यिकग्रन्थों के आधार पर किया है—जैसे वैदिक काल, (मन्त्रकाल, ब्राह्मणकाल, उपनिषत्काल), उत्तरवैदिककाल, सूत्र-युग, महाकाव्ययुग इत्यादि। पाश्चात्यलेखकों ने उपर्युक्त ग्रन्थों का रचना-काल अपने-अपने मत में पृथक माना है, अतः उनकी दृष्टि में इन ग्रन्थों का कोई निश्चित समय नहीं है। यह केवल भारतवर्ष के इतिहास में ही अनिश्चितता और असङ्गति चल रही है। किसी देश में राजनीतिक युगों का नाम साहित्यिक ग्रन्थों के आधार पर नहीं हैं। पाश्चात्य लेखक बुद्ध और बिम्बसार से पूर्व किसी को ऐतिहासिक नहीं मानते। मानो बुद्ध और बिम्बसार एक-दम आसमान से टपक पड़े। यह सब पाश्चात्य षड्यन्त्र था, जिसकी कहानी अन्यत्र लिखी जायेगी।

किसी भी देश का इतिहास उसी देश के स्रोतों के आधार ही सही रूप में लिखा जाता है, भारत को इसमें अपवाद बनाया गया। विदेशीग्रन्थों के आधार पर भारत का काल्पनिक इतिहास गढ़ा गया।

यह ध्यान रखना चाहिये कि पाश्चात्य लेखकों को जिस खोज पर सबसे अधिक गर्व है कि उन्होंने सिकन्दर और चन्द्रगुप्तमौर्य की तिथि और सम-कालीनता सिद्ध कर दी है, वह सब निराधार कपोलकल्पना है। इस कपोल कल्पना का विस्तृत खण्डन तो राजनीतिक इतिहास ग्रन्थ में किया जायेगा, परन्तु संक्षेप में यह जान लेना चाहिये कि मैगस्थनीज का पालीब्रोथा जनपद और नगर पंजाब में प्राचीन परिभद्र जनपद और नगर था, जिसका राजा कोई चन्द्रकेतु था, जो आन्ध्रसातवाहन राजा हाल के समकालीन था। यह तथ्य कि सिकन्दर का पंजाब पर आक्रमण और पराजय आन्ध्रकाल में हुई इसका उल्लेख प्राचीन मुसलमान इतिहासकारों के आधार पर स्वयं पाश्चात्य लेखक इलियट ने भारतवर्ष के इतिहास में किया है।

कलियुग की कुछ महत्वपूर्ण ऐतिहासिकतिथियों के सम्वन्ध थोड़े से प्रमाणों का संकेत करेंगे। पाश्चात्य लेखकों ने विना किसी प्रमाण के हर्षवर्धन से पूर्व के भारतीयइतिहास की तिथियां मनमाने ढ़ंग से मान रखी हैं।

अशोक के शिलालेखों में पांच यूनानी राजाओं का कोई उल्लेख नहीं है, वरन् पांच यवन म्लेच्छराज्यों या देशों का उल्लेख है, वे पाँच देश थे—अन्तियोक, मग, तुरमय, मग और अन्तकिन्नर। हरिवंशपुराण में इनका इस प्रकार उल्लेख है—

यवनाः पारदाश्चैव काम्वोजाः पह्लवाः शकाः।
एते ह्यपि गणाः पंचः हैहयार्थे पराक्रमन्॥

हरि० 1।16।14)

यवन वाह्लिक (वैक्ट्रिया) निवासी म्लेच्छ थे, जो त्रेतायुग में सगर के काल से वहीं रहते थे। मगदेश में क्षत्रियों को शक कहते थे। पारद कम्वोज और पह्लव क्रमशः अन्तियोक, तुरमय और अन्तकिन्नर थे। अतः अंग्रेजों ने भारतीयइतिहास में किस प्रकार कल्पनायें की, यह तथ्य इसका प्रत्यक्षप्रमाण है।

डा० काशीप्रसादजायसवाल ने युगपुराण में एकपाठ कल्पित किया 'घर्ममीत' इसको यूनानी डेमेट्रियस वनाकर के उसे शुङ्गकाल में रख दिया। वास्तव में युगपुराण का शुद्धपाठ जो डी० आर० मनकड ने प्रकाशित किया है, इस प्रकार है—

"धर्मभीताः वृद्धा जन मोक्ष्यन्ति निर्भयाः।"

(युगपुराण पंक्ति 111)

,धर्म से भयभीत वृद्धपुरुष लोगों को भय से मुक्त करेंगे।' अतः किस प्रकार प्राचीन शिलालेखों और ग्रन्थों के कल्पितपाठ गढ़कर ऐसा भ्रष्ट और झूठा भारतीय इतिहास तैयार किया गया, जिसका अन्य कोई उदाहरण विश्व में नहीं है। यह सब पाश्चात्यों की साम्राज्यवादी कूटनीति और षड्यन्त्र का परिणाम था।

पुराणों के अनुसार शन्तनु के पिता प्रतीप के राज्य काल में आन्ध्र सातवाहनयुग के पूर्व तक एक सप्तर्षियुग यानी 2700 वर्ष हुये थे—

सप्तर्षयस्तत् प्राहुः प्रतीपे राज्ञि वै शतम् ।
सप्तविंशैः शतैर्भाव्याऽन्ध्राणां तेऽन्वयाः पुनः ।

(वायु० पु० 99।418)

'प्रतीप के राज्यकाल से आन्ध्रों के वंश के आरम्भ के पूर्व तक 2700 वर्ष हुये । आन्ध्र सातवाहन वंश प्रारम्भ 641 वि० पू० हुआ । उनका राज्यकाल 460 वर्षों का था । अतः आन्ध्रों का अन्त 186 वि० पू० हुआ ।

गुप्तराज्य का आरम्भकाल—पुराणों के अनुसार आन्ध्र सातवाहन के पाश्चात् भारतवर्ष में निम्न लिखित राजवंशों ने राज्य किया—

(1)	सात गुप्त राजा (श्रीपार्वतीय)	=	300 वर्ष
(2)	दश आभीर राजा	=	67 वर्ष
(3)	सात गर्दभिल	=	72 वर्ष
(4)	18 शक	=	380 वर्ष
(5)	8 यवन राजा	=	87 वर्ष
(6)	14 तुरुष्क	=	500 वर्ष
(7)	13 मुरुण्ड	=	200 वर्ष
(8)	11 हूण	=	300 वर्ष

पुराणों के अनुसार 8 यूनानी राजा सातवाहनों के पश्चात् हुये ।

यहां पर गुप्तों का विशेष रूप से कालनिर्णय करेंगे । वायुपुराण में लिखा है—

अनुगङ्गं प्रयागं च साकेतं मगधांस्तथा ।
एतान् जनपदान् सर्वान् भोक्ष्यन्ते गुप्तवंशजाः ।

(99 । 383)

अनेक लेखकों के अनुसार उक्त श्लोक में गुप्तों के प्रारम्भिक राज्यस्थिति का उल्लेख है । परन्तु सूक्ष्मपर्यवेक्षण से सिद्ध होता है कि यह वर्णन गुप्त साम्राज्य के अन्तिमदिनों का है जब कि वह खण्ड-खण्ड हो चुका था ।

आधुनिक लेखक गुप्तों का आरम्भ फ्लीट के मतानुसार 375 ई० सन् से मानते हैं। यह सर्वथा भ्रम है। अलबेरूनी ने लिखा है कि गुप्तों के विनाश पर एक गुप्त संवत् चला। पाश्चात्यलेखक गुप्तों के अन्तकाल को उनका आरम्भकाल मानते है। अतः अलबेरूनी तथा पुराणों के आधार पर गुप्त राज्य का प्रारम्भ 75 ईस्वी सन् से हुआ, इसकी पुष्टि एक अन्य प्रकार से होती है।

पूर्वोक्त अलबेरूनी नें लिखा है कि शकों का अन्त करने वाला कोई चन्द्र-गुप्त (विक्रमादित्य) था यह घटना 135 वि० सं० की है। इसकी पुष्टि भारतीय साहित्य से होती है—प्रसिद्ध ज्योतिषी भट्टोत्पल ने लिखा है— 'शका नाम म्लेच्छजातयो राजानस्ते यस्मिन् काले विक्रमादित्यदेवेन व्यापादिताः स कालो लोके शक इति प्रसिद्धः" (बृहत्संहिता टीका 8।20)। प्राचीन शिला लेखों पर भी लिखा मिलता है='शकनृपकालातीतसंवत्सरः' उसका भी यहीं तात्पर्य है कि शकराज्य के अन्त से शकसंम्वत् प्रचलित हुआ। अतः शक राज्य का अन्त 135 विक्रम संम्वत् में हुआ और आरम्भ 245 वि० पू० से, शकों का राज्यकाल पुराणों में 380 वर्ष लिखा है।

अन्य साहित्यिकप्रमाणों से भी सुपुष्ट होता है कि शकराज्य का अन्त करने वाला—गुप्तवंशीय चन्द्रगुप्त विक्रम द्वितीय था।

अरिपुरे च परकलत्रकामुकं कामिनीवेशगुप्तश्चन्द्रगुप्तः शकपतिमशा-तयत्। (हर्षचरित षष्ठ उच्छ्वास)

प्राचीनशिलालेख, भारतीयज्योतिषी, अलबेरूनी सभी एकमत से चन्द्र-गुप्त को शकों का विनाशक प्रमाणित करते हैं। अतः भारत में शकों का अन्त करके शकसंवत् का प्रवर्तक सिवा चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य द्वितीय के अतिरिक्त और कोई नहीं हो सकता। जैनप्राकृतग्रन्थों में भी शककाल और विक्रम-काल को एक ही माना है।

उपर्युक्त प्रमाणों से चन्द्रगुप्त का राज्याभिषेक 135 वि. संम्वत् में सिद्ध होता है। और हमने पुराणों के आधार पर भारतीय इतिहास की ज्यो तिथियाँ निर्णित की हैं, स्पष्ट हैं। कल्पनाओं की भित्ति पर बालू के महल की जो गति होती है, वही दशा पाश्चात्यकल्पनाओं की पुराणों की सहायता से होगी।

प्रथम अध्याय

इतिहासपुराणरचयिता

व्यासपरम्परा

वैदिक ग्रन्थों में वहुधा 'इतिहासपुराणवेद अथवा 'पंचमवेद' का उल्लेख मिलता है, इस सम्वन्ध में मूल उद्धरण आगे लिखे जायेंगे। ये उद्धरण पाश्चात्य कल्पनाओं का खण्डन करते हैं कि वैदिकयुग पौराणिकयुग से पूर्व था। वास्तव में इस प्रकार का पौर्वापर्य साहित्य के आधार पर सिद्ध भी नहीं होता। पक्षपाती पाश्चात्य लेखक विन्टरनीत्स वैदिक ग्रन्थों में 'इतिहासपुराणों के उल्लेख को देखकर विचलित हो गया, वह लिखता है—

"इस वात का कोई प्रमाण नहीं है कि "इतिहासपुराण" ग्रन्थ के रूप में वैदिक काल में थे।" "वहुधा उल्लिखित 'इतिहासपुराण' से वास्तविक ग्रन्थों से तात्पर्य नहीं है, कम से कम वर्तमान उपलब्ध इतिहासपुराणों से तो कतई तात्पर्य नहीं है।"

विन्टरनीत्स का भ्रम स्पष्ट है, रामायण जैसे अनेकों इतिहासग्रन्थ ब्राह्मण ग्रन्थों से पूर्व विद्यमान थे। वर्तमान पुराणों में से कम से कम मार्कण्डेयपुराण वायुपुराण, भविष्यत्पुराण, सौपर्णपुराण, और विष्णुपुराण जैसे ग्रन्थ भी शतपथब्राह्मणकाल से पूर्व विद्यमान थे। वायुपुराण और मार्कण्डेयपुराण तो किसी न किसी रूप में कृतयुग में अर्थात् अब से 16000 (सोलह सहस्र पूर्व) लिखे गये थे वे क्यों न याज्ञवल्क्य या व्यास के समय विद्यमान होते। और तो और भविष्यत्पुराण किसी न किसी रूप में त्रेतायुग में विद्यमान था।

वाल्मीकि मुनि ने लिखा है—

पुराणे हि सुमहत्कार्यं भविष्यं हि मयाश्रुतम्।
दृष्टं मे तपसा चैव श्रुत्वा च विदितं मम॥

(किष्किन्धा का० 4।62।3)

उक्त प्राचीन भविष्यपुराण में जिसकी रचना वाल्मीकि से भी पूर्व हुई थी, रामचरित का भविष्यकथन के रूप में वर्णन था, जिस प्रकार वर्तमान पुराणों में कल्कि अवतार का भविष्यकालिक वर्णन उपलब्ध होता है।

अतः रामायण जैसे अनेक इतिहास तथा वायुपुराण, भविष्यपुराण नाम के पुराण किसी न किसी रूप में ब्राह्मणग्रन्थों से पूर्व अवश्य ही पुस्तक रूप में थे, क्यों कि ब्राह्मणग्रन्थों में अनेक गाथा में मिलती हैं, जो लौकिकसंस्कृत मे है ऐतरेयब्राह्मण में दौष्यन्तिभरत के सम्बन्ध में गाथायें मिलती हैं, जो किसी प्राचीन पुराण से उद्धृत की गई हैं। अतः ब्राह्मणग्रन्थों से पूर्व अनेक इतिहासपुराण थे, उनमें में कुछ वर्तमान काल में भी उपलब्ध हैं।

वैदिकग्रन्थों में इतिहासपुराणविद्या का सम्बन्ध अथर्वांगिरस वंश के ऋषियों से बताया गया है—28 व्यासों में से अनेक ऋषि भार्गव (आथर्वण) अथवा आङ्गिरस थे। सारस्वत, शरद्वान्, भरद्वाज, वाजश्रवा, वशिष्ठ, शक्ति, पराशर, जतूकर्ण, वाल्मीकि, द्वैपायन ये 10 व्यास अवश्य ही अथर्वाङ्गिरस वंश के थे। इनका विस्तृत इतिहास आगे इसी अध्याय में लिखा जायेगा। इनके अतिरिक्त प्राचीनतम दीर्घजीवी मार्कण्डेयऋषि भी भृगुवंशी थे, जिन्होंने प्राचीन मूल मार्कण्डेयपुराण की रचना की थी। व्यास के शिष्य सूत रोमहर्षण ने मार्कण्डेयपुराण का नवीन संस्करण बनाया। महाभारत में भी मार्कण्डेय की पुराणाचार्यता स्पष्ट है। देवर्षि नारद पुराणों के विशेषज्ञ थे। भीष्म पितामह का इतिहासपुराणज्ञान भी महान् था यह तथ्य शान्तिपर्व से सिद्ध है। अब वैदिकग्रन्थों में 'इतिहासपुराण वेद' का उल्लेख द्रष्टव्य है।

अथर्ववेद में पुराण और पुराणविद् का उल्लेख इस प्रकार मिलता है—

ऋचः सामानि छन्दांसि पुराणं यजुषा सह।
उच्छिष्टाज्जज्ञिरे सर्वे दिवि देवा दिविश्रिताः॥

(अथर्व० 11।7।22)

येन आसीत् भूमिः पूर्वा यमद्धा तया इद् विदुः।
यो वै तां विद्यान्नामथा स मन्ये तं पुराणविद्॥

(अथर्व ११।८।७)

अथर्ववेद का सम्बन्ध ही अथर्वाङ्गिरस ऋषियों से है वायुपुराण में

ब्रह्मवेदस्तथा घोरैः कृत्याविधिभिरन्वितः ।
प्रत्यङ्गिरसयोगैश्च द्विशरीरशिरोऽभवत्।।

या तो भृगुका ही दूसरा नाम अथर्वा था, अथवा अथर्वा भृगु के पुत्र थे जैसा कि मत्स्यपुराण में उल्लेख हैं—

भृगोः प्राजायताथर्वा
ह्यङ्गिराऽथर्वणः स्मृतः।

मुण्डकोपनिषद् में अथर्वा को स्वयम्भू ब्रह्मा का पुत्र बतलाया है—

ब्रह्मा देवानां प्रथमः सम्बभूव विश्वस्य कर्त्ता भुवनस्यगोप्ता
स ब्रह्मविद्यां सर्वविद्याप्रतिष्ठामथर्वाय ज्येष्ठपुत्राय प्राह ।

(1।1)

ऐतिहासिक दृष्टि से भृगु वरुणप्रजापति के पुत्र थे। वरुण की प्रजा गन्धर्व और अप्सरायें थी। वरुण को यादसांपति भी कहते हैं। वरुण और भार्गवों का विशेष सम्बन्ध असुरों से था। वरुण के वंश में त्वष्टा, वरूत्री, षण्ड मर्क, शालावृक त्रिशिरा, वृत्रासुर, मय इत्यादि असुरदानव उत्पन्न हुये। वरुण के पौत्र शुक्राचार्य (उशना काव्य) का विशेष सम्बन्ध असुरों से था। उत्तरकाल में हैहवंशीय क्षत्रियों से भार्गवों का सम्बन्ध रहा। ईरान और अरब जाति वरुण के वंशज हैं। ईरान में सूषा नगरी वरुण की राजधानी थी। ईरानी वरुण की पूजा करते थे। और अवेस्ता में असुरमज्द के नाम से तथा अरबों मे 'ताज' 'याद' का अपभ्रंश नाम से वरुण की स्मृति विद्यमान है। अवेस्ता वास्तव में अथर्ववेद का (छन्दोवेद-जेन्दावेस्ता) एक विकृतरूप है।

अथर्ववेद का इतिहासपुराणवेद के साथ विशेष सम्बन्ध था। महाभारत से भी भार्गवों का विशेष सम्बन्ध सिद्ध हैं। महाभारत के प्रधानश्रोता शौनक मुनि भार्गववंशीय थे। च्यवन शुक्राचार्य ओर वाल्मीकि जिनका इतिहास विद्या से विशष सम्बन्ध था भार्गव ही थे। वशिष्ठ भी वरुण के वंशज अथवा आथवर्ण ऋषि थे। उनके कुल में ही शक्ति, पराशर और द्वैपायन हुये। इस प्रकार भार्गवों का अथर्ववेद और इतिहासपुराणों के निर्माण में प्रधान योग था।

अङ्गिरावंशीय दीर्घतमा, भरद्वाज, बृहस्पति - ये तीनों व्यास थे।

प्रत्येक व्यास ने कम से कम एक पुराण और एक इतिहास ग्रन्थ लिखा और कृष्णद्वैपायन के उदाहरण से सिद्ध है। इन दो व्यासों के अतिरिक्त अन्य व्यासों की रचनायें वर्तमान में अनुपलब्ध हैं।

ब्राह्मणग्रन्थों तथा अन्य वैदिक ग्रन्थों में पुराणों का उल्लेख द्रष्टव्य है। शतपथब्राह्मण में इतिहासपुराणों को देवताओं की मधु आहुतियाँ कहा गया है—

"मध्वाहुतयो ह वा एता देवानाम्, यदनुशासनानि।
विद्या वाक्योवाक्यामितिहासपुराणं गाथा नाराशंस्यः।"

(11।5 7।8)

गोपथब्राह्मण में पांच प्रकार के वेदों में इतिहासपुराण की गणना है—
,पंच वेदान् निरमिमत सर्पवेदं पिशाचवेदमसुरवेदमितिहासवेदं पुराणवेदम्।"

(1।10)

बृहदारण्यक में—उस महान भूत (परमेश्वर) के श्वासनिश्वास—वेद पुराण हैं—'अस्य महतो भूतस्य निःश्वसितमेतदृग्वदोयजुर्वेदः सामवेदोऽ-र्वाङ्गिरस इतिहासपुराणम्।

(2।4।11)

वाल्मीकिरामायण में पुराण, पुराणविद् सूत का उल्लेख प्राप्त होता है। महाभारत तो स्वयं इतिहास पुराण है ही। इसमें वायुपुराण का स्पष्ट का उल्लेख है। अनेक प्राचीन गाथायें महाभारत में मिलती हैं। प्राचीन इतिहासपुराण के लुप्त होने का एक प्रधान कारण यह था कि महाभारत के उपाख्यानों में प्रायः सभी प्राचीन इतिहासों का सार संक्षेप संग्रहीत कर दिया गया था। ययात्युपाख्यान, शाकुन्तलोपाख्यान और रामोख्यान इसके ज्वलन्त प्रमाण हैं। रामोपाख्यान जिस प्रकार रामायण का संक्षेप है, इसी प्रकार यया-त्युपाख्यान इत्यादि सैंकड़ों उपाख्यान प्राचीन इतिहासों के संक्षेपसार हैं, यें इतिहास व्यास या सौति ने अपनी कल्पना से नहीं, प्राचीन ग्रन्थों को पढ़कर लिखे थे। यह सम्भव है कि ययाति का इतिहास काव्य उशना अथवा अन्य किसी भार्गव ऋषि ने विस्तृतरूप में लिखा हो, उसका संक्षेप ही महाभारत

का ययात्युपाख्यान है । उक्त तथ्य का संकेत स्वयं महाभारत में मिलता है

येषां दिव्यानि कर्माणि विक्रमस्त्याग एवच ।
महात्म्यमपि चास्तिक्यं सत्यता शौचमार्जवम् ।
विद्वद्भिदःकथ्यते लोके पुराणैः कविसत्तमैः ।

प्राचीन काव्य उशना, वाल्मीकि इत्यादि कविसत्तमों ने प्राचीन सम्राटों और महापुरुषों के इतिहास लिखे थे ।

'महाभारत' ग्रन्थ वैदिकग्रन्थों में उल्लिखित 'इतिहासपुराणवेद' का सच्चा प्रतिनिधि है ।

इसको 'पंचमवेद' के नाम से शास्त्रकार स्मरण भी करते हैं ।

छान्दोग्योपनिषद् में अथर्वाङ्गिरसों को इतिहासपुराणों का निर्माता बतलाया गया है—"अथर्वाङ्गिरस एव मधुकृतः । इतिहासपुराणं पुष्पं...ते वा एते अथर्वाङ्गिरस एतदितिहासपुराणमभ्यतपन् ।" (3।4।1।2) 'अथर्वाङ्गिरस मधुकर्त्ता हैं । इतिहासपुराण पुष्प हैं । अथर्वाङ्गिरस ऋषियों ने इतिहास पुराण का प्रवचन किया । इसी तथ्य को न्यायभाष्यकारवात्स्यायन किसी प्राचीन ब्राह्मणग्रथ का उद्धरण देते हुये लिखते हैं =

प्रमाणेन खलुब्राह्मणेनेतिहासपुराणस्यप्रमाण्यमभ्यनुज्ञायते—ते वा खल्वेते अथर्वाङ्गिरस एतदितिहासपुराणमभ्यवदन् । इतिहासपुराणं पञ्चमं वेदानां वेदः ।" (न्यायभाष्य 4।1।62) ।

"ब्राह्मणग्रन्थ इतिहासपुराणों का प्रमाण मानते हैं—क्योंकि वास्तव में अथर्वाङ्गिरस ऋषियों ने इतिहास पुराणों का प्रवचन किया था । इतिहास पुराण' वेदों का वेद और पंचमवेद है । वात्स्यायन का उक्त उद्धरण व्यास के निम्न श्लोक के भाव को ही व्यक्त करता है—'इतिहासपुराणाभ्यां वेदं समुपबृंहयेत्"

आश्वलायनगृह्यसूत्र में लिखा है कि दीर्घजीवी पुरुषों (ऋषियों एव राजर्षियों) की कथाओं का कीर्तन रात्रि में करना चाहिए—'रात्रादायुष्मतां कथाः कीर्तयन्तो माङ्गल्यानीतिहासपुराणानीत्याख्यापयमानाः ।" (4।6)

मनुस्मृति, जिसका वर्तमान पाठ द्वापरयुगका है, उसमें पुराणों के खिलों (परिशिष्टों) का उल्लेख मिलता है—

स्वाध्यायं श्रावयेत्पित्र्ये धर्मशास्त्राणि चैवहि।
आख्यानानीतिहासान् पुराणानि खिलानिच॥

'पितरों के श्राद्ध में स्वाध्याय करना चाहिए, धर्मशास्त्रों का श्रवण करना चाहिए आख्यानों, इतिहासों, पुराणों और पुराणखिलों का प्रवचन करना चाहिए।"

कौटिल्य ने अपने अर्थशास्त्र में इतिहास को 'इतिहासवेद' लिखा है—
'अथर्ववेदेतिहासवेदश्च वेद:'' (1।3)

कौटिल्य ने लिखा है कि राजकुमारों को अर्थशास्त्रविद् मन्त्री इतिहास पुराणों के माध्यम से शिक्षा दे—

"इतिहासपुराणाभ्यां वोधयेदर्थशास्त्रविद्।" (5।6)

कौटिल्य के कथन की पुष्टि रामायण और महाभारत के कथानकों सें होती है। मन्त्री सुमन्त्र पुराणों के उपाख्यान सुनाकर दशरथ को उपदेश देते हुऐ दिखलाई पड़ते हैं। महाभारत द्रोणपर्व में नारद द्वारा 'षोडशराजीयोपाख्यान' कौटिल्य के उक्त कथन का सुपुष्ट पोषक प्रमाण है।

इतिहासपुराण प्राचीनकाल में वेदों के समान धर्मशास्त्रीय ग्रन्थ थे, इसकी पुष्टि आपस्तम्ब के धर्मसूत्र तथा शतपथब्राह्मण में उल्लिखित पारिप्लवोपाख्यान से होती है। आगे इन दोंनों प्रमाणों की विस्तृत चर्चा करते हैं। पुराण को ऋषियों और सर्वसाधारण जनता में समान सम्मान प्राप्त था, इसकी पुष्टि भी उपर्युक्त ग्रन्थों से होती थी। आपस्तम्ब (2700 वि० पू० शौनक के समकालीन) ने पुराण से दो श्लोक उद्धृत किये हैं और भविष्य पुराण का नामतः उल्लेख किया है—

अष्टाशीतिः सहस्राणि ये प्रजामीषिरर्षयः।
दक्षिणेनार्यम्णः पन्थानं ते श्मशानानि भेजिरे।
अष्टाशीतिः सहस्राणि ये प्रजां नेषिरर्षयः।
उत्तरेणार्यम्णः पन्थानं ते ऽमृतत्वं हि भेजिरे॥

(आप०धर्म० सू० 2।9।23।3-6)

उपर्युक्त श्लोक ब्रह्माण्डपुराण (65।103-104) विष्णुपुराण में थोड़े से पाठान्तरों के साथ मिलते हैं।

भविष्यत्पुराण का उल्लेख इस प्रकार है—"आभूतसंप्लावस्ते स्वर्गजितः पुनः सर्गे वीजार्था भवन्तीति भविष्यत्पुराणे।"

(आप० ध० सू० 2।9।24।6)

"अर्थात् प्रलय पर्यन्त वे पितृगण स्वर्ग में निवास करते हैं। पुनः सर्ग होने पर नवीन सृष्टि के वीज (प्रजापति) वनते हैं। इस प्रकार भविष्यत् पुराण का वचन है।"

महाभारतकाल से पूर्व द्वापर त्रेता और कृतयुग में इतिहासपुराणों के साथ एक अथवा अनेक भविष्यत्यपुराण विद्यमान थे, यह आपस्तम्व और वाल्मीकिरामायण के प्रमाण से सिद्ध होता है।

यज्ञों और उत्सवों के अवसरों पर इतिहासपुराण प्रवचन का विशेप आयोजन होता था। जनमेजय के नागयज्ञ और कुलपतिशौनक के दीर्घसत्र में पुराणवाङ्मय का विशेप प्रवचन हुआ इसका विशद वर्णन तो अग्रिम अध्याय में करेंगे, यहां पर पारिप्लवोपाख्यान की चर्चा करके 28 व्यासों का यथा सम्भव विस्तृत इतिहास लिखा जायेगा।

शतपथब्राह्मण में पारिप्लवोपाख्यान—पुरातन काल में अश्वमेध यज्ञ के अवसर पर एक पूर्ण वर्पपर्यन्त पारिप्लवोपाख्यान का क्रम चलता था। 360 दिनों में प्रत्येक दसवेंदिन इतिहासपुराण का प्रवचन होता था इस प्रकार वर्ष में 36 दिन इतिहासपुराण के आख्यान सुनाये जाते थे।

शतपथब्राह्मण (काण्ड 13, अध्याय 4 ब्राह्मण 3) में पारिप्लवोपाख्यान उपक्रम इस प्रकार है—प्रथमदिन, वैवस्वत मनु राजा होते हैं। उस दिन ऋग्वेद का व्याख्यान होता है।

द्वितीय दिन, वैवस्वत यम राजा होते हैं। उनकी प्रजायें पितर हैं। इस दिन यजुर्वेद का व्याख्यान होता है।

तृतीय दिन, वरुण राजा होते हैं। उनकी प्रजायें गन्धर्व होती हैं। इस दिन अथर्ववेद के एक अध्याय की व्याख्या होती है।

चतुर्थदिन के राजा हैं सोम। प्रजा हैं अप्सरा। आङ्गिरस वेद की कथा होती है।

पंचमदिन के राजा होते हैं अर्बुदकाद्रवेय। नाग उनकी प्रजायें हैं। उस दिन सर्पविद्या की कथा होती है।

षष्ठदिन वैश्रवण कुवेर राजा और प्रजा हैं यक्ष—राक्षस। इस दिन 'देवजनविद्या' की कथा होती है।

सप्तमदिन असितधान्व राजा होता है। असुर उनकी प्रजायें हैं। इस दिन 'मायावेद' की व्याख्या होती है।

अष्टम दिन मत्स्यसाम्मद राजा होता है। मत्स्यजीवी उसकी प्रजायें हैं उस दिन 'इतिहासवेद' की कथा होती है।

नवमदिन, तार्क्ष्य वैपश्यत राजा होता है। सुपर्ण उसकी प्रजायें हैं। इस दिन पुराण की कथा होती।

दशम दिन देवराज इन्द्र राजा होते हैं। इस दिन सामवेद की व्याख्या होती।

इस पर पारिप्लवोपाख्यान से एक विशेष ऐतिहासिक तथ्य का ज्ञान होता है। प्राचीनयुगों में दस प्रकार की प्रजायें थीं—मनुष्य, पितर, गन्धर्व, अप्सरा नाग, राक्षस, असुर, (दानव), निषाद—(मत्स्यजीवी), सुपर्ण और देव। इनके प्रथम अथवा प्रधान सम्राट हुये थे—वैवस्वत मनु, यम, वरुण, सोम अर्बुद, कुवेर, असित धान्व, साम्मद मत्स्य, तार्क्ष्यवैपश्यत और इन्द्र। यह पुरातन इतिहास का महत्वपूर्ण विषय है, जिसका वर्णन अन्यत्र किया जायेगा। यहां पर केवल 'इतिहासपुराणों' का इतिहास हमारा अभीष्ट विषय है।

पौराणिक सूत—व्यासशिष्य रोमहर्षण का ऐतिहासिक वर्णन अग्रिम अध्याय में किया जायेगा। यहाँ पर सामान्य पौराणिक सूत का स्पष्टीकरण करते हैं।

प्राचीन अश्वमेधों के अवसर पर निश्चय ही पौराणिकसूत इतिहास पुराण का प्रवचन करता था। जनमेजय के नागयज्ञ में 'लोहिताक्षसूत पौराणिकविद्वान्' था। धर्मशास्त्रों के अनुसार क्षत्रियपुरुष से ब्राह्मणस्त्री में उत्पन्न सन्तान 'सूत' कही जाती थी। परन्तु पुराण तथा कौटिल्य के प्रमाण से ज्ञात होता है कि 'पौराणिकसूत' वर्णसंकर या हीन जाति के नहीं थे।' 'पौराणिकसूत' श्रेष्ठतर ब्राह्मण होते थे—"पौराणिकस्तु अन्यः सूतो मागध-पुत्राद् ब्राह्मणात्क्षत्राद् विशेषः।' (अर्थशास्त्र 3।7।29-30) "पौराणिक सूत और मागध वर्णसंकर सूत से पृथक हैं। ब्राह्मण और क्षत्रिय से विशिष्टतर।" पौराणिकसूत एक विशिष्ट जाति थी, उसकी उत्पत्ति अत्यन्त पुरातनयुग (चाक्षुष मन्वन्तर में 15000 विक्रम पूर्व) हुई थी—

पृथु वैन्य के यज्ञ में। वायुपुराण में इसका उल्लेख इस प्रकार है—

वैन्यस्य तु पृथोर्यज्ञे वर्तमाने महात्मनः।
सुत्यायामभवत् सूतः प्रथमं वर्णवैकृतम्।
ऐन्द्रेण हविषा तत्र हविः पृक्तं बृहस्पतेः।
जुहावेन्द्राय दैवेन ततः सूतो व्यजायत। (वायु पु. 1।33-34)

अतः पृथुवैन्य के समय से पौराणिकसूतों की परम्परा प्रारम्भ हुई, जो कि महाभारतकाल एवं उसके उत्तरकाल में भी चालू रही। पौराणिक सूत को पुराणों में भी ब्राह्मण माना गया है—

पृषदाज्यात् समुत्पन्नः सूतः पौराणिको द्विजः।
वक्ता वेदादिशास्त्राणां त्रिकालानलधर्मवित्॥ (अग्निपुराण)

अट्ठाईस व्यास—पुराणों में अट्ठाईस व्यासों का वर्णन एक विशिष्ट ऐतिहासिक महत्व का प्रकरण है वायुपुराण से 28 व्यासों का वर्णन यहाँ उद्धृत किया जाता है—

प्रथमे द्वापरे ब्रह्मा व्यासो बभूवह।
पुनस्तु मम देवेशो द्वितीये द्वापरे प्रभुः।
प्रजापतिर्यदा व्यासः सत्यो नाम भविष्यति।
तृतीये द्वापरे चैव यदा व्यासस्तु भार्गवः।

चतुर्थे द्वापरे चैव व्यासोऽङ्गिरा स्मृतः।
पंचमे द्वापरे चैव व्यासस्तु सविता।
परिवर्ते पुनः षष्ठे मृत्युर्व्यासो यदा प्रभुः।
सप्तमे परिवर्ते तु यदा व्यासः शतक्रतुः।
वशिष्ठश्चाष्टमे व्यासः परिवर्ते भविष्यति।
परिवर्तेऽथ नवमे व्यासः सारस्वतो यदा।
दशमे द्वापरे व्यासो त्रिधामा नाम नामतः।
एकादशे तु त्रिशिखो व्यासः भविष्यति।
द्वादशे परिवर्ते तु शततेजा महामुनिः।
भविष्यति महासत्वो व्यासः कविवरोत्तमः।
त्रयोदशे पुनः प्राप्ते परिवर्ते क्रमेण तु।
धर्मो नारायणो नाम व्यासस्तु भविष्यति।
यदा व्यासः अन्तरिक्षस्तु पर्यायश्च चतुर्दशः।
ततः प्राप्ते पंचदशे परिवर्ते क्रमागते।
त्र्यारुणिस्तु यदा व्यासो द्वापरे भविता प्रभुः।
ततः षोडशमे चापि परिवर्ते क्रमागते।
व्यासस्तु संजयो नाम भविष्यति तदा प्रभुः।
ततः सप्तदशे चैव परिवर्ते क्रमागते।
तदा भविष्यति व्यासो नाम्ना देवः कृतञ्जयः।
ततोऽष्टादशमश्चैव परिवर्तो यदा भवेत्।
तदा ऋतंजयो नाम व्यासस्तु भविता मुनिः।
ततस्त्वेकोनविंशे परिवर्ते क्रमागते।
व्यासस्तु भविता नाम्ना भरद्वाजो महामुनिः।
ततो विंशतितमे सर्गे परिवर्ते क्रमेण तु।
वाजश्रवाः स्मृतो व्यासो भविष्यति महामतिः।
एकविंशे पुनः प्राप्ते परिवर्ते क्रमेण ते।
वाचस्पतिः स्मृतो व्यासो यदा सः ऋषिसप्तमः।
द्वाविंशे परिवर्ते तु व्यासः शुक्लायनो यदा।
परिवर्ते त्रयोविंशे तृणविन्दुर्यदा मुनिः।

परिवर्ते चतुर्विंशे ऋक्षो व्यासो भविष्यति।
पंचविंशे पुनः प्राप्ते परिवर्ते यथाक्रमम्।
वशिष्ठस्तु यदा व्यासः शक्तिर्नाम भविष्यति।
षड्विंशे परिवर्ते यदा व्यासः पराशरः।
सप्तविंशतितमे प्राप्ते परिवर्ते क्रमागते।
जातूकर्ण्यो यदा व्यासो भविष्यति तपोधनः।
तदाऽहं भविष्यामि सोमशर्मा द्विजोत्तमः।
प्रभासतीर्थमासाद्य योगात्मा लोकविश्रुतः।
तत्रापि मम ते पुत्रा भविष्यन्ति तपोधनः।
अक्षपादः कणादश्च उलूको वत्स एव च।
अष्टाविंशे पुनः प्राप्ते परिवर्ते क्रमागते।
पराशरसुतः श्रीमान् विष्णुर्लोकपितामहः।
तदा भविष्यति व्यासो नाम्ना द्वैपायनः प्रभुः॥ (वायुपु०)

पुराणों में दक्ष अथवा कश्यप प्रजापति से श्रीकृष्ण तक 28 युग माने हैं। प्रत्येक युग में एक व्यास का अवतार हुआ। इस युगगणना का व्यासों से घनिष्ठ सम्बन्ध है। व्यासों का इतिहास लिखने से पहिले युगसमस्या का समाधान आवश्यक है। पुराणों में दो प्रकार के युगविभाग मिलते हैं। प्रथम में चतुर्युगीविभाग द्वितीय परिवर्त-युग विभाग। प्रथम में केवल चारयुगों का मान इस प्रकार है—कृतयुग=4800 वर्ष, त्रेतायुग=3600 वर्ष, द्वापर=2400 वर्ष और कलियुग=1200 वर्ष। पर्याय, युग, परिवर्त, इत्यादि समानार्थक हैं। इनको कहीं पर द्वापर या त्रेता भी कहा गया है। वायुपुराण इसको प्रायः त्रेतायुग कहता है।

28 परिवर्त या युग प्राचीनभारतीयइतिहास के ठोस ऐतिहासिकयुग थे। आर्यभट्ट ने भी युगपाद को समान माना है। आर्यभट्ट को ठीक न समझ कर ब्रह्मगुप्त ने लिखा—

न समा युगमनुकल्पाः कल्पादिमतं कृतादियुगानि तं च।
स्मृत्युक्तैरार्यभट्टो नातो जानाति मध्यगतिम्।

(ब्रह्मसिद्धान्त अ०)

वास्तव में ब्रह्मगुप्त ने युगपादों के रहस्य को समझा नहीं। आर्यभट्ट का मत ठीक था प्राचीन काल में युगपाद समान थे।

लेकिन युगपाद समान मानने पर चतुर्युगीगणना से उसका पूर्ण सांमजस्य स्थापित करना कुछ कठिन कार्य है, यद्यपि असम्भव नहीं। मिस्री गणना से भी उसका कुछ विरोध होता है। तमिल गणना से भी इन गणनाओं का सांमजस्य बैठाना आवश्यक है। ये सभी गणना ऐतिहासिक एवं सत्य के निकट है। क्योंकि इतिहास में 'युगसमस्या' सर्वाधिक महत्वपूर्ण है, अतः इसका समाधान किये बिना किसी विषय का इतिहास लिखना प्रायः निरर्थक ही होगा। अतः संक्षेप में इस युगसमस्या का समाधान करते हैं।

वैदिकग्रन्थों, कौटिल्यअर्थशास्त्र और ज्योतिषग्रन्थों में पाँचवर्षों का 'लघुयुग' माना जाता था। द्वितीय युगमान 60 वर्षों का था, तृतीय युगमान 720 वर्ष का था। सिद्धान्तशिरोमणि के टीकाकार मुनीश्वर ने वेदाङ्ग ज्योतिष के लेखक लगध का वचन इस प्रकार लिखा है—

"पंचसंवत्सरैरेकं प्रोक्तं लघुयुगं बुधैः।
लघु द्वादशकेनैकं षष्टिरूपं द्वितीयकम्।
तद् द्वादशमितैः प्रोक्तं तृतीयं युगसंज्ञकम्।
युगानां षट्शती तेषां चतुष्पादी कलायुगे॥

पुराणों की गणना से परिवर्त या युगपर्याय के दो मान और ज्ञात होते हैं। वायुपुराण में काशी का इतिहास लिखते हुये बताया गया है कि निकुम्भ दानव के आक्रमण से काशी 1000 वर्ष अथवा 3 युगों तक उजाड़ (शून्य) पड़ी रही—

शप्ता हि सा पुरी पूर्वं निकुम्भेन महात्मना।
शून्या वर्ष सहस्रं वै भवित्रीति पुनः पुनः।

(92।24)

अतः पुराणों में युग का मान 300 वर्ष या 360 वर्ष माना गया है। ऊपर 'षट्शती का युगमान से घनिष्ठ सम्बन्ध है। तृतीययुग 720 वर्ष का

है। क्योंकि 720 दिन रात का एक वर्ष होता है। वास्तव में 720 का आधा 360 दिन का ही वर्ष होता है। वायुपुराण के उपर्युक्त प्रमाण से सिद्ध होता है कि तीन युगों में 1000 वर्ष थे। 360 का युग होने पर ठीक वर्ष 10080 होते हैं अतः युग का मान 360 वर्ष था, क्योंकि उत्तरकाल में इसी आधार पर इस भ्रम का जन्म हुआ कि मनुष्यों का एक वर्ष (360 दिन) देवताओं के एक दिन के तुल्य होता है। इस भ्रम की उत्पत्ति इसी आधार पर हुई।

पुराणों के अन्य प्रमाण से भी उपर्युक्त युगमान की पुष्टि होती है—पुराणों में उल्लिखित है कि प्रतीप से परीक्षित् के राज्यकाल तक 300 वर्ष से कुछ अधिक हुये। पहिले लिखा जा चुका है कि परीक्षित् से आन्ध्रों तक 2400 वर्ष और प्रतीप से आन्ध्रों तक 2700 वर्ष (एक सप्तर्षि युग) हुये। कृष्ण द्वैपायन से पूर्व जातूकर्ण्य व्यास प्रतीप के राज्यकाल में विद्यमान थे। अतः प्रत्येक अवान्तरयुग और व्यास का अन्तर 360 वर्ष था। यह पुराणों की कालगणना से सिद्ध होता है।

यह भी संभव है कि देवयुग में युगों का वर्षमान अधिक हो। देवासुर संग्राम दशयुगों तक होते रहे। 'युगं वै दश' (वायुपुराण)

यह पहिले ही लिखा जा चुका है कि मिस्रीगणना से विष्णु (हरकुलीस) का समय 17000 वि. पू. निश्चित होता है। देवयुग में युगमान 7200 वर्ष मानने पर ही विष्णु का समय (360X10=3600+18X360 6480X 5100 कलिवर्ष=विक्रम से 15580 वर्ष पूर्व लगभग निश्चित होता है।

तमिल गणना में अगस्य ऋषि जो नहुष के समकालीन थे इनका प्रादुर्भाव लगभग दससहस्र विक्रमपूर्व हुआ। तमिल इतिहास में तीन संघ काल माने हैं जो इस प्रकार हैं—

प्रथम संघ काल (अगस्त्य से प्रारम्भ)—89 राजाओं ने राज्य किया= 4400 वर्ष

द्वितीय संघकाल= 3780 वर्ष=59 राजा

तृतीय संघकाल= 1850 वर्ष=49 राजा

योग=10030 वर्ष =197 राजा

मैगस्थनीज ने भी उक्त भारतीयगणना की पुष्टि की है वृक असुर (Bacchus) अथवा धान्व असित असुर (Dionosius) के राज्यकाल से सिकन्दर तक (भारत में चन्द्रकेतु और सातवाहनकाल) तक 154 राजाओं ने 6451 वर्ष राज्य किया। वृक और धान्व असुर त्रेतायुग में प्रधान असुर सम्राट थे, उनके वंश में शाल्व असुर और चन्द्रकेतु (सेंड्रोकाटेस) हुआ।

अतः सभी प्राचीन (देशी विदेशी) प्रमाणों से भारतीय इतिहास का आरंभ विक्रम से लगभग बीस सहस्र पूर्व सिद्ध होता है। इन प्रमाणों में पुराणों का प्रामाण्य सर्वाधिक विश्वसनीय है। अतः अब प्रत्येक युग, पर्याय और व्यास का समय सरलता से निश्चित किया जा सकता है।

प्रथम व्यास—स्वयम्भू ब्रह्मा (बाबा आदम—आत्मभू) का इतिहास—

भारतीय इतिहास और पृथ्वी के इतिहास में ब्रह्मा प्रथम ऐतिहासिक पुरुष था। महाभारत शान्तिपर्व अध्याय 385 के अनुसार ब्रह्मा सात हो चुके हैं। उनके नाम निम्न हैं—

(1) मानस ब्रह्मा
(2) चाक्षुष ब्रह्मा
(3) वाचस्पत्य ब्रह्मा
(4) श्रावण ब्रह्मा
(5) नासिक्य ब्रह्मा
(6) हिरण्यगर्भ ब्रह्मा (अण्डज)
(7) कमलोद्भव (पद्मज) ब्रह्मा।

वर्तमानमानव का ज्ञात इतिहास सप्तम पद्मज ब्रह्मा से प्रारम्भ होता है। इस वर्तमानमानवसृष्टि से पूर्व न जाने कितनी बार इस पृथ्वी पर मानव सृष्टि हुई होगी, इसको कौन जाने। वेद में उल्लेख है 'अर्वाक् देवाः' जब देवता उत्तरकाल में उत्पन्न हुये, तब देवताओं से पूर्व के इतिहास को मनुष्य

कैसे जान सकता है फिर भी सात ब्रह्माओं की स्मृति इतिहासपुराणों में विद्यमान है, जिनसे सात बार मानवसृष्टि हुई।

प्राणियों में ब्रह्मा सर्वप्रथम उत्पन्न हुये—

भूतानां ब्रह्मा प्रथमोत जज्ञे (अथर्ववेद)

ब्रह्मा स्वयं आकाश से उत्पन्न हुआ, इसलिये उसको 'स्वयम्भू' कहते हैं। 'आत्मभू'। 'आत्मभू' का अपभ्रंश है 'आदम'। यहूदी और अरब उसको 'आदम' कहते हैं। बाइबिल में भी बाबा आदम की कथा मिलती है। वह 'आदम' भारतीय 'आत्मभू' (स्वयम्भू ब्रह्मा) ही था आदम से आदमी उत्पन्न हुये।

पुरातन इतिहास डार्विन के विकासवाद का खण्डन करता है कि मनुष्य शनैः शनैः वानर से विकसित हुआ था। वास्तव में मनुष्य आरम्भ से ही मनुष्य था।

स्वयम्भू-आत्मभू-ब्रह्मा के अनेक नाम भारतीयसाहित्य में मिलते हैं यथा हिरण्यगर्भ, आदिदेव, ,क, प्रजापति, पुरुष परमात्मा, पद्मगर्भ, पद्मयोनि इत्यादि।

ब्रह्मा निश्चय पूर्वक प्रथम ऐतिहासिकपुरुष था। वह सर्वज्ञानमय था। पृथ्वी पर समस्तज्ञान का प्रादुर्भाव सर्वप्रथम ब्रह्मा से हुआ। वेदों का प्रथम निर्माता या प्रथमव्यास ब्रह्मा था। श्वेताश्वर उपनिषद् में लिखा है—

यो ब्रह्माणं विदधाति पूर्वं,
यो वै वेदांश्च प्रहिणोति तस्मै।"

मुण्डकोपनिषद् में स्पष्ट लिखा है—

ब्रह्मा देवानां प्रथमः संबभूव विश्वस्य कर्ता भुवनस्य गोप्ता स ब्रह्मविद्यां सर्वविद्याप्रतिष्ठाम् अथर्वाय ज्येष्ठपुत्राय प्राह। (1।1)

"ब्रह्मा ने सब देवताओं से पहिले जन्म लिया। जो सबके कर्त्ता और भुवन के रक्षक थे। उन्होंने सब विद्याओं की सारभूत ब्रह्मविद्या को अपने ज्येष्ठ पुत्र अथर्वा को पढ़ाया।

प्राय: सभी पुरातनशास्त्रों के आदिनिर्माता ब्रह्मा थे। उपनिषदों में एक गुरुशिष्य परम्परा दी है। उसमें सर्व प्रथम उपदेष्टा ब्रह्मा है—तद्वैतद् ब्रह्मा प्रजापतये प्रोवाच, प्रजापतिर्मनवे, मनु: प्रजाभ्य: ।" (छान्दोग्य उपनिषद्)

वेद, पुराण धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र ज्योतिषशास्त्र, कामशास्त्र, आयुर्वेद इत्यादि सभी विद्याओं का प्रारम्भ ब्रह्मा जी से माना गया है। यहाँ तक कि रामायण और महाभारत की प्रेरणा भी वाल्मीकि और व्यास को ब्रह्मा से मिली। पुराणों में अनेक घटनाओं के साथ प्राय: ब्रह्मा का सम्बन्ध स्थापित हो जाता है। ऐसा प्रतीत होता है कि कम से कम एक ब्रह्मा ऐतिहासिकपुरुष था, परन्तु अनेक ऋषियों, शास्त्रों या घटनाओं से ब्रह्मा का सम्बन्ध सर्वथा ऐतिहासिक प्रतीत नहीं होता। या तो जब किसी वंश के आदिपुरुष का नाम विस्मृत हो जाता है या किसी नवीनशास्त्र का उदय होता है तो उसे एक दम ब्रह्मा से सम्बद्ध कर दिया जाता है।

ऊपर मुण्डकोपनिषद् में अथर्वा (भृगु) का पिता ब्रह्मा को बतलाता है पर इतिहास से ज्ञात होता है वह वरुण आदित्य के पुत्र थे, इसी प्रकार दक्ष प्रजापति प्रचेताओं के पुत्र थे, परन्तु उन्हें ब्रह्मा का पुत्र भी कहा गया है। उपरिचर वसु के समकालीन एकत, द्वित और त्रित—ऋषियों को महाभारत में ब्रह्मा का पुत्र कहा गया है। सनत्कुमार रुद्र के पुत्र थे लेकिन उन्हें ब्रह्मपुत्र भी कहा जाता है। इस प्रकार ब्रह्मा के विषय में एक पूरा ग्रन्थ लिखा जा सकता है।

आदिदेव आत्मभू (आदम) ब्रह्मा के एक ऐतिहासिक पुरुष होने की पूरी सम्भावना है।

स्वायम्भुवमन्वन्तर से पूर्व मधुकैटभ दानवों ने ब्रह्मा से वेदों का अपहरण कर लिया था। यह निश्चयपूर्वक एक ऐतिहासिक घटना है, जिसका काल निर्णय करना अत्यन्त दुष्कर कार्य है। यह घटना स्वायम्भुव मनु से पूर्व वराहावतार से समय की है, यह घटना विक्रम से तीस सहस्र से पच्चीस सहस्र वर्ष पूर्व की हो सकती है। उस समय हयशिरोधर नामके महापुरुष ने रसातल से वेद को लाकर ब्रह्मा को दिया—

एतस्मिन्नन्तरे राजन् देवो हयशिरोधरः।
जग्राह वेदानखिलान् रसातलगतान् हरिः॥

(शान्तिपर्व अ० 375)

पण्डित भगवद्दत्त ने भारत वर्ष का वृहद् इतिहास, द्वितीय भाग, चतुर्थ अध्याय में ब्रह्मा का इतिहास लिखते हुये, उनको निम्नलिखित शास्त्रों का आदि प्रणेता बतलाया है—

(1) वेद
(2) ब्रह्मविद्या (उपनिषद्)
(3) योगशास्त्र (हिरण्यगर्भ योगशास्त्र)
(4) आयुर्वेद
(5) हस्ति—आयुर्वेद
(6) रस तन्त्र
(7) धनुर्वेद
(8) शिल्पशास्त्र
(9) धर्मशास्त्र (चित्र शिखण्डी शास्त्र)
(10) अर्थशास्त्र (राजनीतिशास्त्र)
(11) कामशास्त्र
(12) ब्राह्मीलिपि
(13) व्याकरण
(14) ज्योतिषशास्त्र (पैतामह सिद्धान्त)
(15) गणितविद्या
(16) वास्तुशास्त्र
17) पदार्थविज्ञान
18) अश्वशास्त्र
(19) इतिहासपुराण
(20) नाट्यवेद

हमारा अभीष्ट विषय इतिहासपुराण है अतः सर्वप्रथम ब्रह्मा ने इतिहास पुराण का प्रवचन किया—

पुराणं सर्वशास्त्राणां प्रथमं ब्रह्मणा स्मृतम्
अनन्तरं च वक्त्रेभ्यो वेदास्तस्य विनिःसृताः ।

(मत्स्य पुराण 3 । 3)

व्यासरूपी तदा ब्रह्मा संग्रहार्थं युगे-युगे । (पद्मपुराण, सृ० 1)
उत्पन्नमात्रस्य पुरा ब्रह्मणोऽव्यक्तजन्मनः ।

पुराणमेतद् वेदाश्च मुखेभ्योऽनुविनिसृताः । (मार्कण्डेय पु० 45।20)

अतः उपर्युक्त प्रमाणों से सिद्ध होता है कि प्रथम व्यास ब्रह्मा ने वेदों से पूर्व पुराणों का निर्माण किया ।

आदिब्रह्मा प्रथम प्रजापति थे । उनका समय देवयुग से पूर्व पितृयुग में था । देवयुग में एक ब्रह्मा सदा आदित्यों और असुरों को वरदान आदि देते हैं । देवासुरसंग्रामों में ब्रह्मा देवों के प्रमुख सहायक थे । वह ब्रह्मा कश्यप प्रजापति थे ।

ब्रह्मपुराण—ब्रह्मा के पुराण का क्या मूलरूप था, आज उसके विषय में कुछ भी नहीं कहा जा सकता । महाभारत में ब्रह्मा की बनाई हुई अनेक गाथायें मिलती हैं । आदिपुराण को ब्रह्मपुराण भी कहते हैं । उसका स्पष्ट सम्बन्ध ब्रह्मा से है । मूल ब्रह्मपुराण ब्रह्मा की रचना थी । उसी का संस्करण वर्तमान ब्रह्मपुराण है ।

द्वितीय व्यास—वायुः—वायु ऋषि द्वारा पुराण प्रवचन नैमिपारण्य में राजा पुरूरवा के राज्यकाल (कृतयुग) में हुआ था । जिस प्रकार कल्यारम्भ में कुलपति शौनक-दीर्घसत्र (2700 वि. पू.) हुआ, उसी प्रकार का सत्र कृतयुग में ऋषियों ने किया । लिखा है—

तत्सत्रमभवत्तेषां समा द्वादश धीमताम् ।
पुरूरवसि विक्रान्ते प्रशासति वसुन्धराम् ।
अष्टादश समुद्रस्य द्वीपानश्नन् पुरूरवाः ।
तुतोष नैव रत्नानां लोभादिति हि नः श्रुतम् ।
निजघ्नुश्चापि संक्रुद्धाः कुशवज्रैर्मनीषिणः ।
समाप्तयज्ञास्ते सर्वे वायुमेव महाधियम् ।
पप्रच्छुरमितात्मानम् भवद्भिः यदहं पुरा ।।

(वायुपुराण)

"पुरूरवा के पृथ्वी पर शासनकाल में ऋषियों का द्वादशवर्षयुगीन का सत्र हुआ। पुरूरवा समुद्र के अठारह द्वीपों का भोग करते थे, लेकिन रत्नों के लोभ से उनकी तृप्ति नहीं हुई। तब मनीषियों (ऋषियों) ने कुशमय वज्र से पुरूरवा का वध कर दिया। यज्ञ समाप्त होने पर वे महाबुद्धिमान् महात्मा वायु से (इतिहास सम्बन्धी) प्रश्न पूछने लगे जैसे कि आपने मुझसे (सौति से) प्रश्न पूछे थे।"

पुरूरवा के राजकाल में जब महात्मा वायु ने पुराणप्रवचन किया, देव-युग का अन्त हो रहा था और तब कृतयुग का प्रारम्भ होने लगा था। त्रेतायुग का प्रवर्तक भी पुरूरवा था। उसी समय वायुऋषि ने मूल वायुपुराण की रचना की, जिसका अवशेष वर्तमान वायुपुराण है, वर्तमान वायुपुराण का प्रवचन उग्रश्रवा सौति ने अधिसीमकृष्ण पाण्डव के राज्यकाल (2700 वि. पू.) में किया था, यद्यपि बहुत उत्तरकाल में वायुपुराण में अल्पधी पुरुषों ने गड़बड़ की थी, परन्तु इस पुराण में प्राचीनता के सर्वाधिक लक्षण विद्यमान हैं। इस विषय की विस्तृत चर्चा 'अष्टादशमहापुराण प्रकरण में की जायेगी।

महात्मा वायु अदिति पुत्र इन्द्र के अनुज थे, इन्होंने ऐन्द्रव्याकरण की रचना में भी इन्द्र की सहायता की थी—तैत्तिरीयसंहिता में वायु के इस सहाय्य का उल्लेख मिलता है।

वायुरचित मूलपुराण ऋषियों में अत्यन्त पूजित था, जैसा कि महाभारत में लिखा है—

"एतत्ते सर्वमाख्यातमतीतानागतं तथा।
वायुप्रोक्तमनुस्मृत्यपुराणमृषिसंस्तुतम् ।।"

(वनपर्व 191। 16)

उशनाकाव्य तृतीयव्यास—दैत्यों और दानवों (असुरों) के प्रधानगुरु शुक्राचार्य भारतीय इतिहासपुराणों में अत्यन्त प्रसिद्ध व्यक्ति थे। वैदिक ग्रन्थों में शुक्राचार्य का उल्लेख 'उशना काव्य' के नाम से अधिक मिलता है।

उशना काव्य वहुत ही प्रसिद्ध विद्वान थे। ये भृगु के पुत्र अथवा भृगुवंशीय ऋषि थे। वरन् इनको भृगुओं का राजपद भी प्राप्त था—

'भृगूणामधिपं चैव काव्यं राज्येऽभ्यषेचयत्।

(वायुपुराण 70।4)

'काव्य उशना' को भृगुओं का राजा वनाया गया।' अथर्ववेद के प्रधान ऋषि ये उशना शुक्राचार्य ही थे। पारसियों का धर्मग्रन्थ जेन्दावेस्ता अथर्व वेद (छन्दोवेद) का विकृत रूप है। अथर्ववेद को छन्दोवेद भी कहा जाता था। 'छन्दोवेद' शब्द ही बिगड़ कर 'जेन्दावेस्ता' वन गया।

पुराणों में शुक्राचार्य को दैत्येन्द्र वलि का पुरोहित कहा गया है। महाभारत में ययात्युपाख्यान में शुक्राचार्य दानवेंद्र वृषपर्वा के आचार्य और पुरोहित के रूप में वर्णित है। शुक्र की पुत्री देवयानी सम्राट् ययाति को व्याही थी, देवयानी के पुत्र यदु, तुर्वसु और द्रुह्यु हुये। वृषपर्वा की पुत्री शर्मिष्ठा ययाति की द्वितीय पत्नी थी, जिसके पुत्र अनु और पुरु थे। पुरु से पौरववंश चला। असुरगुरु के रूप में शुक्राचार्य का उल्लेख वैदिकग्रन्थों में इस प्रकार मिलता है—

'वृहस्पतिर्देवानां पुरोहित आसीद्।
उशनाकाव्योऽसुराणाम्।"

(जैमिनीयब्राह्मण 1।125)

अथर्ववेद के मन्त्रों के अतिरिक्त उशनाकाव्य ने वहुत से अन्य शास्त्रों की रचना थी, जिनमें से कम से कम चार प्रधान हैं—

औशनस अर्थशास्त्र, आयुर्वेद, धनुर्वेद और पुराण।

उशना शुक्र को तृतीय व्यास इसलिये माना गया, क्योंकि इन्होंने मूलवेद का निर्माण या सम्पादन किया और इतिहासपुराण की भी रचना की।

जेन्दावेस्ता में कवि उशना को 'कवि उसा' या कैकोस' के नाम से स्मरण किया गया है। वृषपर्वा को फारसी में 'अफरासियाव' कहते हैं।

काव्य उशना देवयुग के सर्वोच्च वैद्य थे। महाभारत, पुराण और आयुर्वेद संहिताओं के प्रमाण से यह सिद्ध है। इन्होंने 'मृतसंजीवनीविद्या' का निर्माण किया था। वृहस्पतिपुत्र कच ने शुक्राचार्य से यह विद्या सीखी थी।

उशनाप्रणीत 'औशनसअर्थशास्त्र' वहुत प्रसिद्ध ग्रन्थ था। महाभारत और कौटिल्य के अर्थशास्त्र में इसका उल्लेख मिलता है।

परन्तु उशना ने किस 'इतिहासपुराण' की रचना थी इसका नाम-मात्र भी ज्ञात नहीं है सम्भवतः उशनाकृत पुराण में असुरों का विस्तृतइतिहास लिखा होगा। उसके अनुकरण पर अत्यर्वाचीन काल में औशनसपुराण रचा गया।

उशनाकाव्य दीर्घजीवी ऋषि थे। दैत्येन्द्र वलि से लेकर ययाति तक इनका अस्तित्व निश्चित है। तृतीय त्रेतायुग से अष्टम युग अर्थात् प्रायः दो सहस्र वर्ष तक उशना जीवित रहे। जो असुरों को अमर कर देते थे, उन शुक्राचार्य की आयु निश्चित अमितायु होगी। ऋषियों ने असुरों और सुरों को इसलिये 'अमर' या 'अमृत' कहा क्योंकि वे जल्दी नहीं मरते थे। देवयुग में निश्चय ही मनुष्य की आयु वहुत दीर्घ होती थी।

चतुर्थ व्यास-अङ्गिरा या आङ्गिरस (बृहस्पति)—अङ्गिरा के वंश में वृहस्पति, सुधन्वा, भरद्वाज आदि अनेक ऋषि हुये। इनका कुल आङ्गिरसकुल कहा जाता है। देवयुग में ऋषियों के भार्गवकुल और आङ्गिरस कुल-ये दो वंश प्रधान थे। अङ्गिरावंशीय ऋषि देवों के पुरोहित होते थे। जैमिनीय ब्राह्मण के प्रमाण से लिखा जा चुका है कि बृहस्पति देवों के पुरोहित थे। जिस प्रकार शुक्राचार्य भृगुओं के राजा थे, उसी प्रकार बृहस्पति अङ्गिराओं के अधिपति थे। बृहस्पति सदा देवराज इन्द्र के पुरोहित रहे। ब्राह्मणग्रन्थों में लिखा मिलता है—

'बृहस्पतिर्वा आङ्गिरसो देवानां ब्रह्मा'

(गोपथ ब्रा० 3।1

बृहस्पतिर्देवानां पुरोहित आसीद्'

(जै० ब्रा० 1।125)

उस समय पुरोहित ही राजा का प्रधानमन्त्री होता था। अतः बृहस्पति देवों के प्रधानमन्त्री थे।

वेदमन्त्रों के साथ बृहस्पति ने अनेक शास्त्रों की रचना की। इनमें से बार्हस्पत्यअर्थशास्त्र का प्राचीनग्रन्थों में वहुधा उल्लेख मिलता है। महाभारत

पुराण, कौटिल्य भासादि ने 'बार्हस्पत्यअर्थशास्त्र' का उल्लेख किया है। इस ग्रन्थ के कुछ अंश प्राप्त भी हुये हैं। निम्न उल्लेख द्रष्टव्य हैं—

बार्हस्पत्ये च शास्त्रे च श्लोकोऽयं नियतः प्रभो।'

(शान्तिपर्व 55।38)

कौटल्यअर्थशास्त्र में बृहस्पति के मतों का बहुधा उल्लेख मिलता है।

चतुर्थ व्यास बृहस्पति ने कौन से इतिहासपुराण की रचना की यह सर्वथा अज्ञात है, सम्भवतः बृहस्पति ने इन्द्र या देवों का इतिहास लिखा होगा बाल्मीकि और व्यास को इन्ही प्राचीन इतिहासों के द्वारा देवों का वृतान्त ज्ञात हुआ महाभारत में देवों के जो इतिहास मिलते हैं वे व्यास के मस्तिष्क की उपज नहीं वरन् पुरातनव्यासों के इतिहासग्रन्थों के आधार पर वे वृतान्त लिखे गये थे।

बृहस्पति का कार्यकाल (पुराणरचना) चतुर्थ त्रेता में था।

विवस्वान् (सूर्य) पंचमव्यास—वेदों और पुराणों के पंचमसंस्कर्त्ता सूर्य महाराज थे। ये कश्यपप्रजापति और दाक्षायणी अदिति के पुत्र थे। अदिति के बारह पुत्रों को इतिहास में आदित्य कहा जाता है। नक्षत्र सूर्य से इनका कोई सम्बन्ध नहीं है, ये द्वादश आदित्य पृथिवी के निवासी थे। इनमें से विवस्वान् ज्येष्ठ थे और अत्यधिक तेजस्विता के कारण आकाशीय सूर्य को भी विवस्वान् कहा जाने लगा। पृथिवीवासी विवस्वान् और सूर्यनक्षत्र एक दूसरे के पर्याय हो गये। इन्हीं विवस्वान् को प्रजापति (कश्यप) के रूप में वासुदेव ने योग का उपदेश दिया था—

इमं विवस्वते योगं प्रोक्तवानहमव्ययम्।
विवस्वान् मनवे प्राह मनुरिक्ष्वाकवेऽब्रवीत्।
एवं परम्पराप्राप्तमिमं राजर्षयो विदुः।
स कालेनेह महता योगो नष्टः परंतपः।

(श्रीमद्भगवद्गीता 4।1-2)

विवस्वान् के दो प्रसिद्ध पुत्र हुये-यम और मनु। यम, जो षष्ठ व्यास थे, इनका वृतान्त आगे लिखा जाता है।

वैवस्वतयम—षष्ठ व्यास-छठे युग में—यम का चाचा इन्द्र जो सातवें युग का व्यास हुआ, आयु में यम से छोटा था। यम का जन्म इन्द्र से एकयुग (360 वर्ष) पूर्व हुआ। यम इन्द्र का गुरु भी था।

ईरानीसाहित्य में वैवस्वतयम को—'यिम खिस्त ग्रोस्त' कहते हैं और विवस्वान् को विवह्वन्त। ये शब्द क्रमशः वैवस्वतयम और विवस्वान् के अपभ्रंश हैं। 'जमशेद' शब्द भी यमवैवस्वत का एक भ्रष्टरूप है।

स्पष्ट है वरुण की भांति यम का ईरान से अधिक सम्बन्ध था। वरुण और यम दोनों ऐतिहासिक व्यक्ति थे, मनु का भ्राता यम और चाचा वरुण क्यों नहीं ऐतिहासिक व्यक्ति हो सकते। इनकी ऐतिहासिकता में केवल अज्ञानी ही अविश्वास कर सकता है।

वैवस्वतयम पितरदेश का राजा था—श० ब्रा० 'यमो वैवस्वतो राजेत्याह तस्य पितरो विशः' वैवस्वतयम राजा है और उसकी प्रजायें पितर कहलाती थीं। इस भाव की प्रतिध्वनि पुराण में मिलती है—

वैवस्वतं पितॄणां च यमं राज्येऽभ्यषेचयत्।

(वायुपुराण 70।8)

यजुर्वेद की मैत्रायणीयसंहिता में उपर्युक्त तथ्यों का इस प्रकार उल्लेख है—'विवस्वानादित्यो यस्य मनुश्च वैवस्वतो यमश्च। मनुरेवास्मिँल्लोके यमोऽमुष्मिन्।" (1।6।32) "आदित्यविवस्वान् के पुत्र मनु और यम थे। मनु का राज्य इस लोक (भारतवर्ष) में-यम का राज्य उस लोक (ईरान) में।" ईरान का प्रथमसम्राट् वैवस्वतयम था। पारसीधर्मग्रन्थ अवेस्ता में यम का पर्याप्त वृतान्त मिलता है। पाश्चात्यलेखक उसको माईथालोजी कहते हैं। भारतीय और ईरानियों के लिये वह इतिहास है।

यम अथर्ववेद के मन्त्रों का ऋषि था, उसने अनेकशास्त्रों की रचना की इन्द्र के चार गुरु थे, उनमें वैवस्वतयम भी एक था। यम ने इन्द्र को इतिहासपुराण पढ़ाया। अब यमरचित मूलग्रन्थों का मिलना एक स्वप्न है। यम ने सम्भवतः जलप्लावन से पूर्व ईरान में राज्य किया। मनु यम का छोटा

भ्राता था। यम की भगिनी यमी या यमुना थी। इसके नाम से नदी को भी यमुना कहने लगे।

अतः अदिति के बारह पुत्र एक ही समय में हुये, यह विश्वास करना अत्यन्त कठिन है। जब विवस्वान् के पुत्र और इन्द्र के भतीजे यम का राज्य इन्द्र से 400 वर्ष पूर्व था, क्योंकि इन्द्र सातवें युग में हुआ, अतः सभी आदित्य एक समय में नहीं हुयें। इनकी आयु कितनी ही दीर्घ हो, वे निश्चय ही विभिन्न कालों में हुये। मिस्रीगणना में भी हरकुलीस (विष्णु) वृक और बाणासुर बलिपुत्र या बलि के वंशज में दो सहस्रवर्ष का अन्तर था। यम का राज्यकाल मनु के राज्यकाल से कम से कम तीन शताब्दी पूर्व था।

वैवस्वतयम और उससे पूर्व के व्यासों के रचित इतिहासग्रन्थ महाभारत काल से पूर्व सम्भवतः लुप्त हो गये होंगे। आज तो उनकी उपलब्धि का प्रश्न ही नहीं। केवल पुराणों में उनकी अस्पष्ट स्मृति विद्यमान है।

इन्द्र—सप्तमयुगीनव्यास—इन्द्र आदित्यों में अवर यानी छोटा था 'प्रजापतिरिन्द्रमसृजत—आनुजावरं देवानाम्' (तै. ब्रा. 2।2।10)

'प्रजापति (कश्यप) ने इन्द्र को उत्पन्न किया। वह देवों में अवर (उत्तरकालीन) था ऐसा प्रतीत होता है कि द्वादशआदित्य अनेक पीढ़ियों में उत्पन्न हुये। ब्राह्मणग्रन्थ और पुराणों की ऐसी शैली है कि जिस व्यक्ति के पिता को न बताना हो उस व्यक्ति को वे 'प्रजापति का पुत्र' कह देते हैं। अनेक स्थानों पर प्रजापति का अर्थ अस्पष्ट होता है कि वह कौन सा प्रजापति था। पुराण प्रायः प्रजापति से ब्रह्मा का अर्थ लेते हैं। लेकिन ब्राह्मणग्रन्थों में देवों और असुरों का पिता प्रजापतिकश्यप को बतलाया है।

विष्णु को छोड़कर इन्द्र आदित्यों में सबसे उत्तरकाल में हुआ। वरुण विवस्वान् आदि आदित्य इन्द्र से शताब्दियों या युगों पूर्व हो चुके थे। क्योंकि इन्द्र के ज्येष्ठ भ्राता विवस्वान् का पुत्र यम इन्द्र का अध्यापक (गुरु) था। अतः प्रत्येक अदितिपुत्र का समय निर्धारण करना सरल कार्य नहीं है।

पहिले लिखा जा चुका है कि इन्द्र ने वैवस्वतयम से पुराण का अध्ययन किया। इन्द्र के चार गुरु थे प्रजापति (कश्यप), अश्विनीकुमार, बृहस्पति

और यम। ये देवजाति के पुरुष क्योंकि दीर्घजीवी होते थे, अतः प्राचीन ऋषि इनको अमर या अमृतपुत्र कहते थे। इन्द्र की दीर्घायु को इसी तथ्य से जाना जा सकता है कि वह प्रजापति (कश्यप—पिता) के यहाँ 101 तक ब्रह्मचर्यव्रत का पालन करता हुआ रहा। लिखा है—"इन्द्रो वै देवानाम् अभि प्रवव्राज। विरोचनोऽसुराणां... ... ...तौ ह द्वात्रिंशतं वर्षाणि ब्रह्मचर्यमुषतुः" (छा. उ० 8।7) इन्द्र प्रथमवार 32 वर्ष, दोबारा और तिबारा 32-32 वर्ष ब्रह्मचारी रहा। चौथी बार पाँच वर्ष तक ब्रह्मचारी रहा। इस प्रकार कुल 101 वर्ष तक इन्द्र ने ब्रह्मचर्य का पालन किया।

इन्द्र जन्म से ब्राह्मण था। वह विद्वान् बनकर ऋषि बन गया। उसने वेद का प्रवचन किया और पुराणों की रचना की। इसलिये उसको 'व्यास' की पदवी मिली। पण्डित श्री युधिष्ठिर मीमांसक ने संस्कृतव्याकरणशास्त्र का पृ० सं 63 पर इन्द्रोपदिष्ट शास्त्रों और कृतियों का इस प्रकार वर्णन किया है...

(1) व्याकरणशास्त्र = (ऐन्द्रव्याकरण)
(2) आयुर्वेद= (शिष्य भरद्वाजकृत)
(3) अर्थशास्त्र
(4) मीमांसाशास्त्र
(5) पुराण
(6) गाथा और छन्दःशास्त्र
(7) ब्राह्मणग्रन्थ
(8) मन्त्र

इन्द्र ब्रह्मविद्या में भी पारंगत था। ब्राह्मणग्रन्थ और उपनिषदों के प्रमाणों से स्पष्ट है। विश्वामित्र और भरद्वाज ऋषि इन्द्रके शिष्य थे। भरद्वाज ने इन्द्र से आयुर्वेद सीखा और विश्वामित्र ने यज्ञविद्या।

इन्द्र पहिले ब्राह्मणऋषि था। बाद में वह क्षत्रिय हो गया=

"इन्द्रो वै देवनामोजिष्ठो बलिष्ठः";
(कौ. ब्रा० 6 14)

इन्द्रो वै ब्रह्मणः पुत्रः कर्मणा क्षत्रियोऽभवत् ।
ज्ञातीनां पापवृत्तीनां जघान नवतीर्नव ॥

(शान्तिपर्व 22।21)

इन्द्र ने 99 बार असुरों से युद्ध किये। उसने 100 यज्ञ किये, इसलिये उसका नाम 'शतक्रतु' प्रसिद्ध हुआ।

इन्द्र ने नमुचि, वृत्रासुर इत्यादि अनेकों असुरनरेशों का संहार किया। इनमें वृत्रासुरवध प्रधान देवासुरसंग्राम था। वृत्रवध से इन्द्र 'महेन्द्र' पद को प्राप्त हुआ—'इन्द्रो वै वृत्रमहन्त्सोऽन्यान् देवानत्यमन्यत । स महेन्द्रोऽभवत् ।

(मैत्रा० सं. 4।6।8)

इन्द्र ने वृत्र को मारा, जिससे वह देवताओं में महान् हुआ। वह 'महेन्द्र' हो गया। इन्द्र का एक नाम 'अर्जुन' भी था।

आयुर्वेदशास्त्र में इन्द्र के प्रधानशिष्य भरद्वाजऋषि थे जो वृहस्पति के पुत्र हुये थे।' भरद्वाज ने इन्द्र से चिकित्साविज्ञान पढ़कर समस्त भारत में उसका प्रचार व प्रसार किया।—

इन्द्र ने असुर विश्वरूप (त्रिशिरा), अरुरुयतियों को शालावृकब्राह्मणों (असुरों) को दे दिया। प्रह्लाद के वंशज विरोचनादि का वध किया। पौलोम और कालाखंज असुरों का हनन किया।

अनुज विष्णु की सहायता से विरोचनपुत्र असुरेन्द्रवलि को राज्यच्युत कर दिया, जिससे वह हारकर रसातल (समुद्रद्वीप) भाग गया। इस घटना का उल्लेख वायुपुराण में इस प्रकार है—

बलिसंस्थेषु लोकेषु त्रेतायां सप्तमेयुगे ।
दैत्यैस्त्रैलोक्याक्रान्ते तृतीयो वामनोऽभवत् ॥

(वायुपुराण)

"सातवें युग में (1184० वि. पू.) लोकों के वलि के अधीन और आक्रान्त होने पर तीसरे अवतार में विष्णु ने वामन रूप धारण किया।"

इन्द्र और वेद का सम्बन्ध सर्वप्रसिद्ध है। लेकिन वेदमन्त्रों में इन्द्र का सर्वत्र अर्थ ऐतिहासिक नहीं है। कहीं कहीं ऐतिहासिक इन्द्र का भी वर्णन है।

यास्क ने स्पष्ट लिखा है कि वेद में त्वाष्ट्र, इन्द्रादि पदों का ऐतिहासिक और अध्यात्म अर्थ दोनों ही हैं प्रकरणानुसार अर्थ करना चाहिये।

इन्द्र सातवाँ व्यास था। उसने स्वयं वेदो का सम्पादन किया था। वह वर्तमान वेद नहीं ही था। जब वेदों का सम्पादन 28 वार हुआ है तो उनके आकार-प्रकार निश्चय ही परिवर्तित होते रहे हैं। समय-समय पर वेदसंहिताओं में नये पुराने मन्त्र घटते-बढ़ते रहे हैं।

इन्द्र ने विश्वामित्र को वेद पढ़ाया। लेकिन युद्ध करते हुये इन्द्र वेदों को भूल गया। पुनः उसने विश्वामित्र से वेद पढ़े—'तान् ह विश्वामित्राद् अधिजगे। ततो हैव कौशिक ऊच।'' (जैं० ब्रा० 2।79)। कौशिक का शिष्य होने के कारण इन्द्र का एक नाम 'कौशिक' भी प्रसिद्ध हुआ।

इन्द्ररचित 'ऐन्द्रव्याकरण' बहुत प्रसिद्ध कृति थी। लेकिन इन्द्र ने किस इतिहास या पुराण की रचना की यह अब ज्ञात नहीं है।

अष्टम व्यास वशिष्ठ—वैवस्वतमनु के पुरोहित और मित्रावरुण के पुत्र वशिष्ठ ऋषि आठवें व्यास थे, ये आठवें युग में हुये। इनकी माता उर्वशी और भ्राता अगस्त्यऋषि थे। इतिहासपुराणों और बृहद्देवता में वशिष्ठ और अगस्त्य के जन्म के विषय में यह लिखा मिलता है—

तयोरादित्ययोः सत्रे दृष्ट्वाऽप्सरसमुर्वशीम्।
रेतश्चस्कन्दः तत्कुम्भे न्यपतद्वासतीवरे।
तेनैव तु मुहूर्ते वीर्यवन्तौ तपस्विनौ।
अगस्त्यश्च वशिष्ठश्च तत्रर्षी संवभूवतुः।

(बृहद्देवता 5।149-50)

'प्रजापति (वरुण) यज्ञ में दो अदितिपुत्रों मित्र और वरुण का वीर्य कुम्भ (घड़े) में स्खलित हो गया, उर्वशी अप्सरा को देखकर। उसी क्षण उससे अगस्त्य और वशिष्ठऋषि का जन्म हुआ।''

वरुणपुत्र होने से वशिष्ठ को आथर्वणऋषि भी कहा जाता है। प्रसिद्ध टीकाकार मल्लिनाथ ने लिखा है—'अथर्वणा वशिष्ठेन कृता रचिता पदानां पंक्तिरानुपूर्वी यस्य स वेदः चतुर्थवेद इत्यर्थः। अथर्वणस्तु मन्त्रोद्धारो वशिष्ठकृत

इत्यागमः (किरातार्जुनीयटीका 10।10)। अतः इस प्रमाण से सिद्ध होता है कि अथर्ववेद का मन्त्रोद्धार वशिष्ठकृत है, इसलिए वशिष्ठ आठवें 'व्यास' माने गये।

वशिष्ठ का कुल अथर्वाङ्गिरस भी कहा जाता था। इस वंश के ऋषियों का इतिहासपुराणों के निर्माण में विशेषयोग रहा, यह पहले ही प्रतिपादित किया जा चुका है।

वशिष्ठ के वंशजों को भी वाशिष्ठ या वशिष्ठ कहा जाता था, अतः अनेक वशिष्ठ ऋषियों को उत्तरकाल में एक ही मानकर भ्रम उत्पन्न हो गया। वैदिकग्रन्थों और वायुपुराण में पुत्र के साथ पिता का नाम अवश्य उल्लिखित हुआ है, लेकिन उत्तरकाल में यह प्रवृत्ति समाप्त हो गई इसलिए एक वंश के अनेक ऋषियों को एक ही समझ लिया। इक्ष्वाकुकुल के सभी पुरोहित वशिष्ठ वंशी ऋषि थे, इसलिये ऐसा भ्रम उत्पन्न हुआ कि इक्ष्वाकुकालीन वशिष्ठ और दशरथकालीन वशिष्ठ एक ही थे। यह सरासर भ्रम है।

आद्यवशिष्ठऋषि अष्टमव्यास थे, जिनका समय 11180 वि. पू. था। अन्तिम व्यास कृष्णद्वैपायन का समय 3100 वि. पू. है। अतः आदि वशिष्ठ और कृष्णद्वैपायन में आठ सहस्र वर्ष का अन्तर है। प्रत्येक ऋषि की आयु आयु 200 वर्ष की हो तो वशिष्ठ और कृष्णद्वैपायन के मध्य न्यून से न्यून 40 पीढ़ियां अवश्य हुई। अधिक हो सकती है कम नहीं। अतः यह भ्रम है कि द्वैपायन आद्यवशिष्ठ के प्रपौत्र थे। वास्तव में कृष्णद्वैपायन वशिष्ठवंशीय ऋषि थे।

अपान्तरतमा—सारस्वत—नवम व्यास—अपान्तरतमा प्राचीनतम ऋषि दध्यङ् आथर्वण (दधीचि) के पुत्र थे। इनकी माता का नाम अलम्बुषा अथवा सरस्वती था। शल्यपर्व (अध्याय 51) और शान्तिपर्व (अध्याय 359) से सारस्वत व्यास का इतिहास ज्ञात होता है—शल्यपर्व से ज्ञात होता है कि वृत्रासुर देवासुरसंग्राम के पश्चात् द्वादशवार्षिकी घोर अनावृष्टि हुई—

अथ काले व्यतिक्रान्ते महत्यति भयंकरे।
अनावृष्टिरनुप्राप्ता राजन् द्वादशवार्षिकी॥

(शल्यपर्व 51।39)

इस घोर अकाल में ऋषिगण क्षुत्पिपासा से पीड़ित होकर इधर उधर भाग गये। सारस्वतऋषि के शरण में साठसहस्र मुनि सरस्वतीतट के आश्रम में रहे। वे भूखे प्यासे ऋषिगण वेदशास्त्रों को भूल गये। यद्यपि सारस्वतव्यास युवक थे, परन्तु उन्होंने बूढ़े ऋषियों को वेद पढ़ाया। मनुस्मृति में 'शिशुआङ्गिरसकवि' के नाम से अपान्तरतमाव्यास का ही उल्लेख किया है

अध्यापयामास पितृञ्छिशुराङ्गिरसः कविः।
पुत्रका इति होवाच ज्ञानेन परिगृह्य तान्॥

शिशुआङ्गिरसकवि ने अपने पितरों को (वेद) पढ़ाया और पढ़ाकर कहा हे। पुत्रो!" इस प्रकार साठसहस्रऋषि मुनियों ने वालऋषि अपान्तरतमा का शिष्यत्व ग्रहण करके वेद पढ़ा। अश्वघोष ने इसी घटना का उल्लेख इस प्रकार किया है—

तथाङ्गिरा रागपरीतचेतः सरस्वतीं ब्रह्मसुतः सिषेवे सारस्वतो यत्र सुतोऽस्य जज्ञे नष्टस्यवेदस्य पुनःप्रवक्ता॥ (बुद्धचरित)

पुनश्च—

सारस्वतश्चापि जगाद नष्ट वेदं पुनर्यंददशुर्नपूर्वे।' (सौन्दरानन्द)

शान्तिपर्व में आख्यान है कि कृष्णद्वैपायनव्यास पूर्व जन्म के अपान्तरतमा थे, जिन्होंने नष्टवेद का उद्धार किया। इसका तात्पर्य है कि कृष्णद्वैपायनव्यास से पूर्व सारस्वत व्यास का ऐतिहासिक महत्व सर्वाधिक था।

श्री शंकराचार्य ने वेदान्तभाष्य (3।3।32) में लिखा है—'अपान्तरतमा नाम वेदाचार्यः पुराणर्षिः विष्णुनियोगात् कलिद्वापरयोः सन्धौ कृष्णद्वैपायनः संवभूव इति स्मरन्ति।" "इतिहास में स्मरण किया जाता है कि अपान्तरतमा नाम के पुरातनऋषि, विष्णु की आज्ञा से कलिद्वापर के सन्धिकाल में कृष्ण के रूप में उत्पन्न हुये। इसी तथ्य का पांचरात्र अहिर्बुध्न्यसंहिता, अध्याय 11 में इस प्रकार उल्लेख है—

अथ कालविपर्यासाद् युगभेदसमुद्भवे
त्रेतादौ सत्वसंकोचाद्रजसि प्रविजृम्भिते।

अपान्तरतमा नाम मुनिर्वाक्संभवो हरेः ।
उदभूत्तत्र धीरूपमृग्यजुःसामसंकुलम् ।
विष्णुसंकल्पसंभूतमेतद् वाच्यायनेरितम् ।

"अतः कालविपर्यास से युगान्तर होने पर त्रेतायुग के आरम्भ में सत्व के संकोच और रजोगुण के प्रकट होने पर सरस्वती से अपान्तरतमा मुनि का जन्म हुआ। उन वाच्यायन (सारस्वत) ऋषि ने ऋग्वेद, सामवेद यजुवद और अथर्ववेद का विभाग किया।

स्वयं व्यासशिष्य वैशम्पायन ने महाभारत में अपान्तरतमा को पूर्वजन्म का कृष्णद्वैपायन वतलाया है और लिखा है—

अपान्तरतमा नाम सुतो वाक्संभवः प्रभुः ।
भूतभव्यभविष्यज्ञः सत्यवादी दृढ़व्रतः ॥
तमुवाच नतं मूर्ध्ना देवानामादिख्ययः ।
वेदख्याने श्रुतिः कार्या त्वया मतिमतांवर ।
तस्माकुरु यथाज्ञप्तं ममैतद्वचनं मुने ।
तेन भिन्नास्तदा वेदा मनोः स्वायभुवऽन्तरे ।
अपान्तरतमाश्चैव वेदाचार्यः स उच्यते ।
प्राचीनगर्भं तमृषिं प्रवदन्तीह केचन ।
पुनस्तिष्ये च सम्प्राप्ते कुरवो नाम भारताः ।
भविष्यन्ति महात्मानो राजानः प्रथिताः भुवि ।
तत्राऽप्यनेकधा वेदान् भेत्स्यसे तपसान्वितः ।
कृष्णे युगे च संम्प्राप्ते कृष्णवर्णो भविष्यसि ।

\+ \+ \+

सोऽहं तस्य प्रसादेन देवस्य हरिमेधसः ।
अपान्तरतमा नाम जात आज्ञया हरेः ॥
पुनश्चजातो विख्यातो वशिष्ठकुलनन्दनः ॥

(शान्तिपर्व 349)

सरस्वती के पुत्र अपान्तरतमा भूत, भविष्य और वर्तमान को जानने वाले थे। प्रजापति ने उनसे कहा कि तुम वेदों का विभाग करो। अपान्तरतमा को वेदाचार्य और प्राचीनगर्भ भी कहा जाता है। पुन: कलियुग के प्राप्त लेने पर महाभारतयुग में तुम कृष्णद्वैपायन के रूप में वेदों का विभाग करोगे। कृष्णयुग (कलि) में तुम कृष्णवर्ण के होगे। इस प्रकार मैं प्रजापति की आज्ञा से अपान्तरतमा ही अब कृष्णद्वैपायन के रूप में वशिष्ठकुल में उत्पन्न हुआ हूँ।"

पण्डित भगवद्दत्त ने सारवस्त और अपान्तरतमा के ऐक्य को न समझ-कर लिखा—'इन 28 वेद प्रवचनों में अपान्तरतमा का नाम कहीं दिखाई नहीं देता। निश्चय ही वह वैवस्वतमनु से पूर्व स्वायम्भुव अन्तर में वेदप्रवचन कर चुका था। यही बात पहिले लिखी गई है।" (वैदिकवाङ्मय का इतिहास भाग 1,पृ० 161)। यद्यपि पण्डितजी ने दोनों वेदाचार्यों का वर्णन किया है, लेकिन उनका ऐक्य नहीं समझ सके। महाभारत के प्रमाणों से सारस्वत और इस नवमव्यास अपान्तरतमा सारस्वत का वेदप्रवचन स्वायम्भुव मन्वन्तर में नहीं, वैवस्वतमन्वन्तर में ही नहुष के राज्यकाल में (11120 वि० पू०) हुआ, यह पहले ही लिखा जा चुका है।

अत: अपान्तरतमा का कृतित्व कृष्णद्वैपायन के समान ही महत्वपूर्ण था। अपान्तरतमाव्यासलिखित इतिहासपुराणग्रन्थ अज्ञात है।

सारस्वतव्यास के चार प्रधानशिष्य थे-पराशर, गार्ग्य, भार्गव और अङ्गिरा। सारस्वत को शिशुकवि भी कहा जाता था, यह पहिले ही लिखा चुका हैं। किसी समय वेद की शैशवसंहिता या सारस्वतसंहिता प्रसिद्ध थी।

त्रिधामा (मार्कण्डेय)—दशमव्यास त्रिधामा के पिता का नाम मृकण्डु था, इसलिये इनको मार्कण्डेय कहते हैं। शण्ड और मर्क उशना के पुत्र थे। सम्भवत: मर्क ही मृकण्डु थे। मृकण्डु के पुत्र मार्कण्डेय हुये, इनका वास्तविक नाम त्रिधामा था। मार्कण्डेय ने ही दशमयुग में (10760 वि० पू०) मूल-मार्कण्डेयपुराण का प्रवचन किया था। मार्कण्डेयरचितमूलपुराण के आधार पर वर्तमान मार्कण्डेयपुराण की रचना अधिसीमकृष्ण के राज्य काल में (2700वि० पू०) हुई।

वर्तमान मार्कण्डेयपुराण में मन्वतरों, काशिराज अलर्क दत्तात्रेय और वैशालवंश के राजाओं का चरित्र विशेषरूप से वर्णित हैं। दत्तात्रेय और मार्कण्डेय का विशेषसम्बन्ध था, जिसका संकेत वायुपुराण में मिलता है—

"त्रेतायुगे तु दशमे दत्तात्रेयो वभूव ह।
नष्टे धर्मे चतुर्थश्च मार्कंडेयपुरस्सरः॥

"दशवें त्रेतायुग में विष्णु को चौथा अवतार दत्तात्रेय के रूप में हुआ मार्कण्डेय को आगे करके अथवा पुरोहित वनाकर।"

मार्कण्डेय व्यास (त्रिधामा) ने दसवीं वार वेदप्रवचन किया और पुराण की रचना की। मार्कण्डेय की दीर्घायु इतिहासपुराण में विख्यात है- वाल्मीकि ने लिखा हैं—

'मार्कण्डेयः सुदीर्घायुः" (वालकाण्ड 71।4) महाभारत से ज्ञात है कि पाण्डवों ने मार्कण्डेय से भेंट की; वहाँ लिखा है—

"वहुवत्सरजीवी च मार्कण्डेयो महातपाः।"
"दीर्घयुश्च कौन्तेय स्वच्छन्दमरणं तथा।"

(वनपर्व अध्याय 181)

शरद्वान्—गौतम (दीर्घतमा-मामतेय) एकादशव्यास=इतिहासपुराणों तथा वैदिकग्रन्थों दीर्घतमा अनेक नामों से विख्यात है, शरद्वान् गौतम और मामतेय। अयोध्या में जव राजा मान्धाता का राज्य था, तब दीर्घतमागौतम जीवित थे। यौवनाश्व, अङ्ग, बृहद्रथ, मान्धाता, आवीक्षित् मरुत्त, गय, जनमेजय सुधन्वा और नृग समकालीन राजा थे। इनके राज्यकाल में गौतम का जन्म हो चुका था। भरतदौष्यन्ति का अभिषेक भी दीर्घतमामामतेय ने किया था।

"दीर्घतमा मामतेयो भरतं दौष्यन्तिमभिषिषेच।"

(ऐतरयेब्राह्मण 8।23)

ययाति के पुत्र अनु के वंश में शिवि औशीनर-और तितिक्षु नाम के राजा हुये। तितिक्षु की कुछ पीढ़ियों पश्चात् राजा वलि हुआ, जिसने पूर्वी

भारत में राज्य स्थापित किया-वलि की पत्नी के गर्भ से दीर्घतमा ऋषि ने नियोग से पाँच पुत्र उत्पन्न किये जो पाँच प्रान्तों के राजा हुये—अङ्ग वङ्ग कलिङ्ग, सुह्म और पुण्ड्र ।

ऋषि दीर्घतमागौतम की जन्मकथा पुराणों और बृहद्देवता ग्रन्थ में मिलती है । इस सम्बन्ध में बृहद्देवता के श्लोक द्रष्टव्य हैं—

द्वावुचथ्यबृहस्पती ऋषिपुत्रौ बभूवतुः ।
आसीदुचथ्यभार्या तु ममता नाम भार्गवी ।
तां कनीयान् बृहस्पतिर्मैथुनायोपचक्रमे ।
स व्याजहार तं गर्भस्तमस्ते दीर्घमस्त्विति ।
स दीर्घतमा नाम बभूवर्षिरुतथ्यजः ।
स जातोऽभ्यतपद्देवान् अकस्मादन्धतां गतः ।
ददुर्देवास्तु तन्नेत्रे ततोऽनन्धो बभूवह ।
जीर्णं बद्धं नदीतोये दृष्टिहीनमवादधुः ।
अंगदेशसमीपे तु तं नद्यः समुत्क्षिपन् ।
अंगराजगृहे युक्ताम् उशिजं पुत्रकाम्यया ।
राज्ञा च प्रहितां दासीं भक्तां मत्वामहातपाः ।
जनयामास चोत्थाय कक्षीवत्प्रमुखान् ऋषीन् ।

(बृहद्देवता)

"उतथ्य और बृहस्पति दो ऋषिपुत्र थे । उतथ्य की भार्या ममता नाम की भार्गवी थी । छोटे भाई बृहस्पति ने ममता के साथ मैथुन करना चाहा गर्भस्थ बालक ने बृहस्पति से कहा-तुम घोर अज्ञान (तम) में हो । तब उतथ्य पुत्र दीर्घतमा ऋषि का जन्म हुआ । उसने होते ही देवों का तप करना शुरु कर दिया । अकस्मात् वह अन्धा हो गया । देवों ने उसको नेत्र दे दिये जिसमें उसकी अन्धता दूर हो गई । उस जीर्ण दीर्घतमा को दासों ने बाँधकर नदी में फेंक दिया । नदी ने दीर्घतमा को अंगदेश के समीप फेंक दिया । अंगराज के घर में नियुक्त उशिजा के गर्भ से ऋषि ने कक्षीवानादि अनेक पुत्रों को उत्पन्न किया ।

दीर्घतमा अत्यन्त दीर्घायु थे । ऋग्वेद में और शांखायनआरण्यक में लिखा है—

दीर्घतमा मामतेयो जुजुर्वान् दशमेयुगे।

(ऋग्वेद)

'दीर्घतमा मामतेय दशयुग तक जीवित रहे। पुनश्च- 'तत् उ ह दीर्घतमा दशपुरुषायुषाणि जिजीव (शाखायनआरण्यक)। "दीर्घतमा 1000 (एक सहस्र) वर्ष जीवित रहे।

दीर्घतमा गौतम ने ऋग्वेद की किस संहिता का सम्पादन किया यह अज्ञात है। उपलब्ध संहिता में दीर्घतमा के अनेक सूक्त मिलते हैं, जिनमें अस्य-वामस्यसूक्त और विष्णुसूक्त प्रसिद्ध है। इन से ही दीर्घतमा ऋषि की वाग्मिता एवं अध्यात्मज्ञान सम्बन्धी महत्ता प्रख्यापित होती है।

इतिहास में गौतम दीर्घतमा का कुल बहुत प्रसिद्धकुल था। इनके कुल में किसी गौतमऋषि की पत्नी अहिल्या की कथा प्रसिद्ध है।

कृष्णद्वैपायन के पिता पराशर के समकालीन अक्षपाद गौतम ने न्याय-दर्शनशास्त्र की रचना की। गौतमवंश विद्या के क्षेत्र में अप्रतिम रहा।

द्वादशसंख्या पर शततेजा नाम के व्यास हुये। पुनः नारायण व्यास, सुरक्ष, त्र्यरुण, धनंजय, कृतंजय और ऋतंजय व्यास हुये। इन सात व्यासों का कोई विशेष इतिहास ज्ञात नहीं हैं। इनमें तेरहवें व्यास नारायण को विष्णु का प्रसिद्ध अवतार माना जाता है। इन्होंने रावण के समान बली राजा दम्भोम्दव का विनाश किया था। नरनारायणऋषि बदरिकाश्रम में रहते थे। वामन अवतार रामावतार, कृष्णावतार के तुल्य ही नारायणावतार इतिहास की महत्वपूर्ण घटना थी।

उन्नीसवाँ व्यास—भरद्वाज—विक्रम से 7520 वर्ष पूर्व अथवा युधिष्ठर से 4400 वर्ष पूर्व उन्नीसवाँ युग चल रहा था। उस समय भरद्वाजऋषि ने वेदों का सम्पादन किया। आदिम भरद्वाज ऋषि बृहस्पति के पुत्र अथवा वंशज थे। भरद्वज के वंश में उत्पन्न अनेक ऋषि भरद्वाज या भारद्वाज कहे जाते थे। एक 'विदथि भारद्वाज भरत दौष्यन्ति के समकालीन था, एक भरद्वाज दाशरथि राम और काशिराज प्रतर्दन के समकालीन (5209 वि० पू०) था।

पण्डित भगवद्दत्त सभी भरद्वाजों के एक ही मानते हैं। यह ठीक नहीं है। आदि

वार्हस्पत्य भरद्वाज आद्यवशिष्ठ के समकालीन विद्यमान थे और सप्तर्षियों में से एक थे। यही आदि भरद्वाज इन्द्र के शिष्य थे। और निश्चयपूर्वक दीर्घ-जीवी थे जैसा कि ऐतरेयब्राह्मण में लिखा है—'भरद्वाजो ह वा ऋषीणाम-नूचानतमो दीर्घजीवितमस्तपस्वितम आस।' (ऐ० ब्रा० 1।2।2)। परन्तु महाभारतकालीन द्रोणाचार्य के पिता भरद्वाज और वृहस्पतिपुत्र भरद्वाज एक नहीं हो सकते। उनमें 8000 वर्षों का अन्तर था। भले ही ऋषियों का दीर्घजीवन कितना ही लम्बा क्यों न हो, एक सहस्रवर्ष से अधिक आयु का होना प्रायः असम्भव हैं। एक सहस्रवर्ष से कुछ अधिक भी आयु हो सकती है, परन्तु आठसहस्रवर्ष की आयु सर्वथा असम्भव है। आद्यभरद्वाज से पृथक् करने के लिये ही पुराणों में विदथि भरद्वाज का विशेषण है, जो भरत के पुरोहित थे।

अतः उन्नीसवें व्यास का गोत्रनाम भरद्वाज ही ज्ञात है। पुराणों के अनुसार हिरण्यनाम कौसल्य, कुथुमि आदि इन भरद्वाज के शिष्य थे। सामवेद की कौथमीशाखा के प्रवर्तक ये ही कुथमि ऋषि थे। हिरण्यनाभ कौशल्य, कृष्णद्वैपायन से पूर्व वेदप्रवचन और शाखाप्रवर्तन कर चुके थे। मूलशाखा प्रवर्तक भरद्वाज थे। अतः वे उन्नीसवें व्यास माने गये। इनके द्वारा रचित इतिहासपुराणों के नामादि अज्ञात हैं।

बीसवें व्यास वाजश्रवा, इक्कीसवें व्यास वाचस्पति बाइसवें व्यास सोमशुष्म और तेइसवें व्यास तृणविन्दु का कोई भी उल्लेखनीय वृतान्त ज्ञात नहीं है। तृणविन्दु वैशाली के राजा थे और अगस्त्य के साथी थे।

ऋक्षवाल्मीकि—चौबीसवें व्यास (5720 वि० पू० या 2580 कलिपूर्व)—ऋक्षव्यास का कार्यकाल 572० से 536० वि० पू० तक था। वाल्मीकि ने चौबीसवीं वार वेदसंहिताओं का संस्कार किया। कालिदास ने भी वाल्मीकि को 'मन्त्रकृत्' कहा है—

> "निषादविद्धाण्डजदर्शनोत्थः श्लोकत्वमापद्यत यस्य शोकः।
> सखा दशरथस्यापि जनकस्य च मन्त्रकृत्।"
>
> (रघुवंश)

मन्त्रकृत् ऋषि वाल्मीकि जनक और दशरथ के सखा थे। निषाद द्वारा क्रौञ्चपक्षी के वध को देखकर शोक के कारण उनके मुख से नूतनलौकिक छन्द का अवतार हुआ—

"मा निषाद प्रतिष्ठां त्वं गमः शाश्वतीः समाः
यत्क्रौञ्चमिथुनादेकमवधीः काममोहितम् ॥"

पुराणों में वाल्मीकि का दूसरा नाम 'ऋक्ष' मिलता है जो सम्भवतः असली नाम था। 'वाल्मीकि नाम तो उत्तरकालीन था जो उन्हें तप करते हुये प्राप्त हुआ। अथवा च्यवन पिता वल्मीक होने से पुत्र वाल्मीकि कहलाये। वाल्मीकि का जन्म च्यवन भार्गव के वंश में हुआ था। महाभारत में वाल्मीकि के श्लोकों का उल्लेख है—

अपि चायं पुरा गीतः श्लोको
वाल्मीकिना भुवि ।"

(द्रोणापर्व 143|85)

पुनश्च—

'श्लोकश्चायं पुरा गीतो भार्गवेण महात्मना ।"

कृष्णद्वैपायनव्यास से पूर्व एकमात्र ऋक्षव्यास वाल्मीकि का ही एक इतिहासग्रन्थ (रामायण) आज प्राप्त है। वाल्मीकिव्यास और दाशरथि राम चौवीसवें युग में हुये—लिखा है—

चतुर्विंशे युगे चापि विश्वामित्रपुरस्सरः
लोके राम इति ख्यातस्तेजसा भास्करोपमः

(हरिवंशपुराण)

तत्तरीयप्रातिशाख्य और मैत्रायणीयप्रातिशाख्य में वाल्मीकि के वैदिक चरण और उच्चारण सम्बन्धीनियम मिलते हैं। इससे सिद्ध होता है कि वाल्मीकि ने वेदप्रवचन किया था।

वाल्मीकि आयुर्वेद और धनुर्वेद के भी आचार्य थे। लवकुश को इन्होंने धनुर्विद्या सिखाई थी, यह रामायण से ज्ञात होता है। वाल्मीकि के चार प्रधान शिष्य थे-शालिहोत्र, अग्निवेश, युवनाश्व और शरद्वसु। इनमें शालिहोत्र

अश्वचिकित्सा के प्रधानवैद्य थे। और अग्निवेश ने पुनर्वसु आत्रेय की आयुर्वेदसंहिता (वर्तमान चरकसंहिता) को तन्त्रवद्ध किया।

अतः वाल्मीकि व्यास का वैदुष्य इतिहास में सिद्ध है। जो लेखक वाल्मीकि को 300 या 400 वि० पू० में रखते हैं उनको भारतीय इतिहास का अणुमात्र भी ज्ञान नहीं, उनके कथन केवल प्रलापमात्र हैं।

शक्ति वाशिष्ठ व्यास—(5360 वि० पू० तक) पुराणों में सौदास कल्माषपाद (अयोध्यानरेश) और शक्ति के संघर्ष का वर्णन मिलता है। कल्माषपाद दाशरथिराम से दस पीढ़ी पहिले हुआ था। अतः वाशिष्ठ शक्तिऋषि दीर्घजीवी थे, इन्होंने वाल्मीकि से एकयुग (360 वर्ष) पश्चात् 5000 वि० पू० के लगभग वेदप्रवचन किया और पुराण रचे अथवा इनका कृतित्व स्वतन्त्र था।

पराशर व्यास—यह ध्यातव्य है कि वाशिष्ठ और पाराशर नाम के अनेक ऋषि हुये थे, क्योंकि ये गोत्र नाम थे। नामसाम्य से इतिहास में प्रायः भ्रम हो जाता है। पुराण भी इसके अपवाद नहीं हैं।

अतः शक्तिपुत्र पराशर और कृष्णद्वैपायनपिता पराशर एक ही व्यक्ति हों यह आवश्यक नहीं हैं। क्योंकि शक्ति और कृष्णद्वैपायन के समय में लगभग 2000वर्षों का अन्तर था, भले ऋषि दीर्घजीवी हो, शक्ति और द्वैपायन के मध्य में लगभग 20 पीढ़ियां अवश्य हुई होगी। वैसे पराशर और कृष्णद्वैपायन व्यास दोंनो ही दीर्घजीवी थे, क्योंकि उपरिचरवसु और जनमेजय पारीक्षित् के समय में 500 वर्ष का अन्तर था, अतः कृष्णद्वैपायन की आयु 500 वर्ष अवश्य थी। पराशर की आयु भी लगभग इतनी ही थी।

शक्तिपुत्र पराशर ने यज्ञ में राक्षसों का विनाश किया था, इसलिये इनका नाम पराशर (परानसूदयति इति पराशरः) हुआ।

पराशरने 26 वें युग (परिवर्त) के व्यास से लगभग 800 पश्चात् और कृष्णद्वैपायन से 800 वर्ष पूं० वेदशाखाप्रवर्तन किया, अतः पराशर व्यास का समय 3800 वि० पू० के आसपास था।

किसी पराशर ने मूल विष्णुपुराण की रचना की थी। आयुर्वेद के ग्रन्थों में इनको वृद्धपराशर कहा है। निश्चय ही पराशर अनेक ऋषि हुये।

जतूकर्ण या जातूकर्ण्य व्यास (3400 वि० पू०)—ऋग्वेद की एक शाखा जातूकर्ण्य प्रसिद्ध थी। शांखायनश्रौतसूत्र में आचार्य जातूकर्ण्य का बारबार नामोल्लेख है। अन्तिमस्थान में उसे जड़जातूकर्ण कहा है। जतूकर्ण गोत्रप्रवर्तक ऋषि का नाम था। उनके वंश में जड़जातूकर्ण ऋषि हुये। ये वाशिष्ठ ऋषि थे। जड़ जातूकर्ण्य ही कृष्णद्वैपायन के गुरु थे। बृहदारण्यकोपनिषद में लिखा है।

"पाराशर्यो जातूकर्ण्यात्"—"पराशरपुत्र व्यास ने जातूकर्ण्य से विद्या सीखी।"

ब्रह्माण्डपुराण में लिखा है कि कृष्णद्वैपायन ने जातूकर्ण्य से पुराण पढ़ा।

जातूकर्ण्य ऋषि का समय 3400 वि० पू० के लगभग था, क्योंकि ये 27 वें युग के व्यास और कृष्णद्वैपायन के गुरु थे। ब्राह्मणग्रन्थों और आयुर्वेद ग्रथों में भी जातूकर्ण्य का उल्लेख मिलता है।

पाराशर्यकृष्णद्वैपायनव्यास अट्ठाईसवाँयुग (3200वि० पू०)—पाश्चात्य लेखक मैक्समूलर, मैकडानल, कीथ, हापकिन्स विन्टरनित्स इत्यादि व्यासजी को काल्पनिक व्यक्ति समझने थे और कहते थे कि पुराणों का साक्ष्य प्रामाणिक नहीं है। कृष्णद्वैपायन पाराशर्य जो अन्तिम और अट्ठाइसवें व्यास थे, का उल्लेख गोपथब्राह्मण, तैत्तिरीयारण्यक, बृहदारण्यकोपनिषद्, बौधायनगृह्यसूत्र, और आग्निवेश्यगृह्यसूत्र जैसे प्रसिद्ध वैदिकग्रन्थों में मिलता है।

तैत्तिरीयारण्यक में लिखा है—'स होवाच व्यासः पाराशर्य; (1935)। गोपथब्राह्मण में-'एतस्माद् व्यासः पुरोवाच।" अतः व्यास की ऐतिहासिकता असंदिग्ध है।

महाभारत में लिखा है कि पाराशर्यव्यास ने एक अभूतपूर्व वाङ्मययज्ञ किया, जिसकी तुलना विश्वइतिहास में कहीं भी नहीं है। वर्तमानकाल में उपलब्ध वैदिकवाङ्मय व इतिहासपुराणवाङ्मय व्यासजी और उनकी शिष्य-परम्परा की कृपा का फल है। लिखा है—

'सर्ववेदविदां श्रेष्ठो व्यासः सत्यवतीसुतः। (शान्तिपर्व 2।1)

व्यासजी त्रिकाल में होनेवाले सभी वेदज्ञों में सर्वश्रेष्ठ थे। जिस प्रकार विष्णु के अवतारों में श्रीकृष्ण वासुदेव सर्वश्रेष्ठ थे, उसी प्रकार 28 व्यासों में कृष्णद्वैपायन अप्रतिम थे। इनकीं महिमा अतुलनीय है।

वशिष्ठ के वंश में शक्ति पच्चीसवें व्यास थे। शक्ति के पुत्र या वंशज पराशर छब्बीसवें व्यास थे और कृष्णद्वैपायन पराशरपुत्र अट्ठाइसवें व्यास थे। दाशराज की कन्या मत्स्यगन्धा अथवा सत्यवती व्यासजी की माता थी। वास्तव में मत्स्यगन्धा राजा उपरिचरवसुचैद्य की पुत्री थी। उसका पालन दाशराज ने किया था। नाव चलाते हुये पराशरऋषि और सत्यवती का संगम हुआ जिससे यमुना के द्वीप (कालपी) में व्यास का जन्म हुआ। द्वीप में उत्पन्न होने के कारण 'द्वैपायन' कहे जाते हैं। 'कृष्णवर्ण के होने से कृष्णद्वैपायन और पराशरपुत्र होने से पाराशर्य नाम से अभिहित किये जाते हैं। जातूकर्ण्य ऋषि से कृष्णद्वैपायन ने विद्याध्ययन किया। अतः जातूकर्ण्य इनके गुरु थे। व्यासजी शीघ्र ही वेदों के महान् विद्वान् वन गये—

जातमात्रं च यं वेद उपतस्थेससंग्रहः।
धर्ममेव पुरस्कृत्य जातूकर्ण्यादवाप तम्।
मतिं मन्थानमाविध्य येनासौ श्रुतिसागरात्।
प्रकाशं जनितो लोके महाभारतचन्द्रमाः।
वेदद्रुमश्च यं प्राप्य सशाखः समपद्यत॥

(वायुपुराण 1।43-45)

"व्यास के उत्पन्न होते ही वेद संग्रहसहित उनके पास उपस्थित हो गये। लेकिन धर्म को आगे करके व्यास ने गुरु जातूकर्ण्य से वेदों का अध्ययन किया। श्रुतिसागर को मतिरूपी मथनी से मथकर महाभारतरूपी चन्द्रमा उन्होंने लोक में प्रकाशित किया। और वेदवृक्ष भी उनका आश्रय पाकर शाखाओं वाला बन गया।"

पाराशर्यव्यास का वेदशाखाप्रवर्तन भारतयुद्ध से लगभग 150 या 200 वर्ष पूर्व, शन्तनु के राज्यकाल में सम्पन्न हो गया था। आदिपर्व (99-14-22) में इसका स्पष्ट संकेत है। वेदशाखाप्रवर्तन के पश्चात् व्यासजी ने तीन वर्षों में शतसाहस्रीसंहिता का निर्माण किया। इससे पूर्व व्यास ने एकपुराण-संहिता बनाई थी, जिसमें 4000 श्लोकमात्र थे। वेदव्यास ने यह पुराणसंहिता पंचलक्षणोंसहित वायुऋषि इत्यादि के पुरातनपुराणों और रामायण जैसे इतिहासग्रन्थों का सार संग्रहीत करके रची थी।

द्वितीय अध्याय

व्यासशिष्यपरम्परा

पाराशर्यव्यास का वाङ्मययज्ञ—श्रीकृष्णद्वैपायन पाराशर्यव्यास ने राजराजेश्वर कौरव्य शन्तनु के राज्यकाल (3220 वि. पू.) में एक महान् वाङ्-मययज्ञ सम्पन्न किया, जिसका उल्लेख महाभारत में इस प्रकार है—आस्तीक मुनि जनमेजय के यज्ञ में राजा की स्तुति करता हुआ उसकी प्रशंसा करता है-

> कृष्णस्य यज्ञः सत्यवत्याः सुतस्य ।
> स्वयं च कर्म प्रचकार यत्र ॥
> तथा यज्ञोऽयं तव भरताग्र्य ।
> पारिक्षित स्वस्ति नोऽस्तु प्रियेभ्यः ॥
>
> (1।55।7)

'सरस्वतीनन्दन श्रीव्यासजी का यज्ञ महान् था, जिसमें उन्होंने सभी कर्म स्वयं सम्पन्न किये।" यहाँ निश्चय ही व्यासजी के वाङ्मययज्ञ का संकेत है। व्यास से तीन शताब्दी पश्चात् कुलपति शौनक का द्वादशवर्षीय दीर्घसत्र हुआ, उसी प्रकार का महान् सत्र श्रीपाराशर्यव्यास ने किया, वरन् व्यास का वाङ्मययज्ञ और भी महान् था, उसमें उन्होंने सम्पूर्ण वैदिकवाङ्मय का सम्पादन, संकलन संरक्षण एवं संस्कार किया। श्रीव्यास के वाङ्मय यज्ञ की परम्परा पतंजलिमुनि के समय तक चलती रही।

पुनः आस्तीक कहता है—

> ऋत्विक् समो नास्ति लोकेषु चैव ।
> द्वैपायनेनेति विनिश्चितं मे ॥
> एतस्य शिष्याः क्षितिमाचरन्ति ।
> सर्वर्त्विजः कर्मसु स्वेषु दक्षाः ॥
>
> (1।55।9)

"संसार में श्रीकृष्णद्वैपायन के समान यज्ञकर्त्ता और कोई भी नहीं है, यह मेरा विनिश्चित मत है। इनके शिष्य पृथिवी पर विचरण करते रहते हैं और समस्त यज्ञकर्मों में पूर्ण दक्ष हैं।"

उग्रश्रवा सौति ने कहा —

"पादापसारिणं धर्मं स तु विद्वान् युगे-युगे।
आयुः शक्तिं च मर्त्यानां युगावस्थामवेक्ष्य च।
विव्यास वेदान् यस्माद् स तस्माद् व्यास इति स्मृतः।

"श्रीव्यासपाराशर्य ने युग-युग में धर्म को एक पादक्रम से क्षीण होते हुये देखा और मनुष्यों की आयु-शक्ति तथा हीनयुगावस्था को देखकर वेदों का विभाग किया, इसलिये वे 'व्यास' कहलाये।"

व्यास जी अपने पुत्रों सहित पांच शिष्यों को पंचमवेद महाभारत (इतिहासपुराण) सहित वेद पढ़ाये—

वेदानध्यापयामास महाभारतपंचमान्।
समन्तुं जैमिनिं पैलं शुकं चैव स्वमात्मजम्।
प्रभुर्वरिष्ठो वरदो वैशम्पायनमेव च।
संहितास्तैः पृथक्त्वेन भारतस्य प्रकाशिताः।

(महा० 63 । 87 । 90)

"व्यासजी ने महाभारतसहित वेदों का अध्ययन सुमन्तु, जैमिनि पैल वैशम्पायन और शुकदेव को करवाया। इन शिष्यों ने महाभारत की पृथक्-पृथक् संहितायें प्रकाशित कीं।

वेदशाखाप्रवर्तन के पश्चात् परन्तु भारतीसंहिता लिखने से पूर्व व्यास जी ने एक पुराणसंहिता बनाई—

आख्यानैश्चाप्युपाख्यानैर्गाथाभिः कल्पशुद्धिभिः।
पुराणसंहितां चक्रे पुराणार्थविशारदः।

"पुराणार्थविशारद मुनिव्यास ने आख्यान, उपाख्यान, गाथा और कल्प-शुद्धिसहित एक पुराणसंहिता की रचना की।"

श्रीव्यास की पुराणसंहिता में चारसहस्रश्लोक थे—

सर्वास्ता हि चतुष्पादाः सर्वाचैकार्थे वाचिकाः ।
चतुः साहस्रिका सर्वाः ॥"

(वायुपुराणे)

"व्यासपुराणसंहिता में चार पाद और 4000 श्लोक मात्र थे।"

उन पादों के नाम थे—

(1) प्रक्रियापाद (2) उपोद्घातपाद (3) अनुपङ्गपाद (4) उप-संहारपाद ।

इस समय वायुपुराण और ब्रह्माण्डपुराण का विभाग भी इसी प्रकार का है ।

आजकल अष्टादश महापुराणों में लगभग चारलाख श्लोक उपलब्ध हैं। इसका बड़ा रहस्य है यद्यपि पुराणों में तो पुरातनपुराणों की श्लोकसंख्या सौ करोड़ श्लोक बतलाई गई है—

पुराणमेकमेवासीदस्मिन् कल्पान्तरे नृप ।
त्रिवर्गसाधनं पुण्यं शतकोटिप्रविस्तरम् ॥

(पद्मपुराण)

'कल्पान्तर में एक ही पुराण था जिसमें शतकोटि (सौ करोड़) श्लोक थे।'

तथ्य यह है कि पाराशर्य व्यास से पूर्व इतिहासपुराणों का विशाल वाङ्-मय विद्यमान था, जिसमें निश्चयपूर्वक करोंड़ों श्लोक थे। व्यासजी ने पुरातनवाङ्मय का मन्थन करके एकपुराण और एक इतिहास (महाभारत) लिखा। पुरातन शतशः इतिहासपुराणों की विपुलसामग्री का उपयोग करके व्यासजी के शिष्यप्रशिष्यों ने पुराणवाङमय का उपबृंहण किया। यह तथ्य है। इसका ऐतिहासिक स्पष्टीकरण आगे होगा।

इतिहासपुराणविद्या में व्यासजी के प्रधानशिष्य श्रीरोमहर्षण थे—

प्रख्यातो व्यासशिष्योऽभूत् सूतो वै रोमहर्षणः ।
पुराणसंहितां तस्मै ददौ व्यासो महामुनिः ।

"व्यास जी के प्रख्यातशिष्य रोमहर्षणसूत हुये, जिनको व्यास ने पुराण संहिता का अध्ययन कराया।"

वेदव्यास ने पुराणनिर्माण महाभारतरचना से पूर्व; वेदविभाग करने के अनन्तर किया था। इस तथ्य का समर्थन वलदेव द्वारा रोमहर्षण के वधकाण्ड से भी होता है। वलदेव तीर्थयात्रा उस समय कर रहे थे जवकि महाभारत युद्ध कुरुक्षेत्र में हो रहा था, तव रोमहर्षण नैमिपारण्य में ऋषियों को पुराण सुना रहे थे। शौनक कहते हैं—

पुराणमखिलं तात पिता तेऽधीतवान् पुरा।
क्वचित् त्वमपि तत् सर्वमधीषे लौमहर्षणे।
पुराणे हि कथाः दिव्या आदिवंशाश्च धीमताम्।
कथ्यन्ते ये पुरास्माभिः श्रुतपूर्वाः पितुस्तव॥

(आदिपर्व 5।2-3)

"हे उग्रश्रवा जी! आपके पिता रोमहर्षण ने समस्त पुराणों का अध्ययन किया था, क्या आपने उन सब पुराणों का अध्ययन किया है। पुराणों में आदिवंशों की और ऋषियों की दिव्यकथायें वर्णित है जो पहिले आपके पिता ने हमको सुनाई थीं।

पद्मपुराण में व्यासशिष्य रोमहर्षण का वृतान्त इस प्रकार मिलता है—

ब्राह्मं पाद्मं वैष्णवं च कौर्मं मात्स्यं च वामनम्।
वाराहं ब्रह्मवैवर्तं नारदीयं भविष्यकम्।
आग्नेयमर्द्धं वै सुताच्छुश्रुवुर्लोमहर्षणात्।
एतानि तु पुराणानि द्वापरान्ते श्रुतानि हि।
शौनकाद्यैर्मुनिवरै यज्ञारम्भात् पुरैव हि।
यदा तु तीर्थयात्रायां बलदेवः समागतः।
नैमिषं मिश्रिकं नाम समाहूतो मुनीश्वरैः।
तत्र सूतं समासीनं दृष्ट्वा त्वध्यासनोपरि।
चुक्षुभे भगवान् रामः पर्वणीव महोदधिः।
मुद्गोदमंकरो रामः प्राहरल्लोमहर्षणम्।

"शौनकादि मुनियों ने नैमिषारण्य में रोमहर्षणसूत से ब्रह्मपुराण, विष्णु पु० कूर्मपुराण मत्स्यपु०, वामनपु०, वाराह पु० ब्रह्मवैपु० नारदपु०, भविष्य पुराण और आधा अग्निपु० सुना। जब मुनियों द्वारा समाहूत बलदेव नैमिषारण्य में आये तो उन्होंने उच्चासन पर विराजमान सूतजी को पुराण सुनाते हुये देखा। तब मूर्ख बनकर दर्प से क्रुद्ध बलराम ने सूत का वध कर डाला।"

इस कृत्य को देखकर शौनक को घोर दुःख हुआ। उन्होंने कहा बलभद्र! तुमने हमारे गुरु का वध करके घोर अनर्थ किया है। बलराम ने कहा यह शूद्र जातीय सूत ब्राह्मणों को पढ़ाये यह उचित नहीं है, इसलिये इस पापकार्य के कारण मैंने इसका वध किया है। शौनक ऋषि ने कहा बलराम! नीचजातीय पुरुष से भी उत्तमविद्या का अध्ययन कर लेना चाहिये, यह धर्मशास्त्रकारों ने कहा है। पुनः रोमहर्षण तो—ब्राह्मणतुल्य ऋषि और हमारे गुरु थे।"

यह सुनकर बलराम को अपने कुकर्म पर पश्चात् हुआ और उन्होंने शौनक ऋषि से निवेदन किया भगवन्! इस रोमहर्षण का पुत्र उग्रश्रवा इससे भी अधिक पुराणविशेषज्ञ है, मैं उसको आपके पास लाये देता हूं। उससे आप पुराणविद्या का अध्ययन कीजिये।

शेषपुराणों का प्रवचन रोमहर्षणपुत्र उग्रश्रवासौति ने किया।

वायुपुराण के अनुसार रोमहर्षण सूत के छः पौराणिक शिष्य थे, जिन्होंने पृथक-पृथक पुराणसंहितायें प्रकाशित कीं। इस शिष्यपरम्परा का विवरण इस प्रकार है—

षट्शः कृत्वा मयाप्युक्तं पुराणमृषिसत्तमाः।
आत्रेयः सुमतिर्धीमान् काश्यपो ह्यकृतव्रणः।
भारद्वाजो ऽग्निवर्चाश्च वशिष्ठो मित्रयुश्चयः।
सावर्णिः सौमदत्तिस्तु सुशर्मा शांशपायनः।
एते शिष्या मम ब्रह्मन् पुराणेषु दृढव्रताः।
त्रिभिस्तत्र कृतास्तिस्रः संहिताः पुनरेव हि।
काश्यपः संहिताकर्ता सावर्णिः शांशपायनः

मामिका च चतुर्थी स्यात् सा चैषा पूर्वसंहिता ।
सर्वास्ता हि चतुष्पादाः सर्वाश्चैकार्थवाचिका ।
पाठान्तरे पृथग्भूता वेदशाखा यथा तथा ।
चतुःसाहस्रिकाः सर्वाः शांशपायनिकामृते ।
लोमहर्षणिका मूलास्ताः काश्यपिकाः पराः ।
सार्वाणिकास्तृतीयास्ततः यजुर्वाक्यार्थमण्डिताः ।
शांशपयानिकाश्चान्या नोदनार्थविभूपिताः ।

(वायुपुराण 61।55-61)

"ऋषिसत्तमों ! मैंने भी पुराणप्रवचन छः प्रकार से अर्थात् मेरे छः शिष्यों ने प्रवचन किया है वे छः शिष्य हैं...

(1) आत्रेय सुमति
(2) काश्यप अकृतव्रण
(3) भारद्वाज अग्निवर्चा
(4) वाशिष्ठ मित्रयु
(5) सौमदत्ति सार्वणि
(6) शांशपायन सुशर्मा

उपर्युक्त तीन शिष्यों ने तीन संहितायें बनाई...काश्यपसंहिता, सार्वणि संहिता और शांशपायनसंहिता, चतुर्थी मूलभूता लोमहर्षणकृत पुराणसंहिता ये सभी पुराणसंहितायें चारपादों वाली और एक ही अर्थ का वर्णन करने वाली थीं। केवल इनके पाठान्तर पृथग्भूत थे, जिस प्रकार वेदों की शाखा हैं,। सभी पुराणसंहिताओं में चारसहस्रश्लोक थे, केवल शांशपायन संहिता को छोड़कर।

(द्रष्टव्यः पुराणावतरणं श्रीमधुसूदनओझाकृत)

काश्यपीयपुराणसंहिता का निर्देश चान्द्रव्याकरण तथा सरस्वतीकंठाभरण की हृदयहारिणीवृत्ति में मिलता है। अतः भोजराज (12 शती) के समय तक उक्त संहिता प्राप्य थी।

उग्रश्रवासौति—रोमहर्षणसूत का पुत्र उग्रश्रवासौति अपने पिता से भी अधिक इतिहासपुराणों का ज्ञाता था। श्रीउग्रश्रवासौति ने कुलपतिशौनक को उनके द्वादशवर्षीय दीर्घसत्र में महाभारत की कथा और हरिवंशपुराण सुनाये। लिखा है—

"लोमहर्षणपुत्रः उग्रश्रवाः सौतिः पौराणिको नैमिषारण्ये शौनकस्य कुलपतेर्द्वादशवार्षिके सत्रे सुखासीनानभ्यगच्छत् ब्रह्मर्षीन् संशितव्रतान्।
विनयावनतो भूत्वा कदाचित् सूतनन्दनः।

(आदिपर्व 1-1-2)

'श्रीलोमहर्षण का पुत्र उग्रश्रवासौति पौराणिकविद्वान् नौमिषारण्य में कुलपतिशौनक के द्वादशवर्षीयदीर्घसत्र में आया। वह विनयावनत होकर सूतनन्दन सुखपूर्वक आसीन कठोरव्रत वाले ऋषियों के पास गया।"

वहाँ पर कुलपतिशौनक की प्रेरणा पर उग्रश्रवासौति ने महापुराणों और महाभारत की कथा ऋषियों को सुनाई—

यत्तु शौनक सत्रे ते भारतमाख्यानमुत्तमम्
कथितं विस्तारार्थं च यशो वीर्यं महीक्षिताम्॥

(आदिपर्व)

नैमिषारण्ये कुलपतिः शौनकस्तु महामुनिः।
सौतिं पप्रच्छ धर्मात्मा सर्वशास्त्रविशारदः।

(1।1।4)

कुलपतिशौनक का दीर्घसत्र और पुराणश्रवणकाल—कुलपति शौनक नामक या तो अनेक ऋषि हुये अथवा शौनकऋषि दीर्घजीवी थे, जिन्होंने अनेक सत्र किये। यदि शौनकऋषि एक ही थे तो इनकी आयु या वयः 300 वर्ष से अधिक होना चाहिए। तपस्वी ऋषियों के आयु 300 वर्ष या अधिक होना असम्भव नहीं है। पण्डित गिरधरशर्माचतुर्वेदी कलियुग में 300 वर्ष की आयु असंभव मानते हैं। ऐसा मानना अयुक्त है प्रथम, युगावस्था या काल गति का प्रधानकारण राजा होता है। चतुर्युगों की व्यवस्था धर्म के ऊपर आश्रित थी, इसीलिये प्रथमयुग को सत्ययुग, कृतयुग अथवा धर्मयुग कहा

जाता था। अतः युगों में धर्म के अतिरिक्त और कोई विशेष बात नहीं थी। योगबल अथवा रसायनसेवन से मनुष्य त्रिकाल में दीर्घजीवी हो सकता है। देवयुग में देवगण रसायनसेवन से ही दीर्घजीवी हुये थे। और ऋषि योग या तपोबल से। इतिहास में प्रसिद्ध है कि रसायनसेवन से कलियुग में नागार्जुन सिद्धयोगी 600 वर्ष तक जीवित रहा।

श्रीगिरधरचतुर्वेदीजी पूर्वयुगों में ऋषियों की आयु लाखों करोड़ों वर्ष की मानते हैं फिर शौनक जो द्वापर के अन्त में हुये, उनकी आयु 300 वर्ष क्यों नहीं हो सकती (द्रष्टव्य पातंजलमहाभाष्य में गिरधरशर्मा की भूमिका और युधिष्ठिरमीमांसक का संस्कृतव्याकरणशास्त्र का इतिहास प्रथमभाग)

कुलपतिशौनक का अन्तिम दीर्घसत्र, जिसमें उग्रश्रवासौति ने पुराणों का संकलन किया, भारतयुद्ध के लगभग 300 वर्ष पश्चात् हुआ। यह समय पुराणों के प्रमाणों से ही इस प्रकार निकलता है... पुराणों के मगध, कुरुवंश और अयोध्या के राजाओं की वंशावली और राज्यकाल दिया गया है वह इस प्रकार है

मगध वंश	राज्यकाल	कौरव वंश	ऐक्ष्वाक वंश
(1) सोमाधि	=58 वर्ष,	शतानीक	वृहत्क्षत्र
(2) श्रुतश्रवा	=64 वर्ष,	सहस्रानीक	उरुक्षय
(3) अयुतायु	=36 वर्ष	अश्वमेध दत्त	वत्सव्यूह
(4) निरमित्र	=40 वर्ष		प्रतिव्योम
(5) सुक्षत्र	=56 वर्ष		
(6) वृहत्कर्मा	=23 वर्ष		
(7) सेनाजित	=23 वर्ष	अधिसीमकृष्ण	दिवाकर
कुल	=300 वर्ष		

वायुपुराण, मत्स्यपुराण इत्यादि प्रधानपुराणों में लिखा हुआ है कि जब मगध में राजा सेनाजित् के राज्यकाल का 53वां वर्ष चल रहा था तब

कुलपतिशौनक का दीर्घसत्र प्रारम्भ हुआ, उसी समय हस्तिनापुर में अधिसीम कृष्ण और अयोध्या में दिवाकर राज्य कर रहे थे। प्रमाण द्रष्टव्य है...

अधिसीमकृष्णो धर्मात्मा सांप्रतोऽयं महायशाः।
यस्मिन् प्रशासति महीं युष्माभिरिदमाहृतम् ॥
दुरापं दीर्घसत्रं वै त्रीणि वर्षाणि दुश्चरम्।
वर्षद्वयं कुरुक्षेत्रे दृषद्वत्यां द्विजोत्तमाः ॥

वायु पु॰ 99।258-59

अतः कलिसम्वत् 300 अथवा विक्रम से 2700 वर्ष पूर्व शौनक ऋषि दीर्घसत्र कर रहे थे और उसी समय वर्तमान पुराणों का आदिसंस्करण उग्रश्रवासौति ने लोक में प्रकाशित किया, जैसा कि पुराणों में दृढ़शब्दों में प्रतिपादित किया है, अतः आधुनिक लेखकों की इन कल्पनाओं में कोई सार नहीं कि पुराण विक्रम की तीसरी या चौथी शताब्दी में संकलित किये गये। यह सत्य है कि पुराणों में उत्तरकाल में बहुत प्रक्षेप होता रहा और उनके अनेक पाठान्तर निर्मित किये गये, लेकिन मूल महापुराण और हरिवंशपुराण अधिसीमकृष्ण के राज्यकाल 2700 वि. पू. में ही संकलित हुये, यद्यपि उनकी सामग्री रोमहर्षण, उनके शांशपायनादि शिष्यों ने बहुत पूर्व प्रस्तुत कर दी थी, तथा इन महापुराणों और महाभरत की मूलसामग्री प्राचीन व्यासों के इतिहासपुराणों (मार्कण्डेय, वाल्मीकि इत्यादि) से संग्रहीत की गई थी। इतिहासपुराणविद्या की प्राचीनता पर पहले ही प्रकाश डाल चुके हैं।

श्री चिन्तामणि वैद्य ने उग्रश्रवासौति का महाभारत संस्करण 2000 वि. पू. में होना लिखा है, वह इतिहासक्रम को विना समझे लिखा गया है।

शौनकदीर्घसत्र का ऐतिहासिकमहत्व—पाराशर्यव्यासकृत वाङ्मय यज्ञ के अनन्तर कुलपतिशौनक के दीर्घसत्र का सर्वाधिक्य ऐतिहासिक महत्व है। आजकल की भारतीय इतिहास की पुस्तकों में बौद्ध संगीतियों का बड़े जोर-शोर से वर्णन किया जाता है। ये बौद्ध संगीतियाँ अजातशत्रु के राज्यकाल में, अशोक के राज्यकाल में, और कनिष्क के राज्यकाल में हुई। इन संगी-

तियों में प्रायः 500 या 700 बौद्ध भिक्षु एकत्रित होते थे और बौद्धसाहित्य का संकलन होता था। शौनक के वाङ्मययज्ञ के सम्मुख ये बौद्ध संगीतियाँ उसी प्रकार हैं जिस प्रकार सूर्य के सम्मुख दीपक। परन्तु व्यास या शौनक के वाङ्मययज्ञ का आधुनिक लेखकों की पुस्तकों में कहीं भी वर्णन नहीं मिलेगा, यह घोर विडम्बना है।

कहा जा सकता है कि शौनक अन्तिम महान् मुनि थे, इनकी अध्यक्षता में समस्त वैदिकवाङ्मय और धर्मशास्त्र, और इतिहासपुराण का संकलन हुआ।

शौनकऋषि वेदों के स्वयं प्रकाण्डपण्डित थे। उनके विषय में लिखा है—

> योऽसौ दिव्याः कथा वेद देवतासुरसंश्रिताः।
> मनुष्योरगगन्धर्वकथा वेद च सर्वशः।
> स चाप्यस्मिन् मखे सौते विद्वान् कुलपतिर्द्विज।
> दक्षो धृतव्रतो धीमान् शास्त्रे चारण्यके गुरुः॥

(महाभारत 1।5-6)

"कुलमतिशौनकऋषि देवता, असुर, मनुष्य, नागों और गन्धर्वों की दिव्य कथायें जानते हैं। हे सौते! वे कुलपति ब्राह्मण इस यज्ञ में दक्ष, धृतव्रत विद्वान्, शास्त्रविद्, और आरण्यक में तो गुरु ही है।"

महाभारत में शौनक को 'सर्वशास्त्रविशारद' कहा गया है। वे सभी शास्त्रों में निष्णात पण्डित थे। शौनक ऋषि के निम्नलिखित वैदिकग्रन्थ प्रकाशित हो चुके हैं—

(1) बृहद्देवता।
(2) ऐतरेयारण्यक।
(3) कल्पसूत्र।
(4) ऋक्प्रातिशाख्य।
(5) ऋक्सर्वानुक्रमणी।
(6) आथर्वणचतुरध्यायी।
(7) ऋग्विधान।
(8) चरणव्यूह।

ऐतरेयारण्यक का पंचमाध्याय शौनकरचित है और चतुर्थाध्याय उनके शिष्य आश्वलायनकृत है। उक्त श्लोक में इसीलिये शौनक को आरण्यक में गुरु बतलाया गया है।

गुरु शौनक की इतिहासपुराणविद्या में अत्यधिक्य रुचि थी। बृहद्देवता से सिद्ध होता है कि श्रीशौनक दैत्यों असुरों, नागों, मनुष्यों और गन्धर्वों के इतिहास के विशेषज्ञ थे। स्वयं इतिहास के महान् पण्डित होते हुये भी श्रीशौनक ने इतिहासविद्या के संकलन का कार्यभार दीर्घसत्र में उग्रश्रवासौति को समर्पित किया। अतः इसी दीर्घसत्र में सौति ने महाभारत, हरिवंश और पुराणों का संकलन किया और 88000 ऋषियों को सुनाया। इस सत्र में भारतवर्ष के सभी ऋषिमुनि विद्वान् एकत्रित हुये। इस दीर्घसत्र में शौनक के साथ आश्वलायन, व्याडि, शाकल्य. वेदमित्र, शाकपूणि, पिंगल, पाणिनि, कात्यायन, बौधायन आपस्तम्ब, उपवर्ष, इत्यादि आचार्यों के विद्यमान रहने की पूरी सम्भावना है, क्योंकि ये सभी आचार्य शौनक के समकालीन थे और अनेकों ने अपने अपने शास्त्रों का प्रवचन सम्भवतः दीर्घसत्र में ही किया था। स्वयं शौनक ने ऋक्प्रातिशाख्य का प्रवचन दीर्घसत्र में किया था—

शौनको गृहपतिर्वै नैमिषीयैस्तु दीक्षितैः।
दीक्षासु चोदितः प्राह सत्रे तु द्वादशाहिके॥

(ऋक्प्रातिशाख्य की विष्णुमित्रकृतटीका)

"द्वादशाहसत्र में दीक्षित मुनियों की प्रेरणा से शौनक ने ऋक्पार्षदशास्त्र का निर्माण किया।"

कुलपतिशौनक का पुराणों से विशेष सम्बन्ध होने के कारण यह प्रासङ्गिक वर्णन किया गया है।

एक तथ्य और ध्यातव्य है कि दीर्घसत्र के पश्चात् ऋषियों का युग समाप्त हो गया था जैसा कि यास्क ने निरुक्त में संकेत किया है—

मनुष्या वा ऋषिषूत्क्रामत्सु देवानब्रुवन्।
को न ऋषिर्भविष्यतीति। तेभ्य एते तर्कमृषिं प्रायच्छन्।"

"ऋषियों को उत्क्रमण करते हुये देखकर मनुष्य देवों से बोले कि हमारा ऋषि कौन होगा। तब देवों ने मनुष्यों को तर्क रूपी ऋषि दिया।"

तृतीयअध्याय

रामायण

चौवीसवें व्यास वाल्मीकि के सम्बन्ध में प्रथमाध्याय में लिखा जा चुका है कि उनका मूलनाम ऋक्ष था, वे वैदिकऋषि थे, जिन्होंने महाभारतकाल से लगभग 2000 वर्ष पूर्व आदिकाव्य रामायण की रचना की।

ऋषि वाल्मीकि के सम्बन्ध में अनेक प्रकार की कथायें प्रचलित हैं। कुछ लोगों का कहना है कि वाल्मीकि प्रारम्भिक जीवन में लुटेरे या डाकू थे। आध्यात्मरामायण के अनुसार उस समय वाल्मीकि का नाम रत्नाकर था। वे यात्रियों को लूटा करते थे। सप्तर्षियों या नारदमुनि के उपदेश से उन्होंने दस्युता का परित्याग किया। कुछ लोग मानते हैं कि वे जाति से चाण्डाल थे। इसी आधार पर 'हरिजन' वाल्मीकि को अपना पूर्वज मानते हैं। परन्तु ये बातें निराधार प्रतीत होती हैं। इतिहासपुराण के अनुसार वाल्मीकि प्रचेता (वरुण) के वंश में उत्पन्न हुये थे और च्यवन भार्गव के पुत्र थे—

प्रसिद्ध बौद्धकवि अश्वघोष ने लिखा है कि जिस पद्य का निर्माण च्यवन ऋषि न कर सके उसका निर्माण उनके पुत्र ने किया—

वाल्मीकिरादौ च ससर्ज पद्यं
जग्रन्थ यन्न च्यवनो महर्षिः

(बुद्धचरित 1।43)

महाभारतवनपर्व (122।3) में लिखा है कि च्यवन तप करते हुये 'वाल्मीक' हो गया—

स वाल्मीकिरभवदृषिः'

च्यवन वल्मीकि का पुत्र वाल्मीकि कहलाया। मूल नाम उसका 'ऋक्ष' था।

महाभारत में रामायण और वाल्मीकि का स्पष्टतः अनेक बार उल्लेख हुआ है। रामायण का एक श्लोक भी द्रोणपर्व में उद्धृत है।

अपि चायं पुरा गीतः श्लोको वाल्मीकिना भुवि।
"न हन्तव्याः स्त्रिय इति यद् ब्रवीषि प्लवङ्गम।
पीडाकरणममित्राणां यच्च कर्त्तव्यमेव तत्।'

यह श्लोक रामायण युद्धकाण्ड में मिलता है जहां इन्द्रजित् (मेघनाथ) हनुमान् से कहता है—हे वानर ! तुम जो यह कहते हो कि स्त्री का वध नहीं करना चाहिए, सो तुम्हारा कहना अयुक्त है। क्योंकि शत्रु को दुःख पहुचाने वाला जो भी कार्य हो वह अवश्य करना चाहिए।"

पुनः वाल्मीकि को भार्गव नाम से स्मरण किया है—

श्लोकश्चायं पुरा गीतो भार्गवेण महात्मना।
(शान्तिपर्व 56।40)

महाभारत में रामोपाख्यान विस्तारपूर्वक मिलता है। रामायण का भी नामतः उल्लेख है...

रामायणेऽति विख्यातः श्रीमान् वानरपुङ्गवः।
(वनपर्व 149।11)

विद्वानों ने अनुसंधान करके सिद्ध किया है कि महाभारतान्तर्गत नलोपाख्यान के अनेक श्लोक वाल्मीकीय रामायण सुन्दरकाण्ड के अनेक श्लोकों से साम्य रखते हैं। अतः रामायण महाभारत से प्राचीनतम ग्रन्थ है। कृष्ण द्वैपायन ने महाभारत में रामायण का पर्याप्त अनुकरण किया है। श्रीरामशंकर भट्टाचार्य (इतिहासपुराण अनुशीलन) के मतानुसार श्रीमद्भगवद् गीता में व्यास के नाम से वाल्मीकि का ही उल्लेख किया गया है—

'मुनीनामहं व्यासो कवीनामुशना कविः।"

उपर्युक्त श्लोक में 'मैं मुनियों में व्यास हूं' इसका तात्पर्य या तो सामान्य 'व्यास' पदवी से है अथवा वाल्मीकि से है, स्वयं पाराशर्यव्यास अपना उल्लेख इस प्रकार गीता में न करते।

चतुर्युगीगणना और पर्याय (परिवर्त, युग) गणना से वाल्मीकि का समय निर्धारण करने में कुछ कठिनाई आती है। क्योंकि परिवर्तयुग का परिमाण

360 वर्ष निश्चित है और द्वापर युग का परिणाम 2000 वर्ष अथवा सन्धिकाल सहित=2400 वर्ष। परन्तु वाल्मीकि और राम को 24वे परिवर्त के प्रारम्भ में भी हुआ माना जाय तो वर्षगणना इस प्रकार निश्चित होती है—

चौबीसवें परिवर्त में		व्यास-वाल्मीकि	=	360 वर्ष
पच्चीसवें	" "	शक्ति	=	360 "
छब्बीसवें	" "	पराशर	=	360 "
सत्ताईसवें	" "	जातूकर्ण्य		360 "
अट्ठाइसवें	" "	कृष्णद्वैपायन		360 "
			कुलयोग—	1800 वर्ष

यदि द्वापर को न्यूनतम 2000 वर्ष (सन्धिकाल घटाकर) का माना जाय तो परिवर्तयुगगणना से कलि 1800 वर्ष पूर्व चतुर्युगीगणना का ऐतिहासिक अस्तित्व नहीं था, युगों के नाम धार्मिक भावना पर आश्रित थे। इनको ऐतिहासिकता महाभारतयुग में ही प्राप्त हुई। पुराणों में परिवर्तों के अनुसार ऐतिहासिकघटनाओं क्रम रखा गया है। अतः द्वापर को 2000 का मानने पर वाल्मीकि का समय तेईसवें परिवर्तन में निश्चित होता है। यह थोड़ी सी भूल है अथवा अधिक अनुसंधान करने पर इसका परिमार्जन भविष्य में सम्भव होगा। अतः वाल्मीकि कृष्णद्वैपायन से 1800 या 2000 वर्ष पूर्व हुये, इसमें कोई सन्देह नहीं।

पाश्चात्यलेखक कीथ और उसके अन्धानुयायी भारतीय लेखक वाल्मीकि रामायण का रचना काल 200—400 ई० पू० मानते हैं। कुछ तो 400 ई० में वाल्मीकिरामायण की रचना मानते हैं, जब कि गुप्तवंश का भारत में अन्त हो गया था। और हूणों का आक्रमण हो रहा था यह अज्ञान की घोर पराकाष्ठा है। उस समय कालिदास को दिवंगत हुये भी पांच सौ वर्ष व्यतीत हो चुके थे। कालिदास के पांच सौ वर्ष पश्चात् वाल्मीकि द्वारा रामायण का रचनाकाल मानना न जाने किस बुद्धि का कार्य है, यह सोचने में भी हँसी

आती है, लेकिन ऐसे विद्वान् (1) हुये हैं जो ऐसा मानते थे—

"The modern work Ramayana can not be dated earlier than 450 A. D. (प्रबोधचन्द्रसेन—Ancient Indian chronology p. IX) पाश्चात्यों का एक और भक्त लिखता है—The Ramayana is therefore regarded as much later poem than the Mahābharata (prehistoric' and ancient Hindu India p. 47, राखलदास बनर्जी)

इनका गुरु कीथ रामायण को 200 से 400 वि. पू. की रचना मानता था—'Valmiki and those who Improved on him, probaly in the period 400—200 B. C. (History of sanskrit lit p. 43.) गुरु गुड़ हो गये लेकिन चेला चीनी बन गये। पाश्चात्य लेखक तो 400 ई. पू में रामायण की रचना मानते थे लेकिन उनके शिष्य 450 ई. में यानी कीथ के मत से भी 850 वर्ष पश्चात् उसका रचना काल मानते हैं। इन ऊटपटांग मतों पर टिप्पणी करने की आवश्यकता नहीं है। लेकिन हमारे विश्व विद्यालयों में यही सब कुछ पढ़ाया जाता है यह विडम्वना की पराकाष्ठा है।

ये लेखक भाषा के आधार पर भांति-भांति की कल्पनायें करते हैं, लेकिन रामायणसदृश भाषा में गाथायें ब्राह्मणग्रन्थों में मिलती हैं, विन्टरनित्स को भी लिखना पड़ा—'Gathas, verses which both in language and mater are entrily differrent from the vedic verses and approach the epic" (some problems of Ind Lit p. 12) अर्थात् 'गाथायें छन्दोवद्ध रचनायें, जो भाषा और छन्द में वैदिक श्लोकों से सर्वथा भिन्न हैं, महाकाव्य के सदृश हैं।"

वास्तव में पाश्चात्यलेखकों ने भाषा के आधार पर वेदकाल, महाकाव्य काल इत्यादि का जो निर्धारण किया है, वह सर्वथा काल्पनिक, मनघढ़न्त और इतिहासबुद्धि से शून्य है।

रामायण की प्राचीनता महाभारत से ही नहीं पाणिनिव्याकरण से भी सिद्ध है। पाणिनि के सूत्रों और गणपाठों में शूर्पणखा, रावणि, विभीषण,

कैंकसी इत्यादि पदों की सिद्धि की है। हरिवंशपुराण में रामायण के आधार पर नाटक खेलने का उल्लेख है। भास ने अनेक नाटक रामायण के कथानकों पर लिखे, इसके पश्चात् कालिदास ने रघुवंश में रामकथा लिखी हैं उसमें वाल्मीकि द्वारा लवकुश को रामायण पढ़ाये जाने का उल्लेख है—

सखा दशरथस्यापि जनकस्य च मन्त्रकृत्।
संचस्कारोभयप्रीत्या मैथिलेयौ यथाविधि।।
वृत्तं रामस्य वाल्मीकेः कृतिस्तौ किन्नरस्वरौ।

(रघुवंश)

अतः उत्तरकाण्ड की कथायें भी कालिदास को ज्ञात थीं, भवभूति ने तो उत्तरकाण्ड की कथा के आधार पर 'उत्तररामचरित' नाटक ही लिखा।

अतः कालिदास भास, भवभूति, अश्वघोष जैसे महाकवि वाल्मीकि और उनकी रामायण की यशःप्रशस्ति का गान करें तब इन पाश्चात्यों के प्रलापों का क्या महत्त्व है, जो रामायण को भाटों की रचना या गीत मानते हैं।

भला व्यास जैसे ऋषि वाल्मीकि को प्रमाण मानें तब वाल्मीकि की महिमा और पूजनीयता समझी जा सकती है।

रामायण के सम्बन्ध में आधुनिकलेखकों ने अनेक शंकायें उठाई हैं और अनेक समस्यायें खड़ी कर दी गई हैं। इन लेखकों ने वेबर (weber) जेकोबी (Jacobi), श्री चिन्तामणिवैद्य (The Riddle of Ramayana) प्रसिद्ध हैं। इन लेखकों द्वारा उठाई गई अधिकांश शंकायें निरर्थक और निराधार है। फिर भी निदर्शन के रूप में कुछ शंकाओं का समाधान करेंगे। ये शंकाये दो श्रेणियों में विभक्त की जा सकती हैं। वहिरंग और अन्तरंग।

वहिरंग शंकाओं के सम्बन्ध में प्रथम यह विचारणीय है कि इस समय रामायण के तीन पाठान्तर मिलते हैं—दाक्षिणात्य, वंगीय और पश्चिमीपाठ इन तीनों पाठों में पर्याप्त भेद है। इसमें कोई सन्देह नहींकि इन तीनों पाठों का तुलनात्मक अध्ययन ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण होगा।

हमें यह मानने में कोई आपत्ति नहीं कि वाल्मीकि का मूलपाठ निश्चय ही संक्षिप्त रहा होगा। वर्तमान रामायण में 24000 श्लोक, 500 सर्ग और सात काण्ड मिलते हैं। एक प्राचीन बौद्धग्रन्थ महाविभाषा में यह उल्लिखित है कि मूलरामायण में 12000 श्लोक थे। यह सत्य हो सकता है। निश्चयपूर्वक उत्तरकाल में रामायण का पर्याप्त उपबृंहण हुआ है।

वाल्मीकि ने सम्भवतः बारहसहस्रश्लोकों में ही अपना काव्य लिखा था। उत्तरकाल में उसका आकार ठीक द्विगुणित हो गया। ऐसा मानने में हमें कोई आपत्ति नहीं, क्योंकि रामायण की रचना वाल्मीकि ने आज से 7500 वर्ष पूर्व की थी और इसमें प्रक्षेप जोड़कर हस्तक्षेप किया गया इसमें शंका के लिए कोई स्थान नहीं।

बालकाण्ड के अनेक उपाख्यान निश्चय ही उत्तरकाल में जोड़े गये। जैसे ऋष्यशृंगोपाख्यान, विश्वामित्रकथा, शुनःशेप की, वामनावतार की कथा कार्तिकेयउत्पत्तिकथा, गंगावतरण और समुद्र मन्थन की कथा। लेकिन बाल-काण्ड का समस्त भाग प्रक्षेप नहीं है, जैसा कि कुछ लेखक मानते हैं।

यह सत्य है जैसा कि रामायण के गम्भीर अध्ययन से सिद्ध होता है कि राम को मनुष्य के रूप में वाल्मीकि ने चित्रित किया था। राम को विष्णु का अवतार सम्भवत महाभारतयुग में माना गया, यद्यपि अवतारवाद वाल्मीकि को अज्ञात नहीं था। हनुमान् को मरुत्सुत मानने की कल्पना उत्तरकाल की नहीं, वाल्मीकि को भी यह मान्य थी। अतः अवतारवाद वाल्मीकि से पूर्व भी मान्य था जैसा कि ऋग्वेद में भी विष्णु के वामनावतार का उल्लेख है।

कुछ लोग रामकथा का सम्बन्ध वेदों से जोड़ने की चेष्टा करते हैं जैसे 'सीता' शब्द के आधार पर अथवा इन्द्रवृत्रयुद्ध के आधार पर रामरावण युद्ध की कल्पना सिद्ध करते हैं। ये सब निरर्थक और तथ्यहीन कल्पनायें हैं। वेदमन्त्रों से रामकथासम्बन्ध जोड़ना निष्प्रयोजन और तर्कहीन है। रामकथा एक ऐतिहासिक वस्तु है। वेदों से उसका कोई सम्बन्ध नहीं।

कुछ पाश्चात्यलेखक रामायण पर बौद्धप्रभाव सिद्ध करने की चेष्टा करते हैं, इसके समर्थन में रामजाबालिसंवाद का उदाहरण देते है, जहाँ पर उल्लिखित हैं 'बुद्ध को चोर की तरह समझो कि तथागत नास्तिक है।'

यह वाक्य केवल दाक्षिणात्य पाठ में मिलता है और क्षेपक है।

कुछ बौद्धजातकों में रामकथा सम्बन्धी कुछ आख्यान मिलते हैं, जैसे दशरथजातक सामजातक इत्यादि में। पाश्चात्यलेखक मानते हैं कि जातकों में रामकथा का प्राचीन रूप मिलता है। पाश्चात्यों की यह कल्पना उसी प्रकार है, जिस प्रकार जिस कोई कहे कि सूर के गीत भागवतपुराण से प्राचीनतर हैं अथवा व्रज में जो ढोला गाया जाता है जिसमें नल की कथा कही जाती है वह महाभारत के नलोपाख्यान से प्राचीनतर मानी जाय। पाश्चात्य लेखक उल्टी गङ्गा बहाते हैं। क्योंकि बौद्धलेखकों का ब्राह्मणशास्त्रों और संस्कृत से सम्बन्ध छूट गया था, उन्होंने लोककथाओं के आधार पर जातकों में कहानियाँ लिखी हैं, वहाँ पर वासवदत्ता को उदयन की भगिनी और सीता को रावण की पुत्री वताया गया है।, उन बौद्धकथानकों की प्रामाणिकता या ऐतिहासिकता पर कौन विज्ञपुरुष विश्वास करेगा। बुद्ध का समय 1800 वि० पू० है। बौद्धजातक अधिक से अधिक 1000 वि० पू० रचे गये। और रामायण की रचना 5200 वि० पू० हुई अतः विज्ञ पाठक स्वयं सोच सकते हैं कि कौन प्राचीन प्रामाणिक और मूल है।

कुछ पाश्चात्य लेखक (जैसे वेवर) रामायण पर होमर के काव्य इलियड और ओडेसी का प्रभाव वताते हैं। आज इस पर टिप्पणी करना पूर्णतः निरर्थक है, क्योंकि अब इस प्रकार की कल्पनाओं पर कोई विश्वास नहीं करता।

पाश्चात्यलेखकों की बुद्धि का वैभव—

(1) इस अद्भुत खोज से सिद्ध होता हैं कि जहाँ पर राम अरण्यकाण्ड में शूर्पणखा से कहते हैं कि 'लक्ष्मण अविवाहित हैं।' 'जब कि बालकाण्ड में चारों भाइयों के विवाह का वर्णन है।' अतः पाश्चात्यों का निष्कर्ष है कि बालकाण्ड जाली है और लक्ष्मण अविवाहित ही थे।पाश्चात्यों की बुद्धिहीनता इससे सिद्ध होती है। यहाँ पर राम कूटनीतिपूर्ण उपहास में शूर्पणखा से वार्तालाप कर

रहे थे। राम, लक्ष्मण और शूर्पणखा तीनों ही छलपूर्वक बातचीत कर रहे थे, ऐसे अवसर के प्रत्येक शब्द को सत्य मानना मूर्खता है। इसी प्रसङ्ग से समझा जा सकता है कि पाश्चात्यों में किस प्रकार की आलोचनात्मक या अनुसन्धानात्मक बुद्धि थी।

रामायण के इतिहास और भूगोल की कई समस्यायें निश्चय ही उत्तर कालीन क्षेपक है। परन्तु क्षेपक होते भी वह प्राचीन एवं ऐतिहासिक है। लवकुश की कथा सत्य है और वह कालिदास, अश्वघोष और भवभूति को को उसी रूप में ज्ञात थी जिस प्रकार रामायण में हैं। रामायण का सर्व प्रथम गान लवकुश ने राम की राजसभा में किया था, इस तथ्य का वर्णन कालिदास और भवभूति दोनों ने सम्यक् रूप से किया है। रामायण में इक्ष्वाकुवंश की वंशावली का पाठ अत्यन्त विकृत हो गया हैं। यह विकार सहस्रों वर्ष पूर्व आ गया था।, क्योंकि सभी पाठों में यह विकृत मिलती है।

रामायण में राक्षस और वानरजातियों का विस्तृतइतिहास मिलता है जो भारतीय इतिहास का एक अदभुत और अनुपम अध्याय है।

रामायण में भूगोल का वर्णन इतिहास की दृष्टि से अत्यन्त उपादेय हैं। सीतान्वेषण से पूर्व किष्किन्धाकाण्ड में पृथ्वी के भूगोल का विस्तृतभूगोल अनुसन्धान का एक उत्तम क्षेत्र है। सर्वप्रथम लङ्का की समस्या ही अत्यन्त गूढ़ है। वर्तमान सिंहल (Ceylon) प्राचीन लङ्का नहीं हैं। रामायण में राक्षसों के द्वीप का नाम का नाम कहीं भी नहीं मिलता, केवल द्वीप की राजधानी लङ्का का उल्लेख है रामायण में सुन्दरकाण्ड के नामकरण का रहस्य यह प्रतीत होता है कि द्वीप का नाम 'सुन्दद्वीप' था, क्योंकि रावण से पूर्व सुन्दउपसुन्द उस राक्षस द्वीप के अधिपति थे। ताड़का का पति सुन्द राक्षस था। अतः उस द्वीप का नाम सुन्दद्वीप था। प्राचीन काल में काण्ड का नाम भी सुन्दकाण्ड होना चाहिए, क्योंकि प्रायः शेष सभी काण्डों के नाम भौगोलिक स्थानों के नाम पर हैं। सुन्दरता से सुन्दरकाण्ड का कोई सम्बन्ध नहीं है। उत्तरकाल में सुन्दद्वीप की विस्मृति होने से काण्ड को सुन्दरकाण्ड कहने लग गये। वास्तव में सुन्दरकाण्ड में राक्षसद्वीप में घटित घटनाओं का वर्णन है अतः द्वीप का नाम लङ्का नहीं था। यह तो

नगरी या राजधानी का नाम था। लङ्का और सिंहल का पार्थक्य भी प्राचीन वाङ्मय से सिद्ध, है। हिन्दीकवि जायसी तक यह मानते थे-कि सिंहल और लङ्का दो पृथक् पृथक् द्वीप थे। अतः वर्तमान सिंहल को रावण की लङ्का मानना महती भ्रान्ति है अतः रामायण का भूगोल गूढ़ गम्भीर अनुसन्धान का विषय हैं।

भारतवर्ष में ही नहीं विश्व में रामकथा का कितना प्रचार और प्रसार है, यह अब सर्वज्ञाततथ्य है। भारतीय वाङ्मय-काव्य, नाटक, चम्पू,गद्य पद्य सभी कुछ-रामकथा से आपूरित है। पूर्वीद्वीपसमूहों में रामकथा लोकप्रिय है, जावा और वाली द्वीप में राम और अयोध्या उसी प्रकार प्रसिद्ध हैं, जिसप्रकार भारतवर्ष में है रामायण काव्य-उत्तर और दक्षिण भारत का ही नहीं वृहत्तरभारत का भी सेतु है इस सेतु के आधार पर अखण्ड भारतीयसंस्कृति का निर्माण होता हैं। रामकथा के साथ अगस्त्य की महिमा भी सम्बद्ध है। रामावतार से पूर्व अगस्त्य ने दक्षिणभारत और पूर्वीद्वीप समूह में भारतीयसंस्कृति की प्रतिष्ठापना की थी और वहाँ के बर्बरयक्ष राक्षस और वानरों को सुसंस्कृत करके श्रेष्ठमानव (आर्य) बनाया। पुलस्त्य और तृणविन्दु राजर्षि के साथ अगस्त्य ने सदूर पूर्वीद्वीपों की यात्रायें की और उपनिवेश स्थापित किये। अगस्त्य ने वातापि जैसे असुरों का संहार किया और अरण्यों और पर्वतों को समतल करके मानव बस्तियां बसाई।

राम से पूर्व अगस्त्य के कृत्य भारतीय इतिहास के स्वर्ण पृष्ठ हैं। भट्टगुरु के नाम से आज भी पूर्वीद्वीपों में अगस्त्यऋषि की पूजा होती है। अगस्त्य ने राक्षसविजय में राम की भी महती सहायता की। वैष्णवधनुष को अगस्त्य ने ही राम को प्रदान किया। पूर्वीद्वीपसमूहों में अगस्त्य और राम की गाथामें आज भी गाई जाती हैं। रामकथा के सम्बन्ध में ब्रह्मा की यह भविष्यवाणी सत्य सिद्ध हुई—

> यावत्स्थास्यन्ति गिरयः सरितश्च महीतले।
> तावद् रामायणस्य कथा लोकेषु प्रचरिष्यति।

"जबतक इस भूतल पर पर्वत और नदियाँ रहेंगे तबतक संसार में रामायण की कथा का प्रचार रहेगा।

चतुर्थ-अध्याय

महाभारत

(शतसाहस्रीसंहिता)

परमर्षि व्यासकृत शतसाहस्रीसंहिता (महाभारत) पुरातन इतिहास का अक्षयस्रोत एवं विश्वकोश हैं। विष्णुगुप्त कौटिल्य ने इतिहास का जो लक्षण बताया है कि पुराण, इतिवृत, आख्यायिका, उदाहरण, धर्मशास्त्र और अर्थशास्त्र मिलकर इतिहास कहलाते हैं,[1] पूर्णतः महाभारत पर घटित होता है। कभी इस देश में महाभारतसदृश अनेक ऐतिहासिकग्रन्थ थे। व्यास और उनके शिष्यों को उन दिव्यइतिहासों का पूर्ण ज्ञान था तथा महाभारत में इन पुरातन इतिहासग्रन्थों का पूर्ण उपयोग किया गया है। व्यास जी ने उन दिव्य इतिहासग्रन्थों का उल्लेख इस प्रकार किया है—

येषां दिव्यानि कर्माणि विक्रमस्त्याग एव च।
महात्म्यमपि चास्तिक्यं सत्यता शौचमार्जवम्।
विद्वभ्दिः कथ्यते लोके पुराणैः कविसत्तमैः।

(आदिपर्व 1।181)

उन कविसत्तमों—उशना, वाल्मीकि अपान्तरतमा आदि का वर्णन प्रथम अध्याय किया जा चुका है। महाभारत में जो लम्बे-लम्बे आख्यान और इतिहास लिखे हुये मिलते हैं वे व्यासजी ने अपनी कल्पना से नहीं बल्कि प्राचीन रामायणसदृश इतिहासग्रन्थों के आधार पर लिखे थे, इन्हीं इतिहासपुराणों का वैदिकग्रन्थों में पंचमवेद—'इतिहासपुराण' के नाम से बहुशः उल्लेख मिलता है। वे इतिहास पुराण उस समय भी पुस्तकाकार में उपलब्ध थे, केवल कल्पनालोक में नहीं थे, जैसा कि विन्टरनित्स उन्हें ऋषियों की कल्पना मात्र में मानता है' जब

---

(1) "पुराणम्-इतिवृत्तम्, आख्यायिका उदाहरणं धर्मशास्त्रम् अर्थशास्त्रं चेति इतिहासः।" (अर्थशास्त्र अध्याय 5)

वेद पुस्तकरूप में थे तो उस समय इतिहासपुराण पुस्तकरूप में क्यों नहीं हो सकते, अतः यह बुद्धिगम्य तथ्य है कि वेदों की भाँति इतिहासपुराण भी पुस्तकरूप में सदा से रहे हैं।

केवल महाभारतग्रन्थ ही इस समय सच्चा इतिहासपुराण और पंचमवेद है, जैसा कि छान्दोग्योपनिषदादि में पंचमवेद का उल्लेख मिलता है। स्वयं महाभारत में उसको इतिहास, पुराण और पंचमवेद में कहा है—

"वेदानध्यापयामास महाभारतपंचमान् ।"

(महा 1।63।87)

पंचमवेद महाभारतसहित चारों वेदों को व्यासजी ने अपने शिष्यों को पढ़ाया।'

'कार्ष्णं वेदमिमं विद्वान् श्रावयित्वार्थमश्नुते ।'

(1। 268)

'इस 'कार्ष्णवेद' (कृष्णद्वैपायनप्रोक्त)—पंचमवेद को सुनाकर विद्वान् परमार्थ को प्राप्त करता है।'

अतः महाभारत का पंचमवेदत्व सिद्ध है। पुनःमहाभारत को स्थान स्थान पर पुराण भी कहा गया है—

द्वैपायनेन यत् प्रोक्तं पुराणं परमर्षिणा

(आदि० 1।17)

धन्यं यशस्यमायुष्यं पुण्यं वेदैश्च सम्मितम् ।
कृष्णद्वैपायनेनोक्तं पुराणं ब्रह्मवादिना ।

और यह इतिहास तो यह है ही—

जयो नामेतिहासोऽयं श्रोतव्यो विजिगीषुणा ।

(उद्योगपर्व 136।18)

इतिहासोत्तमादस्माज्जायन्ते कविबुद्धयः ।
इतिहासप्रदीपेन मोहावरणघातिना ।

लोकगर्भगृहं कृत्स्नं यथावत् संप्रकाशितम्।

(आदिपर्व)

महाभारतशब्द की व्युत्पत्ति—महर्षि पाणिनि ने 'महाभारत' शब्द की वैयाकरणिक व्युत्पति सिद्ध की है[2]—इसके अनुसार भारत शब्द में महान् शब्द लगाने पर समास शब्द बनता है—महाभारत/टीकाकारों ने इसका अर्थ किया है—'भारता योद्धारो यस्मिन् युद्धे तद् भारतम्' जिस युद्ध को भरतवंशी योद्धा लड़े हों वह 'भारत' कहलाया। क्योंकि यह भरतों का महान् युद्ध था-इसलिये यह 'महाभारत कहलाया। यह तो महाभारत शब्द की एक शाब्दिक व्युत्पति हुई। स्वयं महाभारतअनुक्रमणिकाअध्याय में 'महाभारत की व्युत्पत्ति इस प्रकार दी हुई है—

चतुर्भ्यः सरहस्येभ्यो वेदेभ्यो ह्यधिकं यदा।
तदाप्रभृति लोकेऽस्मिन् महाभारतमुच्यते।
महत्त्वे च गुरुत्वे च ध्रियमाणो यतोऽधिकम्।
महत्त्वाच्च भारवत्त्वाच्च महाभारतमुच्यते।
निरुक्तमस्य यो वेद सर्वपापैः प्रमुच्यते।

(1।1।272-274)

"क्यों कि महत्व में और भार में यह उपनिषदों सहित चारों वेदों से अधिक है, इसलिये लोक में इसे महाभारत कहते हैं। महानता और भार में अधिक होने से इसे महाभारत कहते हैं, जो इसकी इस निरुक्ति को जानता है, वह सब पापों से मुक्त हो जाता है।"

जय, भारत और महाभारत—ग्रन्थ के तीन संस्करण—

महर्षि व्यास ने महाभारत का प्रथम नाम 'जय इतिहास' रखा था—

'जयोनामेतिहासोऽयं श्रोतव्यो विजिगीषुणा।

(उद्योग 0 136।18)

---

(1) महान्व्रीहि-अपराण्हगृष्टि.इष्वासजाबाल-भारभारतहैलहिल रौखप्रवृद्धेषु (अष्टाध्यायी 6।2।38)

जय नामेतिहासोऽयं श्रोतव्यो मोक्षमिच्छता ।

(स्वर्गारोहणपर्व 5।50)

व्यासजी ने महाभारत की रचना सदा परिश्रम करके तीन वर्षों में की—

त्रिभिर्वर्षैः सदोत्थायी कृष्णद्वैपायनो मुनिः ।
महाभारतमाख्यानं कृतवानिदमुत्तमम् ।।

(आदिपर्व 56।32)

महाभारत के अनुसार स्वयं व्यासजी ने ग्रन्थ के दो संस्करण किये प्रथम संस्करण में उपाख्यानों सहित एकलाखश्लोक थे, इसलिये इसको 'शतसाहस्री-संहिता' कहते हैं। विना उपाख्यानों के 24000 श्लोकों की दूसरी संहिता बनाई जिसको केवल 'भारतासंहिता कहा गया

इदं शतसहस्रं तु श्लोकानां पुण्यकर्मणाम् ।
उपाख्यानैः सह ज्ञेयमाद्यं भारतमुत्तमम् ।
चतुर्विंशतिसाहस्रीं चक्रे भारतसंहिताम् ।
उपाख्यानैर्विना तस्माद् भारतं प्रोच्यते बुधैः ।

(1।1।101-102)

आश्वलायनमुनि और उनके गुरुकुलपति शौनक भारतयुद्ध से लगभग 200 वर्ष पश्चात् हुये। ये शौनक वे ही हैं, जिनके दीर्घसत्र में उग्रश्रवासौति ने महाभारत का प्रवचन किया था। शौनक ने अपने गृह्यसूत्र में लिखा है—

'सुमन्तुजैमिनिवैशम्पायन-पैल-सूत्रभाष्यभारतमहाभारतधर्माचार्याः ।'

(स्मृतिचन्द्रिका पृ० 519 पर उद्धृत)

आश्वलायन गृह्यसूत्र में—

सुमन्तुजैमिनिवैशम्पायनपैल-सूत्रभाष्यभारतमहाभारतधर्माचार्या तृप्यन्तु । (पृष्ठ 145) ये सुमन्तु, जैमिनि, वैशम्पायन और पैलमुनि सूत्रग्रन्थ भाष्य, महाभारत भारत के आचार्य थे । स्पष्ट है अपने गुरु से चारों वेदाचार्यों ने भारतसंहिता और महाभारतसंहिता दोनों का ही अध्ययन किया था। यदि व्यासशिष्यों के समय महाभारत (शतसाहस्रीसंहिता) नहीं

होती तो वे महाभारताचार्य कैसे कहला सकते थे। शौनक और आश्वलायन भी व्यास के प्रशिष्य ही थे। भला वे सत्य से क्यों अपरिचित होते। शौनक ऋषि के वाक्यों के सम्मुख कीथ या विण्टरनित्स का क्या मूल्य है यह विज्ञ स्वयं ही सोच सकते हैं।

इस महाभारत में वैशम्पायन के 'चारकश्लोक' और उग्रश्रवासौति के उपोद्घात जुड़कर ही वर्तमानमहाभारत का रूप बना, इसलिये महाभारत में दो मङ्गलाचरण मिलते हैं—सौतिकृत मङ्गलाचरण उत्तरकालीन है—

नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम्।
देवीं सरस्वतीं व्यासं ततो जयमुदीरयेत्।

"नारायण और नर को नमस्कार करके पुनः देवीसरस्वती और व्यास को नमस्कार करके जय इतिहास का पाठ करना चाहिये।"

आगे इसी प्रथमाध्याय में कृष्णद्वैपायनकृत प्राचीनमंगलाचरण मिलता है—

आद्यं पुरुषमीशानं पुरुहूतं पुरुष्टुतम्।
ऋतमेकाक्षरं ब्रह्म व्यक्ताव्यक्तं सनातनम्।
मंगल्यं मंगलं विष्णुं वरेण्यमनघं शुचिम्।
नमस्कृत्य हृषीकेशं चराचरगुरुं हरिम्।

वेदव्यासमंगलाचरण में प्रायः सभी शब्दों में वैदिकशब्दों की झलक है—पुरुष, ईशान, पुरुहूत, पुरुष्टुत, विष्णु हृषीकेश—इत्यादि सभी पद ईश्वर के लिये वेद में आये हैं। अतः इस मंगलाचरण की प्राचीनता स्वतः सिद्ध है।

ऋषि कृष्णद्वैपायन ने संक्षेप (भारत) और विस्तार (महाभारत)-दोनों प्रकार से ही इतिहास का निर्माण किया—

विस्तीर्यैतन्महज्ज्ञानमृषिः संक्षिप्य चाब्रवीत्।
इष्टं हि विदुषां लोके समासव्यासधारणम्।

"ऋषि ने संक्षेप और विस्तार-दोनों ही प्रकार इस ज्ञान को कहा है,

क्योंकि लोक में मनीषीगण को समास और व्यास (विस्तृत) प्रवचन दोनों ही इष्ट हैं।

प्राचीनकाल में भी महाभारत का प्रारम्भ तीनप्रकार से माना जाता था—

मन्वादि भारतं केचिदास्तीकादि तथा परे।
तथोपरिचराद्यन्ये विप्राः सम्यगधीयते।

"कुछ विद्वान्, 'नारायणं नमस्कृत्य' से महाभारत का प्रारम्भ करते हैं, कुछ लोग आस्तीकपर्व से और कुछ विद्वान् उपरिचराख्यान से महाभारत का प्रारम्भ मानते हैं।"

ऋषि कृष्णद्वैपायनव्यास ने महाभारत की रचना उस समय की, जब धृतराष्ट्र, पाण्डु और विदुर (और सम्भवतः पाण्डवों का भी) का देहान्त हो गया था, उसके शीघ्र पश्चात् ही ऋषि ने ग्रन्था रचा—

उत्पाद्य धृतराष्ट्रं च पाण्डुं विदुरमेव च।
तेषु जातेषु वृद्धेषु गतेषु परमां गतिम्।
अब्रवीद् भारतं लोके मानुषेऽस्मिन् महानृषिः।

(1।194)

यदि व्यासजी ने महाभारत की रचना युधिष्ठिर के राज्यकाल में ही की तो स्वर्गरोहणपर्व पाण्डवों की मृत्यु के पश्चात् ही महाभारत में जोड़ा होगा—व्यास ने या वैशम्पायन ने। उक्तप्रमाण से तो यही सिद्ध होता है कि महाभारत की रचना युधिष्ठिर के राज्यकाल में ही हुई।

महाभारत में 8800 श्लोक ऐसे कूटश्लोक बताये जाते हैं जिनका अर्थ भेदन करना अत्यन्त दुष्कर है—

अष्टौ श्लोक सहस्राणि अष्टौ श्लोकशतानि च।
अहं वेद्मि शुको वेत्ति संजयो वेत्ति वा न वा।

"8800 श्लोकों के अर्थ को मैं (व्यास) जानता हूं, शुक जानते हैं, संजय जानते हैं या नहीं यह निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता।"

व्यास जी ने महाभारत का अध्ययन अपने पाँच शिष्यों को कराया—उन शिष्यों ने महाभारत की पृथक्-पृथक संहितायें प्रकाशित कीं—

वेदानध्यापयामास महाभारतपंचमान् ।
सुमन्तुं जैमिनिं पैलं शुकं चैव स्वामात्मजम् ।
प्रभुर्वरिष्ठो वरदो वैशम्पायनमेव च ।
संहितास्तैः पृथक्त्वेन भारतस्य प्रकाशिताः ।

(1।8790)

वैशम्पायन का महाभारत—वर्तमान काल में महाभारत का जो संस्करण मिलता है, वह वैशम्पायनकृत है। प्राचीनकाल में महाभारतान्तर्गत वैशम्पायन के श्लोकों को 'चारक-श्लोक' कहा जाता था, क्योंकि वैशम्पायन की एक चरकशाखा (यजुर्वेद) प्रसिद्ध थी

वैशम्पायन के दो प्रधानशिष्य हुये तित्तिरि और याज्ञवल्क्य। इनमें तित्तिरिमुनि ने तैत्तिरीयसंहिता (कृष्णयजुर्वेद) और याज्ञवल्क्य ने वाजसनेयिसंहिता (शुक्लयजुर्वेद) का प्रवचन किया।

वैशम्पायन ने व्यास की आज्ञा से जनमेजय के नागयज्ञ में महाभारत इतिहास सुनाया था—

तस्य तद् वचनं श्रुत्वा कृष्णद्वैपायनस्तदा ।
शशास शिष्यमासीनं वैशम्पायनमन्तिके ॥

(1।60।21)

"जनमेजय की बात सुनकर श्रीकृष्णद्वैपायनव्यास ने पास ही बैठे हुये अपने शिष्य वैशम्पायन को महाभारत सुनाने का आदेश दिया।"

जनमेजय ने महाभारत का श्रवण पाण्डवों की मृत्यु से लगभग 80 वर्ष पश्चात् किया था अर्थात 3000 वि० पू०।

उग्रश्रवा द्वारा महाभारतप्रवचन—पुनः तृतीयवार अधिसीमकृष्ण के राज्यकाल में (2750 वि० पू०) पाण्डवों से लगभग ढ़ाईसौवर्ष पश्चात् उग्रश्रवासौति, जो व्यासजी के प्रशिष्य और व्यासशिष्य रोमहर्षण के पुत्र थे, ने महाभारत का प्रवचन शौनक के दीर्घसत्र में किया,

इस दीर्घसत्र के विषय में पुराणप्रसङ्ग में पहिले ही विस्तारपूर्वक लिख चुके हैं, अतः उसकी पुनरावृति निरर्थक है।

ऊपर भारतीयदृष्टिकोण से महाभारत के रचयिता' उसके रचनाकाल आकारादि के विषय में संक्षेप में लिखा गया है, अब इस सम्बन्ध में पाश्चात्यलेखकों के मनघढ़न्त ऊँटपटाँग, काल्पनिक एवं षड्यन्त्रपूर्ण मतों का भी दिग्दर्शन करना चाहिये, जिससे कि पाठकों की भ्रान्ति दूर होने में सहायता मिले।

पाश्चात्यलेखकों में प्रत्येक लेखक का मत प्रत्येक भारतीयग्रन्थ के विषय में पृथक्-पृथक् है, स्पष्ट है ये किसी प्रमाण को न मानकर अपने मन की इच्छा को ही प्रमाण मानते थे। लेकिन भारत की विडम्बना हैं कि भारतीयशिक्षणसंस्थाओं में यहाँ पर प्राध्यापक, अध्यापक एवं विद्यार्थी आँख मूँदकर पाश्चात्यलेखों पर ब्रह्मवाक्य की भाँति विश्वास करते हैं। अँग्रेजों ने मैकाले की योजना को कार्यान्वित करने के दृष्टि से भारतीय साहित्य और संस्कृति के विषय में कूटनीतिपूर्वक असत्य का प्रचार किया और भारतीयऋषिमुनियों के प्रति अश्रद्धा उत्पन्न की, लेकिन भारतीय राजनीतिज्ञ तों क्या भारतीयमनीषी भी अभी तक स्वतन्त्रता के 33 वर्ष पश्चात् भी पश्चात्यकूटनीति को नहीं समझ सके हैं और उन्हीं के मतों को प्रमाणिक मानते हैं, न केवल अँग्रेजीशिक्षा में शिक्षित श्रीराधाकृष्णन् जैसे भारतीय ही नही वासुदेवशरण अग्रवाल श्रीवल्देव उपाध्याय, मंगलदेवशास्त्री जैसे भारतीयसंस्कृतज्ञ विद्वान्, भी पाश्चात्यकुशिक्षा से आक्रान्त है। पण्डित गिरधरशर्माचतुर्वेदी और पण्डितभगवद्दत्त जैसे दो चार मनीषी ही पाश्चात्यषड्यन्त्रों को समझ सके और समुचितरूप में संस्कृतग्रन्थों का तात्पर्य समझ सके।

स्थूल रूप में पाश्चात्यलेखकों के महाभारतसन्बन्धी विचारों के कुछ उद्धरण विन्टरनित्सकृत भारतीयसाहित्य' (Indian Literature) प्रथम भाग, द्वितीयखण्ड से उदधृत किये जा रहे हैं—उसके अनुसार—"हम लोगों के लिये जो विश्वासी हिन्दुओं की दृष्टि से नही अपितु आलोचक इतिहासकार की दृष्टि से महाभारत को देखते हैं, यह—कलकृति के अलावा बाकी सब

कुछ है। जो कुछ भी हो इसे किसी एक लेखक या चतुर संग्रहकर्त्ता की कृति नहीं मान सकते। ... केवल कवित्वशून्य धर्माचार्य, टीकाकार की फूहड़ प्रतिलिपिकार ही परस्पर असम्बद्ध अंशों को जो विभिन्न शताब्दियों से आये हैं, एक अनगढ़ संग्रह इकट्ठे करने में सफल हुये है।"(पृष्ठ 14 रामचन्द्र-पाण्डेयकृत अनुवाद)

भाषा, शैली और छन्द के वारे में महाभारत के अनेक भागों में एकरूपता विलकुल नहीं दिखाई देती।" (पृष्ठ 135)

विन्टरनित्स ने हाल्टज्मैन नाम के एक पाश्चात्यलेखक का मत लिखा है—" पुराणों जैसा इसका (महाभारत) दूसरा पुनः संस्करण 900-1100 ई० सन् के बीच में हुआ होगा। इसके पश्चात् कुछ शताब्दियों के अनन्तर इस ग्रन्थ को पूरा करके एक निश्चितरूप देदिया गया होगा।" (पृष्ठ 137)

''महाभारत का वर्तमान रूप चौथी शताब्दी ईसा पूर्व के पहिले तथा चौथी शताब्दी ईसा सम्वत् के पश्चात् का नहीं हो सकता।"(पृष्ठ 140)

विन्टरनित्सगुट के पाश्चात्य लेखक बुद्ध और विम्वसार से पूर्व के किसी भारतीयपुरुष को ऐतिहासिक नहीं मानते। ये पाश्चात्यलेखक समझते थे कि भारतीयइतिहास के सम्बन्ध में उनकी ही इच्छा सर्वोपर है, उनकी दृष्टि में वेद, पुराण, रामायण और महाभारत के कथनों का कोई मूल्य नहीं— विन्टरनीत्स लिखता है—(मानो विम्वसार अजातशत्रु से पूर्व का इतिहास उनकी आँखों के सम्मुख प्रत्यक्ष था)—"अन्त में फिर कहना आवश्यक है न केवल महाभारत में वर्णित घटनायें ही वल्कि राजाओं, राजकुलों में अगणित नाम चाहे इनमें कुछ घटनायें और नाम कितने ही ऐतिहासिक क्यों न मालूम पड़ें—सही माने में भारतीयइतिहास नहीं हैं। यह सही है कि भारतीय लोग युधिष्ठिर के राज्यकाल तथा महाभारत के महायुद्ध का काल कलियुग के प्रारम्भ में अर्थात् 3102 ई० पू० मानते हैं। पर कलियुग के आरम्भ का समय भारतीय ज्योतिषियों की गलतगणना पर आधारित है और इस समय का कौरव पाण्डवों के साथ सम्बन्ध बिल्कुल यादृच्छिक है। भारत का राजनैतिक

इतिहास मगध के शिशुनाग राजाओं-विम्वसार और अजातशत्रु से शुरू होता है।" (पृष्ठ 148)

विन्टरनीत्स का पूर्वाग्रह (हठ) और पक्षपात तथा घोर भ्रम स्पष्ट है। विन्टरनीत्स के मत में विम्वसार अजातशत्रु से पूर्व भारतवर्ष में कोई ऋषि मुनि या महापुरुष (राजा आदि) हुये ही नहीं।

पाश्चात्यों के अनुयायी श्री राधाकृष्णन् लिखते हैं—'We do not know the name of the author of the Gita (or Mahabharat) (Essays on Gita P. 14). श्रीराधाकृष्णन् को गीता या महाभारत के लेखक का पता ही नहीं है।

श्री वाणभट्ट से (7 वीं शती) से पूर्व शौनक ऋषि तक सभी कालों में महाभारत को व्यास की कृति और एक लाख श्लोक का ग्रन्थ मानते रहे हैं। प्राचीनकाल में सभी भारतीय विद्वान् मूर्ख या प्रमत्त नहीं थे जो सब एक जसी वात लिखते रहे।

महाकवि वाणभट्ट ने अपने ग्रन्थों में महाभारत का उल्लेख किया है और उसका कर्त्ता व्यास को वताया है—

नमः सर्वविदे तस्मै व्यासाय कविवेधसे।
चक्रे पुण्यं सरस्वत्या यो वर्षमिव भारतम्।

(हर्षचरित श्लोक 4)

वाणभट्ट के समय में महाभारत के आख्यान उसीप्रकार थे, जैसे आज हैं—

'आस्तीकतनुरिव आनन्दितभुजङ्गलोका'। (पृष्ट 182)

'पाण्डवसव्यसाची चीनविषयमतिक्रम्य राजसूयसम्पदे कुप्यद्गन्धर्वधनुष्कोटिटङ्कारकूजितकुंजंहेमकूटपर्वतंपराजेष्ट।" (हर्षचरित पृष्ठ 758)

काशिकाकार जयादित्य (550 वि० स०) महाभारत का उल्लेख करता है तथा उसने अनेक उल्लेख उद्धृत किये हैं।

उससे पूर्व होने वाले श्रीशंकराचार्य ने महाभारत से अपने वेदान्तभाष्य

में अनेक श्लोक उद्धृत किये हैं सावित्र्युपाख्यान का एक श्लोक उद्धृत किया है—

"अथ सत्यवतः कायात्...निश्चकर्ष यमो बलात् ।"

(ब्रह्मसूत्रभाष्य 1 । 3 । 24)

अतः शंकराचार्य के समय महाभारत में सावित्र्युपाख्यान जैसे सभी उपाख्यान विद्यमान थे ।

कट्टर नास्तिक बौद्धविद्वान् धर्मकीर्ति भारत की रचना में अपने समय के पुरुषों को अशक्त मानता है—'भारतादिष्वपि इदानीन्तनानां अशक्तावपि कस्यचित् शक्तिसिद्धेः (प्रमाणवार्तिक पृष्ठ 447) ।

धर्मकीर्ति जैसे बौद्ध नास्तिक को भी महाभारत और व्यास के अस्तित्व पर अश्रद्धा नहीं थी । ऐसी स्थिति में पाश्चात्यों के प्रलाप क्या मूल्य है ।

गुप्तकालीन महाराज सर्वनाथ (संवत् 191) के तामपात्र में व्यासकृत शतसाहस्री महाभारतसंहिता का उल्लेख है—'उक्तं च महाभारतशतसाहस्रयां संहितायां परमर्षिणा पाराशरसुतेन वेदव्यासेन ।" (गुप्तशिलालेख भाग 3 पृष्ठ 134) ।

पाश्चात्य लेखक और उनके अनुयायी भारतीयलेखक यहाँ आकर रुक जाते हैं । उनके अनुसार उक्त शिलालेख पंचमीशती का है, अतः उनके अनुसार महाभारत का वर्तमान रूप (एक लाख श्लोक) गुप्तकाल में बना ।

विक्रम की प्रथमशती का प्रसिद्ध मीमांसाभाष्यकार शवरस्वामी महाभारत के प्रथम अध्याय (अनुक्रमणी) से श्लोक उद्धृत करता है—

'विस्तीर्येतन्महत् ज्ञानमृषिः संक्षिप्याब्रवीत् । (सूत्र 8।1।2)

उसी काल का एक अन्य विद्वान् अनुक्रमणी से श्लोक उद्धृत करता है—

(वररुचि निरुक्तसमुच्चय)

विभेत्यल्पश्रुताद्——।;

विक्रमपूर्व के बौद्धग्रन्थ लङ्कावतारसूत्र में व्यास और भारत का स्पष्ट उल्लेख है—

"मयि निर्वृते वर्षशते व्यासो वै भारतस्तथा।

(श्लोक 785)

पैशाची वृहत्कथा के लेखक गुणाढ्य ने वर्तमान महाभारत का अध्ययन किया था यह तथ्य वृहत्कथा के पाठों से सिद्ध है। गुणाढ्य का समय सातवाहन युग में (500 वि० पू०) के लगभग था।

इसी समय के नाटक मृच्छकटिक में शूद्रक महाभारत के पात्रों का उल्लेख करता है।

गार्गीसंहिता का अंश युगपुराण, जो आन्ध्रसातवाहनयुग की रचना है, उसमें महाभारत की घटना का इस प्रकार उल्लेख मिलता है—

वधार्थं द्वापरस्यान्ते समुत्पत्स्यति केशवः।
चतुर्वाहुर्महावीर्यः शंखचक्रगदाधरः।
वासुदेव इति ख्यातः पीताम्बरधरो वली।
पाण्डवानां परो राजा भविष्यति युधिष्ठरः।
वायव्यो भीमसनेश्च फाल्गुनश्च महातपाः।
नकुलः सहदेवश्च भ्रातरावश्विनात्मजौ।
अङ्गराजस्तथा कर्णः साश्वत्थामा च दुर्जयः।
द्रुपदस्य सुता कृष्णा देहांतरगता मही॥

(युगपु० 58-70 पंक्ति)

युगपुराण में श्रीकृष्ण को विष्णु का अवतार मानना, पीताम्बर कहना, भीमसेनादि को देवताओं का अंशावतार मानना, द्रौपदी को पृथिवी का अवतार बताना- सिद्ध करता है कि पुराणलेखक के सम्मुख वर्तमान महाभारत का ही पाठ था।

पतंजलि ने कंसवध नाटक का उल्लेख किया है, इससे सिद्ध होता है कि शुङ्गकाल में न केवल महाभारत वल्कि हरिवंशपुराण भी विद्यमान था।

आचार्य विष्णुगुप्त कौटिल्य ने महाभारत के अनेक श्लोक उद्घृत किये हैं और दुर्योधन का नामतः उल्लेख किया है—'दुर्योधनो राज्यादंशं च (अप्रयच्छन्) ······(ननाश)।' (अर्थशास्त्र 1.6)

कौटिल्य को पाश्चात्य लेखकों की अपेक्षा भारतीयइतिहास का अधिक ज्ञान था। वह दुर्योधन या कृष्णद्वैपायन की ऐतिहासिकता पर सन्देह नहीं करता। कौटिल्य के प्रामाण्य के सम्मुख आधुनिक इतिहासकारों की कल्पनाओं का कोई मूल्य नहीं है।

कौटिल्य से पूर्व महाकवि भास ने महाभारत और हरिवंशपुराण से अपने नाटकों के कथानक लिये थे।

आत्रेयपुनर्वसु, जो महाभारतकालीन व्यक्ति थे, उनके द्वारा रचित चरक-संहिता में विष्णुसहस्रनाम का उल्लेख है, यह विष्णुसहस्रनाम अनुशासनपर्व का एक अध्याय है।

वायुपुराण, मत्स्यपुराणादि की रचना अधिसीमकृष्ण पाण्डव के राज्य-काल में (2750 वि०पू०) शौनक के दीर्घसत्र में हुई। उनमें सर्वत्र महाभारत को एक लाख श्लोक का बताया गया है—

भारताख्यानमखिलं चक्रे तदुपबृंहितम्।
लक्षेणैकेन यत्प्रोक्तं वेदार्थपरिबृंहितम्॥
(मत्स्यपु० 53।70)

प्रकाशं जनितोलोके महाभारतचन्द्रमाः।
(वायु पु० 1।45)

शौनक ने स्वयं अपने ग्रन्थ बृहद्देवता में महाभारत के अनेक श्लोक उद्धृत किये हैं, उदाहरणार्थ—

प्राजापत्यो मरीचिर्हि मारीचः कश्यपो मुनिः।'
(बृहद्देवता 5।143)

इत्यदि श्लोक शान्तिपर्व अध्याय 207 में मिलते हैं। श्रीमद्भगवद्गीता का एक श्लोक बृहद्देवता में मिलता है—

'सहस्रयुगपर्यन्तम् अहर्यद् ब्रह्मणो विदुः।'
(8।17 गीता)
(बृहद्देवता 8।98)

शौनककृत वृहद्देवता में महाभारत के श्लोक होना स्वाभाविक था, क्योंकि शौनक सर्वशास्त्रविशारद तथा महाभारत के प्रधान श्रोता थे। अतः शौनक ने वर्तमान महाभारत का ही पाठ श्रवण किया था, यह वृहद्देवता से भी सिद्ध है।

शौनक मुनि से पूर्व आचार्य बौधायन महाभारत और श्रीमद्भगवद्गीता को अपने धर्मसूत्र में श्लोक उद्धृत करता है—'तथा आह च भगवान्'

पत्रं पुष्पं तोयं यो मे भक्त्या प्रयच्छति।
तदहं भक्त्युपहृतमश्नामि प्रयतात्मनः ॥

आचार्य बौधायन ने महाभारत आदिपर्व से एक गाथा भी उद्धृत की है—'अथाप्यत्रोशनश्च वृषपवर्णश्च दुहित्रोस्संवादे गाथामुदाहरन्तिस्तुवतो दुहिता त्वं वै याचतः प्रतिगृह्णतः अथाहंस्तूयमानस्य ददतोऽतिगृह्णतः।

(बौधायनधर्मसूत्र 2।2।27)

बौधायन के उद्धरणों से सिद्ध है कि उस समय (2800 वि० पू०) महाभारत अपने वर्तमानरूप में ही था।

उपरिउद्धृत अकाट्य प्रमाणों से सिद्ध है कि पाश्चात्यों की काल्पनिक धारणायें-भाषाविज्ञान इत्यादि निरर्थक एवं निराधार हैं। महाभारत की भाषा शैली और छन्दों में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है और इसका एक ही रचयिता था कृष्णद्वैपायनव्यास जिन्होंने इस ग्रन्थ की रचना 3102 ई० पू० की थी, इसमें सन्देह के लिए कोई स्थान नहीं है।

महाभारत का पर्व विभाग दो प्रकार से है —

'एतद् पर्वशतं पूर्णं व्यासेनोक्तं महात्मना।

'यथावद् सूतपुत्रेण लौमहर्षिणा ततः।
उक्तानि नैमिषारण्ये पर्वाण्यष्टादशैव तु ॥

(1।2।83-84)

श्रीव्यासजी ने इस प्रकार पूरे सौपर्वों की रचना की थी, पुनः सूतपुत्र उग्रश्रवा ने उन सौपर्वों को व्यवस्थित करके अठारहपर्वों में महाभारत का प्रवचन किया।

सौपर्वों के नाम इस प्रकार हैं—

(1) अनुक्रमणी पर्व
(2) पर्वसंग्रह पर्व
(3) पौष्यपर्व
(4) पौलोम पर्व
(5) आस्तीकपर्व
(6) अंशावतरणपर्व
(7) सम्भवपर्व
(8) जतुगृहदाहपर्व
(9) हिडिम्बवधपर्व
(10) बकवधपर्व
(11) चैत्ररथपर्व
(12) स्वयंवरपर्व
(13) वैवाहिकपर्व
(14) विदुरागमनपर्व
(15) अर्जुनवनवासपर्व
(16) सुभद्राहरणपर्व
(17) हरणहारिकापर्व
(18) खाण्डवदाहपर्व
(19) सभापर्व
(20) मन्त्रपर्व
(21) जरासन्धवधपर्व
(22) दिग्विजयपर्व
(23) राजसूयपर्व
(24) अर्घाभिहरणपर्व
(25) शिशुपालवधपर्व
(26) द्यूतपर्व
(27) अनुद्यूतपर्व
(28) वनयात्रापर्व
(29) किर्मीरवधपर्व
(30) अर्जुनाभिगमनपर्व
(31) कैरातपर्व
(32) इन्द्रलोकाभिगमनपर्व
(33) नलोपाख्यानपर्व
(34) तीर्थयात्रापर्व
(35) जटासुरवधपर्व
(36) यक्ष-युद्धपर्व
(37) निवातकवचयुद्धपर्व
(38) आजगरपर्व
(39) मार्कण्डेयसमास्यापर्व
(40) द्रौपदी-सत्यभामासंवादपर्व
(41) घोषयात्रापर्व
(42) द्रौपदीहरणपर्व
(43) जयद्रथविमोक्षणपर्व
(44) रामोपाख्यानपर्व
(45) कुण्डलाहरणपर्व
(46) आरणेयपर्व
(47) विराटपर्व
(48) कीचकवधपर्व
(49) गोग्रहणपर्व
(50) उत्तराविवाहपर्व
(51) उद्योगपर्व
(52) संजययानपर्व

(53) प्रजागरपर्व
(54) सनत्सुजातपर्व
(55) यानसंधिपर्व
(56) भगवद्यानपर्व
(57) कर्णविवादपर्व
(58) निर्याणपर्व
(69) रथातिरथसंख्यापर्व
(60) उलूकदूतागमनपर्व
(61) अम्बोपाख्यानपर्व
(62) भीष्माभिषेचनपर्व
(63) जम्बूखण्डपर्व
(64) भूमिपर्व
(65) भगवद्गीतापर्व
(66) भीष्मवधपर्व
(67) द्रोणाभिषेकपर्व
(68) संशप्तकवधपर्व
(79) अभिमन्युवध
(70) प्रतिज्ञापर्व
(71) जयद्रथवधपर्व
(72) घटोत्कचवधपर्व
(73) द्रोणवधपर्व
(74) नारायणमोक्षपर्व
(75) कर्णपर्व
(76) शल्यपर्व
(77) ह्रदप्रवेपर्व
(78) गदायुद्धपर्व
(79) सारस्वतपर्व
(80) सौप्तिकपर्व
(81) ऐषीकपर्व
(82) जलप्रदानिकपर्व
(83) स्त्रीविलापपर्व
(84) श्राद्धपर्व
(85) चार्वाकपर्व
(86) अभिषेकपर्व
(87) गृहविभागपर्व
(88) शान्तिपर्व
(89) राजधर्मानुशासनपर्व
(90) आपद्धर्मपर्व
(91) मोक्षपर्व
(92) शुकप्रश्नाभिगमनपर्व
(93) ब्रह्मप्रश्नपर्व
(94) आश्रमपर्व
(95) अनुशासनकपर्व
(96) आश्वमेधिकपर्व
(97) स्वर्गारोहणपर्व
(98) हरिवंशपर्व
(99) विष्णुपर्व
(100) भविष्यपर्व

अष्टादशपर्वविभाग में प्रत्येकपर्व में अध्यायसंख्या और श्लोकसंख्या इस प्रकार है—

(1) आदिपर्व	—	227 अध्याय,	8884 श्लोक
(2) सभापर्व	—	78 अध्याय,	2511 श्लोक
(3) वनपर्व	—	269 अध्याय,	11664 श्लोक
(4) विराटपर्व	—	67 अध्याय	2050 श्लोक
(5) उद्योगपर्व	—	186 अध्याय	6698 श्लोक
(6) भीष्मपर्व	—	117 अध्याय	5884 श्लोक
(7) द्रोणपर्व	—	170 अध्याय	8909 श्लोक
(8) कर्णपर्व	—	69 अध्याय	4964 श्लोक
(9) शल्यपर्व	—	59 अध्याय	3220 श्लोक
(10) सौप्तिकपर्व	—	18 अध्याय	870 श्लोक
(11) स्त्रीपर्व	—	27 अध्याय	775 श्लोक
(12) शान्तिपर्व	—	339 अध्याय	14732 श्लोक
(13) अनुशासनपर्व	—	146 अध्याय	8000 श्लोक
(14) आश्वमेधिकपर्व	—	103 अध्याय	3320 श्लोक
(15) आश्रमवासिकपर्व	—	42 अध्याय	1506 श्लोक
(16) मौसलपर्व	—	8 अध्याय	320 श्लोक
(17) महाप्रस्थानिकपर्व	—	3 अध्याय	123 श्लोक
(18) स्वर्गारोहणपर्व	—	5 अध्याय	209 श्लोक

महाभारत का महात्म्य—विश्वसाहित्य एवं भारतीवाङ्मय में महाभारत ग्रन्थ का अतुलनीय स्थान है। आकार की दृष्टि से तो यह प्राचीन विश्व का वृहत्तम ग्रन्थ है ही, ज्ञानविज्ञान में भी इससे बढ़कर अन्य ग्रन्थ नहीं है। इसमें 'वेदरहस्य, वेदाङ्ग उपनिषदों का प्रतिपादन है, इतिहासपुराण भूत, भविष्य वर्तमान का वर्णन है, धर्मों और आश्रमों का वर्णन है, न्याय, शिक्षा, चिकित्सा तीर्थ, भूगोल, युद्धविज्ञान, लोकव्यवहार, धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र, कामशास्त्र, और मोक्षशास्त्र—सभी विषयों का विस्तार से वर्णन है।

श्रीमद्भगवगद्गीता इसी महाभारत का एक अंशमात्र है, जिसके विषय में कहा है—

"गीता सुगीता कर्त्तव्या किमन्यैः शास्त्रविस्तरैः ।' पुनः महाभारत के विषय इसी ग्रन्थ में कहा गया है—

धर्मे चार्थे च कामे च मोक्षे च भरतर्षभ ।
यदिहास्ति तदन्यत्र यन्नेहास्ति न तत् क्वचित् ॥
(1 । 62 । 53)

"हे जनमेजय । धर्म, अर्थ, काम, और मोक्ष के विषय में जो बातें इस ग्रन्थ में है, वही अन्यत्र भी है, जो इसमें नहीं, वह कहीं भी नहीं हैं ।"

महाभारत परिशिष्ट-खिल
(हरिवंशपुराण)

यह महान् ग्रन्थ महाभारत का खिल या परिशिष्ट है, इस पुराण में प्रमुखरूप से कृष्णचरित का विस्तार से वर्णन है। कृष्ण का बालचरित प्राचीनतम और मूलरूप में इसी हरिवंशपुराण में मिलता है। यहाँ पर इस का संक्षेप में परिचय लिखते हैं।

परिमाण—इस समय हरिवंश में षोडशसहस्र से अधिक श्लोक मिलते हैं। परन्तु मूल हरिवंश में महाभारत पर्वसंग्रह (आदिपर्व द्वितीय अध्याय) के अनुसार कुल बारह हजार श्लोक थे—

दशश्लोकसहस्राणि विंशच्छ्लोकशतानि च ।
खिलेषु हरिवंशे च संख्यातानि महर्षिणा ॥ (श्लोक 380)

स्पष्ट है इसमें चार सहस्र से अधिक श्लोक प्रक्षिप्त है, ग्रन्थ के गहन अध्ययन से इन प्रक्षिप्तांशों का पता चलाया जा सकता है, इसका कुछ सङ्केत आगे करेंगे। इस समय इसके तीन पर्वों की अध्याय संख्या इस प्रकार है—

(1) हरिवंशपर्व— 55 अध्याय ।
(2) विष्णुपर्व— 128 अध्याय ।
(3) भविष्यपर्व— 135 अध्याय ।

कुल= 318 अध्याय ।

श्लोक संख्या सोलह हजार से अधिक हैं।

रचियता—इसके प्रवक्ता वैशम्पायन और सौति (उग्रश्रवा) है, जिस प्रकार ये ही महाभारत के प्रवचनकर्त्ता एवं रचियता थे, उसी प्रकार हरिवंश के मूल रचियता चरकाचार्य वैशम्पायन और उग्रश्रवा सौति थे। कालान्तर में इसमें क्षेपक एवं पाठान्तर भी जुड़ते गये और मूल-ग्रन्थ का कलेवर बढ़ता गया।

हरिवंश के विष्णुपर्व की सामग्री प्राचीनतम एवं मौलिक है जो छन्द भापा एवं विपय के तारतम्य से भी सिद्ध है।

प्रथम पर्व (हरिवंश में स्वायम्भुव मनु से यादववंश तक के वंशों और वंशानुचारतों का विस्तार से कथन है, जो कि प्राचीनतमपुराणों (वायु पुराणादि) के आधार पर ही है, अतः सामग्री भी प्रायेण प्राचीन है, अन्तिम भविष्यपर्व की सामग्री अपेक्षाकृत अवरकाल की है, परन्तु इसमें भी प्राचीन सामग्री का अभाव नहीं वाहुल्य ही है, दो तीन अंतरङ्ग प्रमाणों से यह तथ्य पुष्ट होता है।

प्रथम प्रमाण यह है कि भविष्यपर्व के प्रथम अध्याय में ही पाण्डववंशीय जनमेजय की वंशपरम्परा का वर्णन अन्य पुराणोल्लिखित वंशपरम्परा से पर्याप्त भिन्न एवं प्राचीन है। हरिवंश का वंशकथन प्राचीनतर है।

हरिवंश के पाठ के अनुसार नाम।	अन्य पुराणानुसार
(1) जनमेजय	(1) जनमेजय
(2) चन्द्रापीड और सूर्यापीड	(2) शतानीक
(3) सत्यकर्ण	(3) सहस्रानीक
(4) श्वेतकर्ण	(4) अश्वमेघदत्त
(5) अजपार्श्व	(5) अधिसीमकृष्ण

हरिवंश के नाम निश्चय ही प्राचीन है; भविष्यपर्व के इसी प्रथम अध्याय में अजपार्श्व (जिसका ऊपर नाम अधिसीमकृष्ण था) की जन्म कथा संक्षिप्त रूप से वर्णित है। अजपार्श्व का पालन वन में वेमकमुनि ने किया था। श्रविष्ठा के दो पुत्र—पिप्पलाद और कौशिक—अजपार्श्व के सहपाठी

थे और उसके मन्त्री बने। पिप्पलाद ने प्रश्नोपनिषद् का प्रवचन किया और कौशिक ने कौशिकसूत्र बनाये जिनका उल्लेख अष्टाध्यायी में है। इसी राजा के राज्यकाल में अन्तिम शौनक ने दीर्घसत्र किया और ऋक्प्रातिशाख्य, बृहद्देवता जैसे ग्रन्थों की रचना की अतः हरिवंशपुराण का मूलवाचन अजपार्श्व और शौनक से पूर्वकाल में (कलिसंवत् 200या 2900 वि०पू०) हुआ।

हरिवंशपुराण और उसके भविष्यपर्व के प्राचीन होने का एक और प्रमाण उल्लेख्य है। विष्णुपुराण एवं भागवतादिपुराणों में विष्णु के नृसिंहावतार और प्रह्लाद की भक्ति का जिस प्रकार से वर्णन है, वैसा हरिवंश में उल्लेख नहीं है। उनके विपरीत हरिवंश में नृसिंह न तो खम्भा फोड़कर निकलते हैं और प्रह्लाद के भक्तरूप का संङ्केत तक नहीं है। हरिवंश के अनुसार नृसिंह हिमालय के पार्श्व से हिरण्यकशिपु की सभा में आये और उनका दैत्य सेनापतिनों से घोर एवं निरन्तर युद्ध हुआ। प्रह्लाद यहाँ पर न तो नृसिंह की स्तुति करता है, न अन्य कोई चेष्टा, नमस्कार तक नही किया, भक्ति की तो बात हो क्या, सम्भवतः प्रह्लाद मे नृसिंह के प्रति तटस्थभाव दिखाया। प्रह्लाद को अपने दिव्यज्ञान से नरसिंह का आभास मात्र हुआ—

> हिरण्यकशिपोः पुत्र प्रह्लादो नाम वीर्यमान्।
> दिव्येन चक्षुषा सिंहमपश्यद् देवमागतम्॥ (हरि० 3।43।5)

यहाँ प्रल्हाद केवल नारसिंह वपुः की विचित्रता का अपने पिता से वर्णन करता हैं, यहाँ भक्तिभाव का रंचमात्र भी प्रदर्शन नहीं है, यहाँ पर वह स्तुति के स्थान पर नीचे मुंह करके बैठ जाता है—

> दध्यौ च दैत्येश्वरपुत्र उग्रं महामतिः
> किञ्चिदधोमुखः प्राक्ः। (हरि० 3।43 17)

हरिवंश के उपर्युक्त प्रकाश में प्रल्हाद का भक्तचरित्र आकाशपुष्प और कल्पना को वस्तु ही सिद्ध होती है। कृष्णावतार (द्वापरान्त) से पूर्व ऐतिहासिक दृष्टि से वैष्णवभक्ति का अभाव ही सिद्ध होता है, यथा वाल्मीकीय रामायण में रामभक्ति का पूर्णतः अभाव है।

हरिवंश की प्राचीनता के अन्य इसी प्रकार अनेक प्रमाण प्रस्तुत किये जा सकते हैं, केवल उक्त दो उदाहरणों से ही हमारे मत की पुष्टि होती है, अतः विषय विस्तार अनावश्यक है।

क्षेपक— ग्रन्थ का कौनसा भाग क्षेपक है, इसका निर्णय करना सरल कार्य नहीं, परन्तु सूक्ष्मअध्येता अनेक स्थलों की प्रक्षिप्तता को शीघ्र पहिचान सकता है, यथा व्रज में प्राकृतिक भेड़ियों की वृद्धि को कृष्ण के शरीर से उत्पन्न कहना, निश्चय ही प्रक्षिप्तांश है—

घोराश्चिन्तयतस्तस्य स्वतनूरुहजास्तथा ।
विनिष्पेतुर्भयंकरा: सर्वत: शतशो वृका: ॥ (हरि० 2।8।31)

हरिवंश, विष्णुपर्व के 34 से36 अध्याय निश्चितरूप से क्षेपक है क्योंकि वही कथानक शब्दान्तर के साथ 37 वें अध्याय में कथित है और 34 वें तथा 37 वें अध्यायों के प्रारम्भ में थे तीन श्लोक समान रूप से मिलते है—

स कृष्णस्तत्र सहितो रौहिणेयेन संगत: ।
मथुरां यादवाकीर्णां पुरीं तां सुखमावसत् ॥
प्राप्तयौवनदेहस्तु युक्तो राजश्रिया विभु: ।
चचार मथुरां प्रीत: स वनाकरभूषणाम् ॥
कस्यचित्त्वथ कालस्य राजा राजगृहेश्वर: ।
शुश्राव निहतं कंसं दुहितृभ्यां महीपति: ॥

कोई मूल लेखक इसकी दुरुक्ति नहीं कर सकता ।

इसी प्रकार अन्य विधियों से क्षेपकों का आभास हो जाता है ।

हरिवंश में वर्णित विपयों की सूची— हरिवंश का ऐतिहासिक भहत्व रामायण और महाभारत से कम नहीं है । इसमें इतिहाससामग्री किसी भी अन्य पुराग की अपेक्षा अधिक ही है, विशेपत: कृष्णसम्बन्धी विपुल इतिहासों का मूल स्रोत यही हैं । इसके अतिरिक्त दार्शनिक, धार्मिक आदि विपयों का इसमें पर्याप्त वर्णन है, इसमें उत्तमकोटि का काव्य भी हैं, निदर्शन आगे उद्धृत किया जायेगा ।

हरिवंश के अन्त में (हरि० 3।134) इसके कथानकों की संक्षिप्त सूची इस प्रकार दी गई है—हरिवंश का प्रारम्भ में आदिसर्ग और भूतसर्ग का कथन है, तदनन्तर निम्नलिखित कथानक हैं— मनुओं का वर्णन, वैवस्वतमनुवंशोत्पत्ति, धुन्धुमारकथा, गालवकथा, इस्वाकुवंश वर्णन, श्राद्धकल्प, बुधजन्म,

चद्रवंशवर्णन, त्रिशंकुकथा, ययातिचरित, पुरुवंश, अवतारकथन, कृष्णजन्म, व्रजगमन, शकटभंजन, पूतनावध, यमलार्जुनोद्धार, वृकसंदर्शन, वृन्दावननिवेशन वर्षावर्णन, कालियदमन, धेनुक और प्रलम्बवध, शरद्वर्णन, गिरियज्ञ, गोवर्धन-धारण, गोविन्दाभिषेक, रासलीला, अरिष्टवध, अक्रूरदौत्यकर्म, धनुर्भङ्ग, कुवलयापीडवध, चाणूरान्धकवध, उग्रसेनाभिषेक, गुरुकुलवास जरासन्धाक्रमण, गोमन्तपर्वतदाह, करवीरपुरगमन, शृगालवध, कालयवनवध, द्वारावतीनिर्माण रुक्मिणीहरण, बलदेवमहात्म्य, नरकवध, पारिजातहरण, वृष्णिवंश, षट्पुरध्वंस, शम्बरवध, बाणयुद्ध, भविष्यकथन, दशावतारवर्णन, कैलाशयात्रा, पौंड्रकवध, हंसडिम्भकवमध त्रिपुरसंहार ।

धार्मिकदृष्टि से हरिवंशपुराण का बड़ा भारी महात्म्य माना गया है, इसके श्रवण का बड़ा पुण्यफल होता है विशेषतः सन्तानकामना से श्रद्धालु इसका श्रवण करते थे, कहा गया है—

हरिवंशस्य प्रारम्भे समाप्तौ चैव तैः सह ।
सर्वान् कामानवाप्नोति विपाप्मा जायते नरः ॥

नामकरणकारण—'हरि' कृष्ण की संज्ञा है, हरिवंशपुराण में उनके ही वंश और कृष्ण का चरित्र (वंशानुचरित) वर्णित है, अतः इसका 'हरिवंश' नाम लोक में प्रथित हुआ, इस ग्रन्थ का प्रधानविषय कृष्णचरित है ही जैसा कहा गया है —

हरिवंशस्ततः पर्व पुराणं खिलसंज्ञितम् ।
विष्णुपर्व शिशोश्चर्या विष्णोः कंसवधस्तथा ॥ (आदि० 2182)

विषयनिदर्शन—पूजनीयासंज्ञक चिड़िया ने शुक्रनीति का जो वर्णन किया है, वह देखने में साधारण होते हुये भी आज भी महत्वपूर्ण है—

'गाथाश्चाप्युशनोगीता इमाः शृणु मयेरिताः ।
कुमित्रं च कुदेशं च कुराजानं कुसौहृदम् ।
कुपुत्रं च कुभार्यां च दूरतः परिवर्जयेत् ।
कुमित्रे सौहृदं नास्ति कुभार्यायां कुतो रतिः ।
कुतः पिण्डः कुपुत्रे वै नास्ति सत्यं कुराजनि ॥

(हरि० 1।20।119-120)

"मेरे द्वारा कथित शुक्राचार्यगीत गाथायें सुनें—'कुमित्र, कुदेश, दुष्टराजा, दुर्मित्र, कुपुत्र और कुलटा भार्या को दूर से ही छोड़ देना चाहिये। कुमित्र में सच्चा प्रेम नहीं होता, कुभार्या में सुख नहीं कुपुत्र में पिण्ड (श्राद्ध) कहाँ ? और कुराजा से न्याय नहीं मिल सकता।"

वर्षा का जों काव्यमय वर्णन हरिवंश में मिलता है, उसके अनुकरण पर परवर्ती पुराणों (यथा भागवतपुराण) एवं कवियों (यथा तुलसीदास) ने वर्षा का वर्णन किया है, कुछ निदर्शन द्रष्टव्य हैं—

तोयगम्भीरलम्बेषु स्रवत्सु च नदत्सु च।
उदरेषु नवाभ्राणां मज्जतीव दिवाकरः।
(हरि० 2।10।17)

"जलभरे लम्बायमान मेघों के उदरों में, जो वर्षा करते हुये गरज रहे थे, उनमें सूर्य डूबता हुआ प्रतीत होता था।' कृष्ण की रासलीला का वर्णन अत्यन्त मनोहर और चित्ताकर्षक है—

कृष्णस्तु यौवनं दृष्ट्वा निशि चन्द्रमसो वनम्।
शारदीं च निशां रम्यां मनश्चक्रे रतिं प्रति ॥ (हरि० 2।21।15)

'श्रीकृष्ण ने पूर्णिमा की रात्रि में चन्द्रमा के यौवन' वन और रम्य शारदी निशा को देखकर मन में रमण करने की इच्छा की।

अजपार्श्व (अधिसीमकृष्ण) पाण्डव के जन्म सम्बन्धी उपाख्यान के दो श्लोक द्रष्टव्य हैं—

अजश्यामौ तु पार्श्वौ तावुभावपि समाहितौ।
तथैव तु समारूढो अजपार्श्वस्ततोऽभवत्।
ततोऽजपार्श्व इति तौ चक्राते तस्य नाम ह।
स तु वेमकशालायां द्विजाभ्यामभिवर्धितः ॥
(हरि० 3।1।13-14)

"उस बालक के दोनों पार्श्व बकरे के समान काले थे और उसी रूप में वे हृष्टपुष्ट हो गये, इसलिये वह अजपार्श्व नाम से प्रसिद्ध हुआ। पिप्पलाद और कौशिक ने उसका नाम अजपार्श्व रखा। वेमकमुनि के आश्रम (शाला) में उन दोनों ने उसका पालन पोषण किया।"

पञ्चम अध्याय

अष्टादशपुराण

पुराणसंख्याविवेचन— पुराणों या महापुराणों की संख्या 18 प्रसिद्ध है। म० म० मधुसूदन ओझा ने 'पुराणोत्पतिप्रसङ्ग' नामक लघुपुस्तक में पुराणों की संख्या 18 होने के अनेक कारणों की ऊहापोह की है। सर्वप्रथम, ओझाजी के मत में आत्मा के अष्टादशभेद के आधार पर पुराणों के अठारह भेद हैं—परात्पर (पुरुष), अव्यय, अक्षर, क्षर, शान्तात्मा, महानात्मा, विज्ञानत्मा, प्रज्ञानात्मा, प्राणात्मा, शरीरात्मा, हंसात्मा (वायु), दिव्यात्मा (इन्द्र=अग्नि), तैजसात्मा, कर्मात्मा, चिदात्मा, विभूतिलक्षण, श्रीलक्षण और ऊर्क्लक्षण आत्मा।

प्राचीनभारत विशेषत संस्कृतवाङ्मय में अठारह की संख्या अत्यन्त पुण्य एवं महिमामयी मानी गई है, यथा महाभारत में अठारहपर्व हैं, गीता के अध्यायों की संख्या अठारह है, महाभारतयुद्ध में अठारह अक्षौहिणी सेना अठारह दिन तक लड़ी। इसी प्रकार प्राचीन भुवनकोश में पृथिवी के 18 द्वीप माने गये थे। इसी प्रकार 18 संख्या के और भी उदाहरण मृग्य हैं।

पुराणों का क्रम—इन अठारह पुराणों का प्रायेण निश्चित क्रम है सर्वप्रथम ब्रह्मपुराण का स्थान है और अन्तिम ब्रह्माण्डपुराण है। इस पुराण-क्रम के रहस्य का उद्घाटन म० म० मधुसूदन ओझा ने पूर्वोक्त 'पुराणोत्पत्ति-प्रसङ्ग' में किया है। तदनुसार ब्रह्म, ईश्वर, प्रकृति या ब्रह्माण्ड का ही अपर नामधेय है। कहा गया है—

'ब्रह्मा देवानां प्रथमः संबभूव' (मुण्डक० 1।1)

यही स्वयम्भू या आत्मभू— स्वयं अपने आप बनने वाला ब्रह्माण्ड (जगत्) ही ब्रह्म है। ब्रह्माण्ड का अर्थ है—बड़ा अण्डा

"महदण्डमभूदेकं प्रजानां बीजमव्ययम्" (आदिपर्व) सब प्रकार की

सृष्टियों का मूल ब्रह्म ही है—उसी से वाङ्मय, लोक, प्रजा और धर्म की

सृष्टि हुई। वैसे तो सभी पुराणों का प्रधानविषय—सांख्यानुसार— सृष्टि का प्रतिपादन और प्राचीन इतिहास का वर्णन है। अतः सर्वसृष्टि का कारण और उत्पादन ब्रह्मा ही है अतः सर्वप्रथम गणना में ब्रह्मपुराण का नाम है।

द्वितीय स्थान पद्मपुराण का है। यह भूमि या भू ही ब्रह्मा या स्वयम्भू (जीवसृष्टि) का आधार है, इसी भूपद्म (पृथिवीकमल) से लोकसृष्टि हुई इसलिये पद्मपुराण का द्वितीय स्थान है।

हिरण्याण्ड के दो शकल (खण्ड) हुये पृथिवीलोक और द्युलोक (सूर्य) सूर्य सर्वत्र व्याप्त है, अतः उसी को विष्णु कहते हैं। प्राचीन और आधुनिक विज्ञान के अनुसार भी पृथिवी की उत्पत्ति सूर्य (विष्णु) से हुई, अतः तृतीय स्थान विष्णुपुराण का है।

तैत्तिरायारण्यक में कहा है—'वाताद् विष्णोर्बलमाहुरिति वत्सस्य वेदना' वत्स ऋषि का विज्ञान है कि विष्णु का बल वात (वायु) है—अथवा आकर्षण शक्ति से सूर्य और पृथिवी दृढ़ हैं, अतः सृष्टि में वायु का चतुर्थ स्थान है अतः यही वायुपुराणका स्थान है।

इस वायु का आधार या स्थान सरस्वान् समुद्र (अन्तरिक्ष) है अतः सारस्वतकल्प का व्याख्या करने वाला पञ्चम भागवतपुराण है। नारद मेघ या आप (जलों) की संज्ञा है—

आपो नारा इति प्रोक्ता आपो वै नरसूनवः।

इतिहास में नारदऋषि नारायण (सरस्वान्) के शिष्य हैं। अतः नारदपुराण का षष्ठ स्थान है।

ओझाजी के मत में अगले चार पुराणों का क्रम-प्रकृतिकारणतावाद, अग्निकारणतावाद, सूर्यकारणतावाद और विवर्तकारणतावाद के कारण क्रमशः मार्कण्डेयपुराण, अग्निपुराण, भविष्यपुराण और ब्रह्मवैवर्तपुराण है।

अगले छः पुराणों में क्रमश छः अवतारों का कथन है अतः अवतारों के क्रम के कारण उनका क्रम है—लिङ्गपुराण वराहपुराण, स्कन्दपुराण, वामन-पुराण, कूर्मपुराण और मत्स्यपुराण

सत्रहवाँ गरुडपुराण प्रतिसृष्टि या निर्वाण या प्रेतविद्या का निरूपण करता है, अतः उसका यह क्रम और नाम है।

जिसमें सृष्टि और प्रतिसृष्टि (संहार) होता है वह ब्रह्माण्ड है, अतः अन्तिम ब्रह्माण्डपुराण है।

पुराणक्रम का ऐतिहासिक कारण—पुराणक्रम के सम्बन्ध में ओझाजी के मत दार्शनिक या धार्मिक या वैज्ञानिक दृष्टि से ही कल्पित किये गये हैं। इन पंक्तियों के लेखक ने पुराणों का ऐतिहासिकदृष्टि से मन्थन किया है, तदनुसार उक्त अठारह पुराणों के नामकरण और क्रम के ऐतिहासिक कारणों का सार इस प्रकार है।

ओझाजी द्वारा पुराणों के नाम और क्रम का कल्पित कारण इस भ्रामक धारणा में है कि श्रीकृष्णद्वैपायन पाराशर्यव्यास पुराणविद्या के मूल या आदि प्रवर्तक थे। परन्तु सत्य यह है कि कृष्णद्वैपायनव्यास, 28 व्यासों में अन्तिम और पुराणों के अन्तिम प्रवक्ता थे, जिस प्रकार कि वे वेदों के अन्तिम व्यास (सम्पादक) थे। इन 28 व्यासों का संक्षिप्त इतिवृत पूर्वपृष्ठों पर लिखा जा चुका है। इन 28 व्यासों के अतरिक्त अन्य अनेक ऋषियों विशेषतः अथर्वाङ्गिरस ऋषियों ने महाभारतयुग (पाराशर्यव्यास) से शताब्दियों ही नहीं सहस्राब्दियों पूर्व इतिहासपुराणों का प्रवचन किया था, जैसा कि ब्राह्मणों और उपनिषदों में उल्लिखित है—'ते वा एतेऽथर्वाङ्गिरस एतदितिहासपुराणमभ्यतपन्' (छा० उ० 3।4।2)।' यह उल्लेख अनेकश मिलता है और न्यायभाष्यकार वात्स्यायन (न्यायभाष्य 4 । 1 । 62) ने इसकी पुष्टि की है।

महाभारतकाल से पूर्व इतिहासपुराण को पञ्चमवेद और वेदों का वेद कहा जाता था। पुराणों में इसी बात को अनेकविध कहा है कि पुराण शतकोटि प्रविस्तर था (इसमें व्यास से पूर्व करोड़ों श्लोक थे), ब्रह्माजी के मुख से सर्वप्रथम पुराण की सृष्टि हुई, इत्यादि कथनों का तात्पर्य यही है कि व्यास से पूर्व पुराणविद्या का बड़ा भारी विस्तार था, उनसे पूर्व कम से कम सैकड़ों इतिहासपुराण ग्रन्थ लिखे जा चुके थे। पाराशर्यव्यास ने प्राचीन पुराणों में से सार ग्रहण करके मात्र चार हजार श्लोकों का एक पुराण रचा, परन्तु प्राचीनतम पुराणसामग्री सर्वथा लुप्त नहीं हुई, उसके अवशेष किसी न किसी रूप में बचे रहे। प्राचीन इतिहासों की पर्याप्त सामग्री महाभारत में साररूप में संग्रहीत कर दी गई और युगानुसार 18 महापुराण एवं 18 उपपुराणों में उस प्राचीन सामग्री का पल्लवन हुआ।

जिस प्रकार अनेक प्राचीन संहिताओं यथा चरकसंहिता सुश्रुतसंहिता, मनुस्मृति, शुक्रनीति के नवीन संस्करण ही इस समय उपलब्ध है, आज यह कोई दावा नहीं कर सकता कि मनुस्मृति, शुक्रनीति, चरकसंहिता या भरत-नाट्यशास्त्र अपने मूल रूप में उपलब्ध हैं, परन्तु जो कोई यह मानता है कि कृतयुग या त्रेतायुग या द्वापर में मनु, शुक्राचार्य (असुरगुरु) या भरत ने कोई ग्रन्थ नहीं लिखे थे, तो ऐसा मानना मूर्खता है। युग युग में इन ग्रन्थों का रूप परिवर्तित होता रहा, सम्भवतः मूलसामग्री तो पूर्णतः या अधिकांश बदल गई भाषा तो बदल दी ही गई, केवल ग्रन्थ का नाम ही मूलरूप में रह गया।

हमारे उक्त विस्तृत कथन का मुख्य तात्पर्य यह है कि अठारह महा-पुराण और अठारह उपपुराण—पाराशर्य व्यास से पूर्व रचे गये थे, इनके अतिरिक्त और भी इतिहासपुराण व्यासपूर्व रचे जा चुके थे। हमारे इस मत का आधार हमारी निजी कल्पना नहीं बल्कि ब्राह्मणग्रन्थों, उपनिषदों, रामायण, महाभारत पुराणों एवं अन्य प्राचीनग्रन्थों में इसके प्रमाण मिलते हैं। अब आगे इन प्रमाणों के निदर्शनमात्र उद्धृत करते हैं।

वायु और वायुपुराण—मातरिश्वा या वायुऋषि द्वितीय वेदव्यास थे, इसने पुरुरवा के यज्ञ में पुराणप्रवचन किया था। वायुप्रोक्त पुराण और गाथाओं का उल्लेख महाभारत में अनेकत्र मिलता है, यथा

एतत्ते सर्वमाख्यातमतीतानागतं तथा।
वायुप्रोक्तमनुस्मृत्य पुराणमृषिसंस्तुतम्।
(वनपर्व 189 14)

स्पष्ट ही उक्त श्लोक में वायुपुराण का उल्लेख है। हरिवंशपुराण में वायुपुराण का स्मरण इस प्रकार है—

वायुप्रोक्ता महाराज पञ्चमं तदनन्तरम्' (हरि० 1 7 25)

मनुस्मृति (9।42) में वायुगीत गाथाओं का उल्लेख है—

अत्र गाथा वायुगीताः

भविष्यपुराण—दाशरथि राम और वाल्मीकि से पूर्व कोई भविष्यपुराण था, जिसका उल्लेख रामायण में हुआ है—

पुराणे हि सुमहत्कार्यं भविष्यं हि मया श्रुतम् ।
दृष्टं मे तपसा चैव श्रुत्वा च विदितं मम ।।

(रा० 4।63।3)

इस भविष्यपुराण में वाल्मीकि रामायण से पूर्व रामावतार का संक्षिप्त इतिहास उल्लिखित था। उपलब्ध भविष्यपुराण से इसका कोई सम्वन्ध नहीं।

नारद और नारदपुराण—इस समय उपलब्ध नारदपुराण का स्वरूप कुछ भी हो, परन्तु नारद ने एक या अनेक पुराणग्रन्थ लिखे थे। छान्दोग्योपनिषद् से स्पष्ट है कि देवयुगीन देवर्पिनारद ने इतिहासपुराण विद्या का अध्ययन किया था और पाराशर्यव्यास से पूर्व कोई पुराण रचा था[1] जिसकी स्मृति वर्तमान नारदपुराण के नाम में अवशिष्ट है। महाभारत (2।5।1) में स्पष्ट ही नारद को इतिहासपुराणज्ञ कहा गया है—

'इतिहासपुराणज्ञः पुराकल्पविशेषवित्

ज्ञाता और विशेषज्ञाता का स्पष्ट अर्थ है उन्होंने इतिहासपुराण लिखे थे।

मार्कण्डेय ऋषि और मार्कण्डेयपुराण—पुरातन मार्कण्डेयपुराण (अनुपलब्ध) के मूल प्रवक्ता शुक्राचार्य के वंशज (मृकण्डु के पुत्र) मार्कण्डेय ऋषि थे। महाभारत वनपर्वान्तर्गत 'मार्कण्डेयसामस्यापर्व' से सिद्ध होता है कि दीर्घजीवी मार्कण्डेय प्राचीनइतिहासपुराणविद्या के विशेषज्ञ थे और उन्होंने पुराण की रचना की थी, जिसकी स्मृति उपलब्ध मार्कण्डेयपुराण में उपलब्ध है—

भवान् दैवतदैत्यानानामृषीणां च महात्मनाम् ।
राजर्षीणां च सर्वेषां चरितज्ञः पुरातनः ।।

(वन० 183।54)

मूलमार्कण्डेयपुराण में देव, दैत्य, ऋषि और राजर्पियों के चरितों का वर्णन था, जिसकी छाया अर्वाचीन मार्कण्डेयपुराण में भी मिलती है।

उशना और बृहस्पति—इन दोनों पुरातन व्यासों ने अनेक लौकिकशास्त्रों के साथ पुराण भी रचे थे। अग्निपुराण का सम्बन्ध अग्नि या अङ्गिरा से हो सकता है, ये अङ्गिरा आङ्गिरस वंश के मूल प्रवर्तक थे। उपपुराणों में एक औशनसपुराण स्मृत है, जो पुरातन औशनसपुराण की स्मृति कराता है। उशना की गाथायें महाभारत में बहुधा स्मृत हैं।

---

1. ऋग्वेदं भगवोऽध्येमि ... इतिहासपुराणं पञ्चमम् (छा० 6।1 2)

पुराणनामकरण की परम्परा—उक्त पुराणनामों से स्पष्ट है कि पुरातन युग में पुराणों का नाम उसके मूलप्रवक्ता के नाम से प्रथित होता था। लेकिन इस समय कुछ पुराणों का नाम देवताओं या अवतारों या आख्यान या घटनाविशेष के नाम से प्रचलित है। इस प्रकार की पुराणनामकरण की प्रथा भी प्राचीनकाल में थी, इसकी पुष्टि ब्राह्मणग्रन्थों से होती है, यथा शतपथ-ब्राह्मण (13।4।3) के पारिप्लवोपाख्यान में मत्स्यों के इतिहास और सुपर्णों के प्राचीनपुराण (सम्भवतः मत्स्यपुराण और गरुड़पुराण) का उल्लेख है। उपलब्ध मत्स्य और गरुड़पुराण उन्हीं पुरातनों पुराणों के अनुकरण पर बनाये गये, कम से कम उनके नामकरण का तो यही प्राचीन आधार था।

प्राचीन ब्राह्मणग्रन्थों में शौनःशेपाख्यान और सौपर्णख्यान का उल्लेख मिलता है। अश्वमेधयज्ञ के अन्त में सम्पूर्ण अश्वमेधयज्ञ में 360 दिन यह पारिप्लवोपाख्यान होता था. अतः प्राचीनयुगों में ये पुराण नहीं होते तो आख्यान कैसे सुनाये जाते, भरतदौष्यन्ति, दाशरथि राम आदि ने शतशः अश्वमेध किये थे, अतः मानना पड़ेगा, इन सम्राटों के समय पुराण अवश्य विद्यमान थे, उपलब्ध पुराण उन्हीं पुरातन पुराणों के विकृत या परिवर्तित रूप हैं।

इस समय इन पुराणों का नाम देवता या महापुरुष (अवतार) के नाम पर प्रचलित है—अग्निपुराण, मत्स्यपुराण गरुडपुराण भागवतपुराण और विष्णु पुराण। ब्रह्मवैवर्त के नाम का आधार दार्शनिक है ब्रह्माण्ड के नाम पर ब्रह्माण्डपुराण है तथा भविष्यपुराण का नाम प्राचीन भविष्यकालिक परम्परा के आधार पर है, यद्यपि इसमें सूर्यदेवता की मान्यता और पूजा का विधान है।

इन सभी पुराणों के मूलप्रवक्ता और मूलरूप पाराशर्य व्यास से प्राचीनतर थे, परन्तु इनका वर्तमान रूप अत्यन्त आधुनिक है, इसका सङ्केत आगे किया जायेगा।

सभी पुराणों के मूलप्रवक्ता प्राक्पाराशर्य थे, इसकी पुष्टि पुराणों-ल्लिखित व्यासपरम्परा से तो होती ही है विष्णुपुराण का यह कथन भी इस मत को पुष्ट करता है, उसमें विष्णुपुराण के प्रवचन की एक पृथक् परम्परा ही मिलती है जो अन्य पुराणोक्त व्यास परम्पराओं से भिन्न है—

विष्णुपुराण के प्रवचनकर्त्ता

(1) ब्रह्मा
(2) ऋभु (या ऋषभ) और प्रियव्रत
(3) भागुरि
(4) स्तम्भमित्र
(5) दधीचि
(6) सारस्वत (अपान्तरतमा, नवमव्यास)
(7) भृगु (या कोई भार्गवऋषि)
(8) पुरुकुत्स
(9) नर्मदा (पुरुकुत्स की पत्नी)
(10) धृतराष्ट्र नागराज और आपूरण
(11) वासुकि
(12) वत्स
(13) अश्वतर
(14) कम्बल
(15) ऐलापुत्र
(16) वेदशिरा:
(17) प्रमिति (वासिष्ठ)
(18) जातूकर्ण (पाराशरगोत्रीय)
(19) पराशर (व्यासपिता)
(20) मैत्रेय (बकदाल्भ्य)
(21) शिनीक

अतः प्राचीन विष्णुपुराण के प्रमुख प्रवक्ता कृष्णद्वैपायन के पिता पराशर मुनि थे—सोऽहं वदाम्यशेषं ते मैत्रेय परिपृच्छते।
पुराणसंहितां सम्यक् तां निबोधयथातथम् ॥ (विष्णु पु० 1।1।30)

उपलब्ध विष्णुपुराण पाराशर की कृति नहीं है, इसको उसकी छायानुकृति कह सकते हैं। उपलब्ध विष्णुपुराण का रचनाकाल आगे कथित होगा।

उपर्युक्त विवेचन से सिद्ध हुआ है कि पाराशर्य व्यास से पूर्व अनेक पुराणों की रचना हुई, उनके अनुकरण पर ही उपलब्ध महापुराण और उपपुराण

रचे गये ।उपलब्ध पुराणों में पर्याप्त साम्प्रदायिक तत्त्व होते हुये भी प्राचीन इतिहास सामग्री बहुलांशेन सुरक्षित है।

पुराणविषयविवेचन—पुराणों के पञ्चलक्षणों का विवेचन आगे के प्रकरण में किया जायेगा। पुराण के पाँच विषयों के अतिरिक्त चार प्रधान विषय और थे-आख्यान, उपाख्यान, गाथा और कल्पशुद्धि—

आख्यानैश्चाप्युपाख्यानैर्गाथाभिः कल्पशुद्धिभिः ।
पुराणसंहितां चक्रे पुराणार्थविशारदः ।।

व्यासजी ने अपनी पुराणसंहिता में आख्यानादि चार विषयों पर विशेष हस्तक्षेप किया। क्योंकि प्राचीनपुराणों में विस्तृत आख्यान और उपाख्यान थे, उन्होंने इन आख्यानादि को बहुत संक्षिप्त कर दिया और बहुत से उपाख्यान निकाल ही दिये, इसी प्रकार व्यासपुराणसंहिता में स्वल्प गाथायें ही समाविष्ट थी क्योंकि चतुःसाहस्रीसंहिता में विषय का अधिक विस्तार नहीं हो सकता था। इसीलिये वायुपुराणादि उपलब्ध पुराणों में बहुत कम और लघु आख्यान एवं उपाख्यान मिलते हैं।

'कल्प शब्द के व्याख्यान में विद्वानों में मतभेद है। पं. गिरधर शर्मा आदि इसका अर्थ प्रचलित एवं प्रसिद्ध कल्पसूत्रादि से ही ग्रहण करते हैं। न्यायसूत्र (2।1।64) में पुराकल्प को अर्थवाद बताया है। पुरानी घटना भी पुराकल्प कही जाती थी, यथा—

श्रूयते पुराकल्पे नृणां व्रीहिमयः पशुः ।'
'पुराकल्पे कुमारीणां मौञ्जीबन्धनमिष्यते ।'
श्रूयते हि पुराकल्पे गुरूननुमान्य यः "।'

(पुराणपञ्चलक्षण)

पुराण के प्राचीन सर्वमान्य पाँच विषय थे—सर्ग, प्रतिसर्ग, वंश, मन्वन्तर और वंशानुचरित—

सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वन्तराणि च ।
वंशानुचरितं चैव पुराणं पञ्चलक्षणम् ।।

सर्ग—पुराणों में सांख्यमतानुसार जगतसृष्टि का वर्णन किया गया है। इस सृष्टि को सर्ग कहते हैं—

अव्याकृतगुणक्षोभात् महतस्त्रिवृतोऽहमः ।
भूतेमात्रेन्द्रियार्थानां सम्भवः सर्ग उच्यते ॥

"मूल प्रकृति में गुणों के सक्रिय होने पर महान् (बुद्धि) उत्पन्न होने से तीन प्रकार (तामस, राजस और सात्विक) के अहंकार की सृष्टि होती है। त्रिविध अहंकार से भूततन्मात्रा, इन्द्रिय और पञ्चभूत उत्पत्ति को सर्ग कहते हैं।"

प्रतिसर्ग—लय, प्रलय, प्रतिसंचर, संस्था आदि इसी के पर्याय हैं। सृष्टि के संहार को ही प्रतिसर्ग कहा जाता है, यह प्रलय चार प्रकार की कही गई है— नैमित्तिक, प्राकृतिक, नित्य और आत्यन्तिक। निमित्तकारण से प्रलय नैमित्तिक, स्वयंलय प्राकृतिक, सनातन या सतत विनाश नित्य और सर्वथा नाश आत्यन्तिकप्रलय कहलाता है।

वंश— पाँच प्रकार के वंशों का वर्णन पुराणों का प्रधानविषय है—

ऋषिवंशः पितृवंशः सूर्यचन्द्राग्निवंशकाः ।
इत्थं वंशविभागेऽपि पुराणं पञ्चलक्षणम् ॥

ऋषिवंश, पितृवंश, सूर्यवंश, चन्द्रवंश, और अग्निवंश का वर्णन भी पुराणों के पाँच विषय हैं।"

वंशानुचरित—उक्त वंशों के प्रधानवंशप्रवर्तक एवं श्रेष्ठ महापुरुषों का चरित ही वंशानुचरित का विषय है—

ऋषीणां देवयोनीनां राज्ञां सूर्यादिवंशिनाम् ।
देवासुराणामन्येषां चेहानुचरितं स्तुतम् ॥

मन्वन्तर—पुराणों में चौदह मनुओं का वर्णन, कालविभाग—आदि मन्वन्तर कहा जाता है।

दशलक्षण—भागवतपुराण, जो एक अर्वाचीन और साम्प्रदायिकग्रन्थ है, उसमें पुराण के दशलक्षण (विषय) बताये गये हैं—सर्ग, विसर्ग, वृत्ति रक्षा, मन्वन्तर, वंश, वंशानुचरित, संस्था, हेतु और अपाश्रय।

षष्ठ-अध्याय

पुराणपरिचय

पुराणों के क्रमिक नाम पहिले लिखे जा चुके हैं, अब उनका, संक्षेप में परिचय लिखते हैं ।

ब्रह्मपुराण—इसमें 245 अध्याय और 14000 श्लोक हैं । इसकी विषयानुक्रमणिका इस प्रकार है— पूर्वभाग में—दक्षादि प्रजापति वर्णन, दैत्य-दानव उत्पत्ति, सूर्यवंश और सोमवंश का संक्षिप्तवर्णन रामावतारकथा, कृष्णचरित पार्वती-आख्यान उत्तरभाग में पुरुषोत्तमवर्णन, तीर्थयात्रावर्णन, पितृश्राद्धविधिवर्णन, वर्णाश्रम, धर्मवर्णन, वैष्णवधर्म, युगवर्णन, सांख्ययोगवर्णन ।

इस पुराण की कुछ विशेषतायें हैं—अध्याय 30 से 40 तक पार्वती-आख्यान, अध्याय 70 से 175 तक तीर्थमहात्म्यवर्णन कृष्णचरित का वर्णन 180 से 212 तक, सांख्ययोग का प्राचीन वर्णन—इस पुराण की कुछ अपनी विशेषतायें हैं । इस पुराण में उड़ीसा के भुवनेश्वर क्षेत्र में स्थित कोणादित्य के मन्दिर के उल्लेख केआधार पर कुछ आधुनिक विद्वान् इस पुराण को 11वी ईस्वी शती की रचना मानते हैं । इस प्रकरण में (पु० 28 से 33) छः अध्याय में सूर्यपूजा का विशिष्ट वर्णन है । ब्रह्मपुराण और महाभारत (शान्तिपर्व) के अनेक प्रकरण, अध्याय और श्लोक समानप्रायः हैं, उदाहरणार्थ दोनों में वसिष्ठ और कराल जनक का सांख्यसम्बन्धी संवाद पर्याप्त मिलता जुलता है । अतः इस पुराण को अर्वाचीन मानना महती भ्रान्ति है, हाँ अन्य सभी पुराणों के समान इसमें भी हस्तक्षेप अवश्य हुआ है

पद्मपुराण—यह एक विशालकाय ग्रन्थ है । इसके दो संस्करण प्राचीनतर है, वे इस प्रकार हैं—

(1) सृष्टिखण्ड (2) भूमिखण्ड (3) स्वर्गखण्ड (4) पातालखण्ड और पञ्चम (5) उत्तरखण्ड । सम्पूर्ण पुराण में लगभग 55000 श्लोक हैं ।

सृष्टिखण्ड में 82 अध्याय हैं, इस खण्ड में पुलस्त्य ने भीष्म के प्रति पुष्करमहात्म्य, समुद्रमन्थन, वृत्रवध, वामनावतार कार्तिकेयजन्म, रामचरित आदि विस्तार से कथित हैं।

भूमिखण्ड में शिवशर्माकथाप्रसङ्ग में सुव्रतकथा, वृत्रवध पृथूपाख्यान, धर्माख्यान, ययातिचरित जैमिनिसंवाद, हुण्डदैत्यवध, विहुण्डवध, सिद्धाख्यानादि वृतान्त हैं।

स्वर्गखण्ड में ब्रह्माण्डोत्पत्ति, भुवनकोश, तीर्थमहात्म्य, कर्मयोगनिरूपण, समुद्रमन्थनकथा, आदि वर्णित हैं। इसी खण्ड में शाकुन्तलोपाख्यान मिलता है जो कालिदासकृत नाटक अभिज्ञानशाकुन्तल से मिलता जुलता है, इसी प्रकार इसमें विक्रमोर्वशीनाटक के कथानक से साम्य है।

चतुर्थ, पातालखण्ड में रामायणकथा विस्तार से कथित है। रामाश्वमेध प्रसङ्ग में नागलोक का विस्तार से वर्णन है, प्रसङ्गतः अनेक तीर्थों का उल्लेख हुआ है। रामचरित भवभूति के उत्तररामचरित से समता रखता है, इसमें भागवतपुराण का उल्लेख है। कालिदास और भवभूति के काव्यों से समानता पद्मपुराण के वर्तमानपाठ को अत्यन्त उत्तरकालीन, सम्भवतः सातवीं शती का सिद्ध करती है।

पञ्चम, उत्तरखण्ड में पर्वताख्यान, जालन्धरकथा, तीर्थवर्णन और व्रतों का विस्तार से कथन है, वस्तुतः यह पुराण वैष्णवसम्प्रदाय का है और मध्यकाल, गुप्तकाल के अनन्तर इसको यह साम्प्रदायिकरूप दिया गया है।

विष्णुपुराण—पहिले बताया जा चुका है कि इस पुराण की प्रवक्तृपरम्परा अन्यपुराणों से कुछ भिन्न है, इसका मूल प्राग्महाभारतकालीन होने पर भी वर्तमान पाठ गुप्तकालीन (200 विक्रमसम्वत्) ही है, इसमें भी वैष्णव भक्ति का प्राबल्य है, विशेषत प्रह्लादकृत विष्णुभक्ति का विस्तार से वर्णन है जब कि हरिवंशपुराण में प्रह्लाद के भक्तरूप का सर्वथा अभाव है, अतः विष्णुपुराण जब पुनः संस्कृत हुआ जब वैष्णव भक्ति का प्राबल्य होगया था।

बृहन्नारदीयपुराण में इसके 23000 श्लोक बताये गये हैं। परन्तु इस समय यह पुराण दो पृथक् पृथक् खण्डों में मिलता है। इसका प्रथम खण्ड

या भाग ही विष्णुपुराण कहा जाता है, जिसमें 6 अंश (खण्ड और 126 अध्याय तथा श्लोक लगभग छः हजार है, । इसका द्वितीय भाग विष्णुधर्मोत्तर के नाम से पृथक् प्रकाशित है, जिसमें सोलह हजार से अधिक श्लोक हैं।

इस पुराण के छः अंशों की विस्तृत विषयसूची इस प्रकार है—
प्रथम अंश में— सर्गवर्णन, देवदैत्यादि सम्भवकथा, समुद्रमन्थनाख्यान, प्रजापतिवर्णन, ध्रुवचरित, पृथुचरित, प्राचेतसाख्यान, प्रह्लादचरित।

द्वितीयअंश में—पाताल और नरकवर्णन, सप्तसर्गनिरूपण, भुवनकोश, ऋषभभरतादिचरित, निदाघऋभुसंवाद।

तृतीय अंश में—मन्वन्तरकथा, वेदव्यासपरम्परा, सर्वधर्मनिरूपण' श्राद्धकल्प वर्णाश्रमधर्म, महामोहकथा।

चतुर्थ अंशमें विस्तार से सूर्यवंश और चन्द्रवंश की वंशावली और इतिहास वर्णित हैं।

पञ्चम अंश में—साररूप में कृष्णचरित वर्णित है।

षष्ठ अंश में—कलिवर्णन, खाण्डिक्य और केशिध्वज का ब्रह्मविद्या सम्बन्धि संवाद वर्णित है।

वायुपुराण प्राचीनता और प्रामाणिकता की दृष्टि से वायुपुराण अत्यन्त महत्वपूर्ण है, इसका वर्णन पूर्वपृष्ठों पर किया जा चुका है, कुछ लोग इसके स्थान पर शिवपुराण को प्रस्थापित करते हैं जो सर्वथा अलीक एवं साम्प्रदायिक पक्षपात से परिपूर्ण मत है।

वायुपुराण के मूल और प्राचीनता का पहिले प्रतिपादन हो चुका है। अधिसीमकृष्ण के राज्यकाल (2800 वि० पू०) में जब वर्तमान वायुपुराण का संस्करण बनाया गया, तब उसमें 12000 श्लोक और चार पाद थे—

एवं द्वादशसाहस्रं पुराणं कवयो विदुः।
यथा वेदश्चतुष्पाद श्चतुष्पादं यथा युगम्।
चतुष्पादं पुराणं तु ब्रह्मणा विहितं पुरा। (वायु पु०)

"जिस प्रकार वेद में चार पाद (चारभाग ऋग्वेदादि) और युग के चार पाद (कृतयुगादि) है, इसी प्रकार इस पुराण में चारपाद हैं, जिस प्रकार

इस पुराण में 12000 श्लोक है, उसी प्रकार चार युगों में 12000 वर्ष होते हैं।"

लोमहर्षण के जिन सुमति आत्रेय आदि छः शिष्यों ने पुराण संहितायें रची उनमें शांशपायन पुराणसंहिता को छोड़कर चार-चार सहस्रश्लोक थे।

वायुपुराण के चार पाद इस प्रकार हैं—

(1) प्रक्रियापाद (2) उपोद्‌घातपाद (3) अनुषंगपाद और (4) उपसंहारपाद।

इस समय मुद्रित वायुपुराण में प्रायः 11000 श्लोक और 112 अध्याय मिलते हैं। इस समय भी इसके लगभग एक सहस्र श्लोक लुप्त या अस्तव्यस्त हैं।

वायुपुराण का सर्वाधिक महत्त्व है कि यह पञ्चलक्षणों से समन्वित पूर्ण-पुराण है, इसके ऐतिहासिकवर्णन अत्यन्त प्रामाणिक हैं, जिनका अन्य पुराणों यहाँ तक कि हरिवंश जैसे प्राचीन पुराणों ने अनुकरण किया है। विशेषतः मन्वन्तरवर्णन, युगवर्णन, वंशवर्णन और वंशानुचरित एवं भूगोल वर्णन अत्यन्त प्रामाणिक तथा प्राचीन हैं, इसके कुछ निदर्शन आगे उद्‌धृत किये जायेंगे।

इस पुराण पर शैवसम्प्रदाय विशेषतः पाशुपत मत का प्रभाव है, इतना होते हुए भी इसमें साम्प्रदायिक दोष नहीं हैं, पाशुपतयोग का वर्णन अध्याय 11 से 15 तक सविस्तार मिलता है जो अन्यत्र अलभ्य है।

मत्स्यादिपुराणों में वायुपुराण की श्लोक संख्या 24000 बताई गई है, परन्तु वह इसकी न होकर आधुनिक शैवपुराण की है। इसका परिचय अन्यत्र लिखा जायेगा।

भागवतपुराण—पुराणक्रम में इसका पाँचवा स्थान निर्दिष्ट है। इसमें पुराण के पांच के स्थान पर दशलक्षण बताये गये हैं—

सर्गश्चाथ विसर्गश्च वृती रक्षान्तराणि च।
वंशो वंशानुचरितं संस्था हेतुरपाश्रयः॥

(भागवत पु० 12। 7। 9)

इस पुराण के पाँच अतिरिक्त लक्षण—वृत्ति, रक्षा, विसर्ग, हेतु और अपाश्रय का सम्बन्ध प्रायः विष्णु के अवतार और वैष्णवभक्ति से है, स्पष्ट है कि जब यह पुराण लिखा गया उस समय पुराणपञ्चलक्षण का प्राबल्य नहीं था, तथा पुराणविद्या ने पूर्णतः साम्प्रदायिकरूप धारण कर लिया था।

यहाँ पर विविध सृष्टि (विशेपतः जीवसृष्टि) को 'विसर्ग' कहा गया है। 'वृत्ति' जीवन यापन (रोजी-रोटी) को कहते हैं। 'रक्षा' का सम्बन्ध पूर्णतः वैष्णव अवतारों द्वारा जगद्रक्षा से है। हेतु 'विष्णु' रूपी कारण और ईश्वरशरण ही 'अपाश्रय' है।

अष्टादश पुराणों में भागवतपुराण का बड़ा समादर है, परन्तु उसकी ऐतिहासिक सामग्री अधिक प्रामाणिक नहीं है, क्योंकि एक अर्वाचीन और साम्प्रदायिक रचना है जिसका मुख्य उद्देश्य वैष्णवभक्ति का निरूपण करना है, जो सामग्री प्राचीनपुराणों से ग्रहण की है, उसको छोड़कर इसकी निजी सामग्री ऐतिहासिक दृष्टि से हीनकोटि की है, यद्यपि भाषा, भाव और काव्य सौष्ठव क़ी दृष्टि से न केवल पुराणों में बल्कि श्रेष्ठतम काव्यों से भी श्रेष्ठतर है, परन्तु इसका ऐतिहासिक आधार प्रायः निर्मूल है। उदाहरणार्थ, भागवत-पुराण का प्रारम्भ ही इस कथानक से होता है कि तक्षकनाग के भय से आसन्नमृत्यु राजा परीक्षित् को व्यासपुत्र शुकदेव ने भागवतपुराण सुनाया। महाभारत के प्रमाण्य से इस कथानक मिथ्यात्व सिद्ध होता है। प्रथम, महा-भारत आदिपर्व में जनमेजय के नागयज्ञ से पूर्व परीक्षित् का आख्यान विस्तार से कथित है, परन्तु वहाँ इस बात का रञ्चमात्र भी संकेत नहीं है कि परीक्षित का वैयासिक शुक से सम्पर्क हुआ था, बल्कि इसके विपरीत शान्तिपर्व में पितामह भीष्म युधिष्ठिर को व्यासपुत्र शुकदेव के ब्रह्मलोकगमन की कथा विस्तार से सुनाते हैं, अतः युधिष्ठिर के राज्याभिषेक से पूर्व ही शुकदेव इस धराधाम से ऊर्ध्वलोक में चले गये थे, तब उनका परीक्षित् से साक्षात्कार होने का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता, अतः भागवत का यह कथानक इतिहासविरुद्ध है और वेदव्यास द्वारा इसे रचे जाने की बात तो पूर्णतः कपोल कल्पना है, इसका रचनाकाल पुराणरचनाकाल-प्रकरण में लिखेंगे।

भगवतपुराण का प्रतिद्वन्द्वी, देवीभागवतपुराण है, क्योंकि दोनों ही पुराण साम्प्रदायिक है, प्रथम वैष्णव तो दूसरा शाक्त, अतः परस्पर यह विवाद है

कि दोनों में कौन सा महापुराण है। इस सम्बन्ध में भागवतपुराण का पक्ष ही अधिक प्रबल है। उदाहरणार्थ मत्स्यपुराण में लिखा है कि जिस भागवत का समारम्भ गायत्री से होता है, वही असली महापुराण भागवत है।[1] इसी प्रकार वामनपुराण में उल्लेख है कि जिसमें वृत्रवधादि वर्णन है, वही भागवत है।[2]

बल्लालसेन[3] (दानसागर ग्रन्थ में) और अलबेरूनी ने भी अठारह पुराणों में भागवत की गणना की है, न कि देवीभागवत की। इन दोनों ग्रन्थकारों का समय ग्याहरवीं शती के लगभग था।

भागवत के विषयगाम्भीर्य और वैशिष्ट्य का वर्णन अन्य प्रकरण में किया जायेगा, यहाँ पर इसका केवल श्लोकविस्तार आदि लिखते हैं। श्लोकसंख्या के सम्बन्ध में श्लोक प्रसिद्ध है—

श्रीमद्भागवतं नाम पुराणं ब्रह्मसंमितम्।
तदष्टादशसाहस्रं कीर्तितं पापनाशनम्॥

इसके अठारह स्कन्धों के प्रधान विषय इस प्रकार हैं—सूत-ऋषि संवाद, व्यासचरित, पाण्डवकथा और पारीक्षितोपाख्यान। पारीक्षित्शुकसंवाद, ब्रह्मनारदसंवाद, अवतारकथा, पुराणलक्षण, सृष्टिकथन, विदुर-चरित, मैत्रेय विदुरसंवाद कपिलसांख्यवर्णन, ध्रुवचरित, पृथूपाख्यान, प्राचीनबर्हिश्चरित, प्रियव्रतचरित, तद्वंशवर्णन, भुवनकोश, अजामिलचरित, दक्षकथा, वृत्रवधाख्यान, मरुज्जन्म, प्रह्लादचरित, गजेन्द्रमोक्ष, मन्वन्तरवर्णन, समुद्रमथन, वामनावतार, मत्स्यावतार, सूर्यवंश, सोमवंश, वंशवर्णन, कृष्णचरित, वेदान्तवर्णन, कलिवर्णन, वेदशाखाविस्तार, मार्कण्डेयाख्यान।

नारदपुराण—इस नाम से एकाधिक पुराण मिलते हैं, देवर्षिनारदकृत मूलपुराण के नाम के अतिरिक्त इसमें मूलसामग्री का कितना अवशेष बचा है, यह कहना कठिन है। छान्दोग्योपनिषद्[4] के प्रमाण से ज्ञात होता है कि

---

1. यत्राधिकृत्य गायत्रीं वर्ण्यतेधर्मविस्तरः, वृत्रासुरवधोपेतं तद्भागवतमिष्यते।
2. हयग्रीवब्रह्मविद्या यत्र वृत्रवधस्तथा, गायत्र्या च समारम्भस्तद्वै भागवतं विदुः।
3. भागवतं च पुराणं ब्रह्माण्डं चैवं नारदीयं च।
दानविधिशून्यमेतत् त्रयमिह न निबद्धमवधार्यं॥ (दानसागर)
4. ऋग्वेदं भगवोऽध्येमि········· (छा० उ०)

देवर्षि नारद ने वेद और वेदाङ्ग सहित अनेक प्राचीन विद्याओं का अध्ययन किया था, यह सम्भव है कि मूल नारदपुराण में इन विद्याओं का समास या व्यासरूप से वर्णन हो, उसी के अनुकरण पर अर्वाचीन नारदपुराण में प्राचीन विद्याओं का वर्णन किया गया हो।

नारदपुराण में 25000 श्लोक हैं और यह दो भागों में विभक्त है—पूर्व भाग और उत्तरभाग। पूर्वभाग में 125 अध्याय तथा उत्तरभाग में 82 अध्याय हैं।

पूर्व भाग में चातुराश्रम्य और चातुर्वर्ण्य वर्णित है, तदनन्तर मोक्षवर्णन, वेदाङ्गनिरूपण, शुककथा, गणेश सूर्यादि स्तोत्र, पुराणलक्षण, दानविधि, व्रत आदि वर्णित हैं। उत्तर भाग में एकादशीव्रत, वशिष्ठमान्धातासंवाद, रुक्मांगदकथा, गंगावतरण, काशिमहात्म्य, तीर्थमहात्म्य, मोहिनीचरितादि कथित हैं।

मारकण्डेयपुराण—इसमें पुरातन मार्कण्डेयपुराण की छाया अवश्य ही विद्यमान है। इसमें विशेषतः वंशवर्णन और वंशानुचरित प्रमुख लक्षण हैं। मन्वन्तरवर्णन और भुवनकोश इसमें प्रामाणिकरूप से कथित हैं। कुछ प्राचीन राजाओं यथा खनित्र, अविक्षित् नष्यन्त आदि का चरित्र इसी पुराण में मिलता है। मदालसाचरित और दुर्गासप्तशती इस पुराण की अन्य दो महत्वपूर्ण कृतियाँ हैं।

मार्कण्डेयपुराण में 9000 श्लोक और 137 अध्याय हैं।

अग्निपुराण—इसमें 15400 श्लोक और 283 अध्याय हैं। यह एक प्रकार से प्राचीन विद्याओं का विश्वकोश है। इसके कुछ विषय हैं—अवतार, पूजाविधि, मुद्रादिलक्षण, यज्ञविधि, ब्रह्माण्डवर्णन, तीर्थवर्णन, युद्धनीति, ब्रह्मचर्यधर्म, श्राद्धकल्प, श्रौतयज्ञ, तिथि, व्रत, दान, नाडीचक्र, राजाभिषेक, राजनीति, शकुनशास्त्र, रत्नपरीक्षा, धनुर्विद्या, आचारधर्म, आयुर्वेद, गजायुर्वेद, छन्दशास्त्र, साहित्य, साहित्यशास्त्र, शरीरविज्ञान, योग और ब्रह्मविद्या।

भविष्यपुराण—इसकी परम्परा अत्यन्त पुरातन है, एक भविष्यपुराण वाल्मीकि से पूर्व भी विद्यमान था, जिसका संकेत हम पूर्व कर आये हैं, एक भविष्यपुराण का उल्लेख आपस्तम्बधर्मसूत्र में है। अर्वाचीनकाल में, सम्भवतः

इस नाम के अनेक पुराण थे, और उनके प्रतिनिधि अब भी चार भविष्यपुराण मिलते हैं। व्यासशिष्यों द्वारा प्रणीत भविष्यपुराण में 14000 श्लोक और पाँच पर्व हैं—(1) ब्राह्म (2) विष्णु (3) शिव (4) सूर्य और (5) प्रतिसर्ग। भविष्यपुराण का मूल विषय भविष्यकालिक ऐतिहासिक घटनाओं का वर्णन करना था, परन्तु इस समय यह एक साम्प्रदायिक ग्रन्थ बन गया, जिसमें मुख्य सौर सम्प्रदाय का वर्णन है।

भविष्यपुराण की संक्षिप्त विषयसूची इस प्रकार है—सूतशौनकसंवाद, आदित्यचरित, पुस्तकलेखकलक्षण, संस्कारलक्षण, शैव और वैष्णव धर्मों का निरूपण इत्यादि। इस पुराण का एक प्रसिद्ध और प्रमुख विषय है सूर्यपूजा का वर्णन और तत् प्रसंग में कृष्णपुत्र साम्ब के कुष्ठरोगनिवारणार्थ शाकद्वीपीय ब्राह्मणों का भारतवर्ष में आगमन। इसके अतिरिक्त इस पुराण में अर्वाचीनतम राजवंशों और महापुरुषों का उल्लेख किया गया है, यह समस्त विषय निश्चय ही आधुनिक और भविष्यपुराण की परम्परा की आड़ में समाविष्ट किया गया है।

ब्रह्मवैवर्त्त पुराण—यह सम्भवतः प्राग्महाभारत पुराणों (यथा वायु० मार्क०) की श्रेणी में नहीं आता। यह नामकरण दार्शनिक भावभूमि पर आधारित है जैसा कि स्वयं इसी पुराण में उल्लिखित है—

विवृत्तं ब्रह्म कार्त्स्न्येन कृष्णेन यत्र शौनक।
ब्रह्मवैवर्तकं तेन प्रवदन्ति पुराविदः॥ (ब्र० वै० 1।1।10)

"कृष्ण द्वारा ब्रह्म या ईश्वर को प्रकाशित करने के कारण इसका ब्रह्मवैवर्त नाम पुराणज्ञों में प्रसिद्ध है।"

इस पुराण में 18000 श्लोक, 133 अध्याय और चार खण्ड हैं—(1) ब्रह्म (2) प्रकृति (3) गणेश और (4) कृष्णजन्मखण्ड। इसके प्रवक्ता श्रीकृष्ण बताये गये हैं, इससे भी इस पुराण की अर्वाचीनता स्पष्ट होती है। इसमें कृष्णचरित का विस्तृत वर्णन हैं तथा राधा का उल्लेख इस पुराण की अपनी विशेषता है।

लिंगपुराण—इसका नाम भी प्रायः दार्शनिक या साम्प्रदायिक वर्णन होने

के कारण इसका यह नाम रखा गया। शैवदर्शन या शैव तन्त्रानुसार इस पुराण में पशु, पाश और पशुपति का व्याख्यान है।

इस पुराण में 11000 श्लोक, 163 अध्याय और दो भाग हैं—(1) पूर्व भाग तथा (2) उत्तरभाग। इसके प्रमुख वर्णन हैं—योगाख्यान, कल्पाख्यान, लिङ्गोत्पत्ति और उसकी उपासना, सनत्कुमार-पर्वत संवाद, दधीचिचरित, युगधर्म, और शैव अवतारों, व्रतों और तीर्थों का विस्तृत वर्णन है। यह ग्रन्थ शिवमहात्म्य से समन्वित शैवसम्प्रदाय का ग्रन्थ है।

वराहपुराण—यह वैष्णव सम्प्रदाय का पुराण है, इसमें विष्णु के वराहावतार का विशिष्ट वर्णन होने से यह नाम पड़ा।

नारदपुराण की पुराणविषयानुक्रमणिका के अनुसार इसमें 24000 श्लोक होने चाहिये, परन्तु प्रकाशित ग्रन्थ में केवल 10700 श्लोक ही हैं। इसके मुख्य विषय हैं—भूमि-वराहसंवाद, रैभ्यचरित, महातपकथा, गौरीचरित, विनायकचरित, अगस्त्यगीता, रुद्रगीता, महिषासुरवध, श्वेतोपाख्यःन, मथुरामहात्म्य गोकर्णमहात्म्य इत्यादि।

स्कन्दपुराण— इस पुराण का मूल अतिप्राचीन हो सकता है, क्योंकि इसका सम्बन्ध देवर्षि नारद के गुरु सनत्कुमार ऋषि से है, सनत्कुमार के ही अपर नाम थे—स्कन्दकुमार और कार्त्तिकेय। यह एक पुरार्णिष थे, जिनका पुराणविद्या से घनिष्ठ सम्बन्ध था। लेकिन उपलब्ध स्कन्दपुराण की विषय-सामग्री, भाषा आदि सब कुछ अत्यन्त आधुनिक और अर्वाचीन है। विशालता की दृष्टि से यह अनन्य पुराण है परन्तु ऐतिहासिक सामग्री की दृष्टि से हीन कोटि का है।

स्कन्दपुराण में 81000 श्लोक और सप्त खण्ड हैं (1) माहेश्वर (2) वैष्णव (3) ब्रह्म (4) काशी (5) रेखा और प्रभासखण्ड। इस पुराण का अन्य विभाग संहिता के रूपों में मिलता है—(1) सनत्कुमारसंहिता (36000 श्लोक), (2) सूतसंहिता (6000 श्लोक), (3) शंकरसंहिता (30000 श्लोक), (4) वैष्णवसंहिता (5000 श्लोक), (5) ब्राह्मसंहिता (30000 श्लोक), और सौरसंहिता (1000 श्लोक)।

इस विशाल ग्रन्थ के अनेक अंश स्वतन्त्र पुस्तकों के रूप में प्रकाशित हैं, यथा रेवाखण्ड में सत्यनारायणव्रतकथा सम्पूर्णभारत में अत्यन्त लोकप्रिय और प्रचलित है।

इस समय इस पुराण का खण्ड रूप ही उपलब्ध है। इस पुराण में व्रतों और तीर्थों का बड़े विस्तार से वर्णन है। मध्यकालीनभारतीयसामाजिक इतिहास के लिए स्कन्दपुराण का अनुसंधान अत्यन्त उपयोगी रहेगा। इस पुराण में अनेक उपाख्यानों का वर्णन भी है तथा मन्दिरों का इतिहास उल्लिखित है। भूगोलज्ञान के लिए भी यह अत्यन्त उपयोगी ग्रन्थ है।

वामनपुराण—इसका नाम विष्णु के वामनावतार पर आधारित है।

इसमें 10000 श्लोक और 95 अध्याय है। इसके दो भाग है—(1) पूर्वभाग और (2) उत्तरभाग।

इसके कुछ प्रमुख वर्णन हैं—दक्षयज्ञविध्वंस, कामदहन, प्रह्लादनारायणयुद्ध भुवनकोश, तपतीचरित, धुन्धुचरित, सूर्यमहिमा, गणेशचरित, इत्यादि। इस वैष्णवपुराण में शैवकथानकों का विशिष्ट वर्णन इस पुराण को साम्प्रदायिकता से पृथक् करता है।

कूर्मपुराण—विष्णु का कूर्मावतार (कच्छपरूप) प्रसिद्ध है। ऋग्वेद के कुछ मन्त्रों के द्रष्टा कूर्म गार्त्समद ऋषि थे, यह सम्भव है कि कूर्मऋषि ने अतिप्राचीनकाल में कूर्मपुराण का प्रवचन किया हो, परन्तु इस समय तो कूर्मपुराण का सम्बन्ध कूर्मावतार से ही माना जाता है।

कूर्मपुराण में 18000 श्लोक निर्दिष्ट है और इसकी चार संहितायें थी—(1) ब्राह्मी (2) भागवती (3) सौरी और (4) वैष्णवी। परन्तु इस समय ब्राह्मीसंहिता के ही 6000 श्लोक मिलते हैं जो कूर्मपुराण कहे जाते हैं। इस संहिता के दो भाग हैं—पूर्व और उत्तर जिनमें क्रमशः 52 और 44 अध्याय हैं। पूर्वभाग में लक्ष्मीप्रद्युम्नसंवाद, सर्गवर्णन, योगवर्णन, ऋषिवंश, युगधर्मवर्णनादि। उत्तरभाग में ईश्वरगीता और व्यासगीता प्रमुख प्रकरण हैं।

मत्स्यपुराण—इस पुराण का मूल पहिले बताया जा चुका है। इस पुराण की प्रामाणिक श्लोकसंख्या 14000 और 291 अध्याय है। यह पुराण प्राय

पुराणपञ्चलक्षण से समन्वित है। वंशों और वंशानुचरितो का विस्तृत वर्णन किया गया है। इस पुराण के कुछ विशिष्ट वर्णन हैं=मत्स्यमनुसंवाद, ब्रह्माण्डोत्पत्ति, देवादिसृष्टि, मन्वन्तरकथन, सूर्यवंश, चन्द्रवंश, पितृवंश, श्राद्ध-कल्प, व्रतवर्णन, तीर्थमहात्म्यकथन, पार्वतीचरित, कुमारसम्भव, तारकवध, वाराणसीमहात्म्य, प्रवरवर्णन और भविष्यराजवंशवर्णन।

मत्स्यपुराण में समस्त पुराणों की विषयानुक्रमणिका (53 अध्याय) मिलती है। ऋषिवंशों का, विशेषतः प्रवरों का वर्णन तथा भविष्य राजाओं में विशेषतः आन्ध्रसातवाहनवंशवर्णन उपादेय है।

गरुड़पुराण=इसमें 18000 श्लोक और 264 अध्याय हैं। यह पुराण दो खण्डों में विभक्त हैं=(1) पूर्वखण्ड और (2) उत्तरखण्ड। उत्तरखण्ड को प्रेतकल्प भी कहते हैं।

पूर्वखण्ड के प्रमुख विषय हैं—योग, विष्णुसहस्रनाम विविध विद्याओं का वर्णन यथा रत्नपरीक्षा, राजनीति, आयुर्वेद, छन्दःशास्त्र, सांख्ययोग इत्यादि। प्रेतकल्प में प्रेतविद्या का विस्तार से प्रतिपादन है, इसमें शरीरविज्ञान और परलोकविद्या का एकत्र विस्तृत आख्यान है। विशेषतः किसी के मरने पर अथवा श्राद्ध केसमय 'प्रेतकल्प' का पाठ किया जाता हैं।

ब्रह्माण्डपुराण—यह मूल में प्राचीन वायुपुराण का पाठान्तर मात्र है, तदनुसार इसमें वायुपुराण के समान ही 12000 श्लोक और चार पाद हैं—(1) प्रक्रिया (2) अनुषङ्ग (3) उपोद्घातः और (4) उपसंहार। इस पुराण को 'वायवीयब्रह्माण्डपुराण' भी कहा जाता है। वायुपुराण की प्राचीनता और मूल के विषय में पहिले ही लिखा जा चुका है।

प्रथम पाद में नैमिषारण्याख्यान, हिरण्यगर्भोत्पत्ति, लोकवर्णन, विशेषतः भुवनकोश (भूगोल) का विस्तृत वर्णन है।

द्वितीय पाद में मन्वन्तरवर्णन, रुद्रोत्पत्तिकथा, ऋषिसर्ग, युगवर्णण, वेद-शाखा, पृथिवीदोहनादि।

तृतीय पाद में सप्तर्षिवंश, देवदानवोत्पत्ति, सूर्यवंश और चन्द्रवंश वर्णण विस्तार से कथित हैं।

चतुर्थपाद में भविष्य मन्वन्तरों एवं राजवंशों का कथन है ब्रह्माण्ड या वायु सभी पुराणों के मूल थे, एक ही मूल पुराण के अष्टादशधा पाठान्तर ही अठारह पुराण हुये जिस प्रकार एक ही वेद की सहस्राधिक शाखायें हुईं, इसीलिये कहा गया है—

ब्रह्माण्डञ्च चतुर्लक्षं पुराणत्वेन पठ्यते।
तदेव व्यस्य गदितमत्राष्टादशधा पृथक्॥

"ब्रह्माण्डपुराण ही चार लाख श्लोक के रूप में पढ़ा जाता है। इसी का विस्तार करके अठारह पुराण बनाये गये।" व्यास जी ने पुराणविद्या 28 व्यासों की परम्परा में अपने गुरु जातूकर्ण्य से सीखी, इसके मूल प्रवक्ता वायु, नारद, मार्कण्डेय, कुमारादि थे।

उपपुराण

शिवपुराण—कुछ लोग शिवपुराण को वायुपुराण के स्थान पर महापुराण मानते है, परन्तु भाषा और विषय की दृष्टि शिवपुराण सर्वथा आधुनिक रचना सिद्ध होती है, कुछ विद्वान् इसको दशवीं या ग्याहरवीं शती की रचना मानते हैं। कुछ भी हो एक अर्वाचीन उपपुराण है।

शिवपुराण में 24000 श्लोक और द्वादश संहितायें हैं—(1) विद्येश (2) रौद्र (3) रौद्र (4) वैनायक (5) उमा (6) मातृ (7) रुद्र (8) कैलाश (9) शतरुद्र (10) कोटिरुद्र (11) आद्यकोटिरुद्र और (12) वायवीयसंहिता।

इस पुराण में मुख्यतः शिव का महात्म्य विविध कथानकों द्वारा कथित है।

देवीभागवतपुराण—भागवतपुराण के अनुकरण पर यह पुराण बनाया गया, इसमें उसी के अनुसार द्वादशस्कन्ध और 18000 श्लोक हैं। देवीभागवत में विष्णु के स्थान पर देवी का महात्म्य गाया गया है, स्पष्टतः यह शाक्त सम्प्रदाय का ग्रन्थ है।

उपपुराण-संख्या और और नाम—महापुराणों या पुराणों के समान ही अठारह पुराण माने जाते हैं यथा देवीभागवत (1।1।3) में इनके नाम इस प्रकार उल्लिखित हैं—(1) सनत्कुमार (2) नारसिंह (3) नारदीय (4) शिव (5) दौर्वासस (6) कापिल (7) मानव (8) औशनस (9) वारुण (10)

कालिका (11) शाम्ब (12) सौर (13) पाराशर (14) आदित्य (15) माहेश्वर (16) भागवत (17) नन्दि और (18) वासिष्ठपुराण।

इनके अतिरिक्त ये उपपुराण और कहे गये हैं—(1) कौर्म (2) भार्गव (3) आदि (4) मुद्गल (5) कल्कि (6) देवी (7) महाभागवत (8) बृहद्धर्म (9) परानन्द (10) पशुपति (12) आत्मपुराण (13) गणेशपुराण (14) बृहन्नारदीय। इनके अतिरिक्त अन्य कई उपपुराण सुने जाते हैं। ज्योतिष की अप्रकाशित गार्गी संहिता का 'युगपुराण' इतिहासज्ञों में अतिविख्यात है, इसमें भविष्यकालिक मौर्य, शुङ्ग, यवन शक आदि राजाओं का महत्वपूर्ण उल्लेख है।

इस प्रकार पुराणसाहित्य अतिविशाल और विपुल है।

सप्तम अध्याय

पुराणविषयनिदर्शन

पुराणों के मुख्यसर्गादि विषयों का सङ्केत पूर्वपृष्ठों पर किया जा चुका है, इसी प्रकार अन्य सामान्य और विशिष्ट विषय भी पूर्व सङ्केतित है। पुराणों का मुख्य विषय है सृष्टिविद्या और मानव इतिहास। इन्हीं विषयों का यहाँ संक्षेप में निदर्शन प्रस्तुत करते हैं।

पद्माकारा पृथिवी—पुराणों के भुवनकोश में मुख्यतः पृथिवी के भूगोल का वर्णन है, वहाँ पृथिवी को पद्माकारा (कमलवत्) पंखड़ीयुक्त बताया गया है—

पद्माकारा समुत्पन्ना पृथिवी सघनद्रुमा।
तदस्य लोकपद्मस्य विस्तेरण प्रकाशितम्॥

चारद्वीप—इस लोकपद्म पृथिवी के चार द्वीप पत्र (पत्ते) थे—

महाद्वीपास्तु विख्याताश्चत्वारः पत्रसंज्ञिताः।
भद्राश्वं भारतं चैव केतुमालं पश्चिमे।
उत्तराश्चैव कुरवः कृतपुण्यप्रतिश्रयाः॥

भद्राश्व (चीन), केतुमाल (पश्चिम एशिया-ईरानादि) उत्तरकुरु (सोवियत रूस) और भारतवर्ष-विख्यात पत्ररूपी द्वीप हैं।"

भारतद्वीप—भारतवर्ष के नौ भाग या द्वीप थे—

इन्द्रद्वीपः कसेरुश्च ताम्रपर्णी गभस्तिमान्।
नागद्वीपस्तथा सौम्यो गन्धर्वस्त्वथ वारुणः॥

इन्द्रद्वीप=वर्मा, कसेरु=मलयद्वीप, ताम्रपर्णी=सिंहल गभस्तिमान्=जावादिद्वीप, नागद्वीप=अण्डमाननिकोवार, सौम्य=सुमात्रा, गन्धर्व=तोम्बरु, न्यूगिनी, वारुण=बोर्नियो।

दशावतार—विष्णु के प्रसिद्ध दश अवतारों का संक्षेप में उल्लेख वायु-पुराण में इस प्रकार हुआ है—

धर्मान्नारायणस्तस्मात्संभूतोश्चाक्षुषेऽन्तरे ।
यज्ञं प्रवर्तयामास चैत्ये वैवस्वतेऽन्तरे ॥
द्वितीयो नरसिंहोऽभूद्रुद्रसुरपुरस्सरः ।
बलिसंस्थेषु लोकेषु त्रेतायां सप्तमेयुगे ।
दैत्यैस्त्रैलोक्याक्रान्ते तृतीयो वामनोऽभूत् ॥
त्रेतायुगे तु दशमे दत्तात्रेयो बभूव ह ॥
नष्टे धर्मे चतुर्थश्च मार्कण्डेयपुरस्सरः ।
पञ्चमः पञ्चदशम्यां तु त्रेतायां संबभूव ह ।
मान्धाता चक्रवर्त्तित्वे तस्थौ उतथ्यपुरस्सरः ।
एकोनविंशे त्रेतायां सर्वक्षत्रान्तकोऽभूत् ।
जामदग्न्यस्तथा षष्ठो विश्वामित्रपुरस्सरः ।
चतुर्विंशे युगे रामो वशिष्ठेन पुरोधसा ॥
सप्तमो रावणस्यार्थे जज्ञे दशरथात्मजः ।
अष्टमो द्वापरे विष्णुरष्टाविंशे पराशरात् ।
वेदव्यासस्ततो जज्ञे जातूकर्ण्यपुरस्सरः ॥
तथैव नवमो विष्णुरदित्यां कश्यपात्मजः ।
देवक्यां वसुदेवात्तु ब्रह्मगार्ग्यपुरस्सरः ॥
अस्मिन्नेव युगे क्षीणे संध्याश्लिष्टे भविष्यति ।
कल्किर्विष्णुयशा नाम पाराशर्यः प्रतापवान् ।
दशमो भाव्यः संभूतो याज्ञवल्क्यपुरस्सरः ॥

"चाक्षुषमन्वन्तर में धर्म से नारायण का अवतार हुआ, जिन्होंने वैवस्वतमन्वन्तर में यज्ञ का चैत्य में प्रवर्तन किया। विष्णु के द्वितीय अवतार नरसिंह रुद्र को आगे करके हुये। सप्तम त्रेतायुग में लोकों के बलि के अधीन होने पर तृतीय अवतार वामन का हुआ। दशम त्रेतायुग में मार्कण्डेयपुरस्सर चतुर्थ अवतार दत्तात्रेय का हुआ, तब धर्म नष्ट हो गया था। पन्द्रवें त्रेतायुग में पञ्चम अवतार चक्रवर्ती मान्धाता का हुआ, जिनके पुरोहित उतथ्य आङ्गिरस थे। उन्नीसवें त्रेता में समस्त क्षत्रियों का अन्त करने वाले जामदग्न्य परशुराम का षष्ठविष्णु-अवतार हुआ, उस समय कौशिक विश्वामित्र उनके पुरोहित

थे। चौबीसवें त्रेतायुग में वसिष्ठ पुरोहित की उपस्थिति में सप्तम अवतार दाशरथिराम का हुआ, जिन्होंने रावण का वध किया। अट्ठाइसवें युग में पाराशर से जातूकर्ण्यपुरस्सर वेदव्यास का अष्टम अवतार हुआ। इसी युग में कश्यपपुत्र विष्णु अदितिरूपिणी देवकी में वासुदेव कृष्ण का नवम वैष्णव अवतार हुआ, जिनके पुरोहित गार्ग्यऋषि थे। कलियुग के अन्त में विष्णु का दशम अवतार कल्कि विष्णुयशा के नाम से हुआ जो पराशरगोत्रीय ब्राह्मण थे तथा कोई याज्ञवल्क्य उनके पुरोहित थे।

गाथायें—इतिहासपुराणों में अनेक प्राचीन गाथाश्लोक उद्धृत मिलते हैं जो किन्हीं प्राचीनपुराणग्रन्थों से ली गई हैं। इनमें से कुछ गाथायें ब्राह्मण ग्रन्थों में भी मिलती है, यथा दौष्यन्तिभरत सम्बन्धि-गाथायें ऐतरेयब्राह्मण में किसी प्राचीनपुराण से उद्धृत की हैं। कुछ गाथाओं का निदर्शन द्रष्टव्य है।

मान्धाता क्षेत्र—यावत्सूर्यः उदेति स्म यावच्च प्रतितिष्ठति।
सर्वं तद्यौवनाश्वस्य मान्धातुः क्षेत्रमुच्यते॥

"जहाँ से सूर्य उदित होता हैं और जहाँ तक ठहरता है, वहाँ तक यौवनाश्व मान्धाता का साम्राज्य था।"

अलर्क—षष्टिवर्षसहस्राणि षष्टिवर्षशतानि च।
नालर्कादपरो राजन् मेदिनीं बुभुजे युवा॥

"अलर्क के अतिरिक्त 66000 वर्ष (दिन=184 वर्ष) और किसी राजा ने युवारूप में राज्य नहीं किया।

ययातिगीत—न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति।
हविषा कृष्णवर्त्मेव भूय एवाभिवर्धते॥

"इच्छाओं की पूर्ति से इच्छायें शान्त नहीं होती, बल्कि वे आग में घी डालने के समान उपभोग से बढ़ती हैं।"

भरतगाथा—भरतस्य महत्कर्म न पूर्वे नापरे जनाः।
नैवापुर्नैवाप्स्यन्ति बाहुभ्यां त्रिदिवं यथा॥

"न भरत से पूव और न पश्चात् उसके महान् कर्म (यशः) को किसी ने प्राप्त किया, जिस प्रकार हाथों से आकाश को कोई नहीं पकड़ सकता ।

रामगाथा—महाभारत, रामायण और पुराणों में राम-सम्बन्धि ये गाथायें मिलती हैं—शयामो युवा लोहिताक्षो दीप्तास्यो मितभाषिता ।

आजानुबाहुः सुमुखः सिंहस्कन्धो महाभुजः ।
दशवर्षसहस्राणि दशवर्षशतानि च ।
अयोध्यापतिर्भूत्वा रामो राज्यमकारयत् ॥
(हरिवंश पु० 1 । 41 । 50-51)

"श्यामवर्ण, युवा, लोहिताक्ष (लाल आँख वाले), तेजस्वी मुखवाले मितभाषी, अजानुबाहु, सुमुख, सिंह स्कन्ध, महाभुज राम ने ग्यारह-सहस्रवर्ष (=दिन=31 वर्ष) अयोध्या का राज्य किया।"

भविष्यवर्णन

कल्कि—बहुत कम विद्वानों ने कल्कि की ऐतिहासिकता पर बहुत कम ध्यान दिया है। कल्किपुराण में कल्कि का विस्तृत इतिहास मिलता है। तदनुसार शम्भल ग्राम में विष्णुयशा ब्राह्मण जो पाराशर्यगोत्रीय थे, के घर में जन्म हुआ। उनकी माता का नाम सुमति था, वे चार भ्राता थे— कवि, प्राज्ञ, सुमन्त्र और कल्कि। कल्कि का अवतार विशाखयूप राजा के समय हुआ था, यह विशाखमूप मगध के बालक प्रद्योतवंश का तृतीय राजा था। विशाखयूप का राज्यकाल पं. भगवद्दत्त के अनुसार कलिसम्वत् 1050 से 1100 तक था—

विशाखयूपो भविता नृपः पञ्चाशतं समाः ॥
(वायुपुराण)

यह समय गौतमबुद्ध से प्राय 200 वर्ष पूर्व था, पुराणों की गणना के अनुसार बुद्ध का समय प्रायः 1800 वि० पू० था। अतः कल्कि विशाखयूप के समकालीन और बुद्ध से दो शती पूर्व हुये। विशाखयूप की सहायता से कल्कि ने सम्पूर्ण भारत की दिग्विजय की और म्लेच्छों का वध किया—

कल्किर्विष्णुयशा नाम पाराशर्यः प्रतापवान् ।
दशमो भाव्यः संभूतो याज्ञवल्क्य पुरस्सरः ॥
अनुकर्षन्सवंसेनां हस्त्यश्वरथसंकुलाम् ।
प्रहीतायुधैर्विप्रैवृतः शतसहस्त्रशः ।
गान्धारान्पादरांश्चैव पुलिन्दान् दरदान् खशान् ।
तुषारान्बर्बरांश्चैव पुलिन्दान् दरदान् खशान् ।
प्रवृत्तचक्रो वलवान् म्लेच्छानामन्तकृद् वली ॥

"कल्कि विष्णुयशाः पाराशर्य प्रतापवान् याज्ञवल्क्य पुरस्सर दशम वैष्णव अवतार थे, उन्होंने हाथी, घोड़े और रथ की सेना का संचालन करते हुये लाखों ब्राह्मणसैनिकसहित गान्धार, पह्लव, यवन, शक, तुषार, बर्बर, पुलिन्द दरद, खश आदि म्लेच्छों का वध करके साम्राज्य स्थापति किया।

वह पच्चीस वर्षों तक शासन करते रहे—

पञ्चाविंशोत्थिते कल्पे पञ्चविंशतिर्वै समाः ।
विनिघ्नन्सर्वभूतानि मानुषानेव सर्वशः ॥

अष्टम अध्याय

पुराणरचनाकाल

कुछ विद्वानों का मत है कि कृष्णद्वैपायन पाराशर्यव्यास ही पुराण
विद्या के आदिम प्रवक्ता थे, उनके अनुसार व्यासजी ने उत्तरवैदिक युग में
एक पुराण संहिता रची, जिसमें 4000 श्लोक थे, जिनका उपबृंहण अष्टादश
और उपपुराणों के रूप में हुआ। इसके विपरीत हमारा दृढ़ मत है कि
पाराशर्यव्यास पुराणविद्या के अन्तिम प्रवक्ता थे, उनसे पूर्व शतशः अथर्वा-
ङ्गिरस ऋषियों (मार्कण्डेय, वशिष्ठादि) एवं नारदादि ने शतशः इतिहास-
पुराणों का निर्माण किया था, इसके प्रमाण वेदसंहिताओं, ब्राह्मणग्रन्थों,
उपनिषदों एवं अन्य प्राचीन ग्रन्थों से दिये जा चुके हैं। पाराशर्य व्यास ने
उन प्राचीनपुराणों का सार चतुःसाहस्री पुराणसंहिता में सङ्कलित किया
और प्राचीन इतिहास ग्रन्थों का सार महाभारत में संग्रहीत किया। प्राचीन
(प्राक्पाराशर्य) पुराणों के सहाय्य से व्यासशिष्यों (रोमहर्षण) तथा प्रशिष्यों
(शांशपायन, हारीतादि, उग्रश्रवासौति) ने चतुःसाहस्री पुराणसंहिता को आधार
बनाकार 18 पुराण एवं अनेक उपपुराण लिखे। इन पुराणों एवं उपपुराणों
में विभिन्न युगों में विशेषतः गुप्तकाल में अनेक विद्वानों ने हस्तक्षेप किया
इन ग्रन्थों के पर्याप्त प्राचीनअंश निकाल दिये गये और युगानुसार अनेक
नवीन अंश जोड़े गये, अतः पुराणों में क्षेपकों का बाहुल्य हो गया। अतः
पुराणों के रचनाकाल पर संक्षेप में विचार करते हैं।

ब्रह्मपुराण—'ब्रह्मा देवानां प्रथमः सम्बभूव' इस सिद्धान्त के अनुसार
स्वयम्भू ब्रह्मा अन्य सभी विद्याओं के मूल प्रवक्ता थे, इसी दृष्टि से 'ब्रह्मपुराण'
का सर्वप्रथम स्थान है; जिसके मूलप्रवक्ता स्वयम्भू ब्रह्मा थे। इस समय
उपलब्ध 'ब्रह्मपुराण' में भले ही एक भी श्लोक ब्रह्मकृत नहीं है, परन्तु क्योंकि
स्वयम्भू ब्रह्मा पुराणविद्या के आदिम प्रवक्ता थे, अतः उनके नाम पर प्रथम
पुराण का नाम 'ब्रह्मपुराण' रखा गया।

अष्टादश महापुराणों में अन्तर्भुक्त प्रथम ब्रह्मपुराण का महाभारतकाल में (प्राय: 3000 वि० पू०) व्यासशिष्य रोमहर्षण सूत ने बलराम की तीर्थयात्रा से पूर्व नैमिषारण्य में प्रवचन किया था। अनेक आधुनिक विद्वानों ने उपलब्ध ब्रह्मपुराण के रचनाकाल पर ऊहापोह की है।

इस समयउपलब्ध पुराण मूलब्रह्मपुराण का सर्वथा परिवर्तित रूप है। इसमें महाभारत, वायुपुराण आदि के शतश: श्लोक अक्षरक्ष: मिलते हैं। इस समय यह ग्रन्थ पुराणलक्षणसमन्वित न होकर तीर्थमहात्म्यग्रन्थ बना दिया गया है। इस पुराणसंस्करण की रचना सम्भवत दक्षिणभारत में दण्डकारण्य में प्रवाहशील गौतमीनदी के तट पर हुई थी, जैसा कि इसके अन्त:साक्ष्य से ज्ञात होता है—

श्रूयते दण्डकारण्ये सरित् श्रेष्ठास्ति गौतमी।

(ब्र० पु० पु० 129)

पृथिव्यां भारतं वर्षं दण्डकं तत्र पुण्यदम्।' (11 अ० 88) मूल ब्रह्मपुराण इस समय लुप्त है, इसका एक बड़ा प्रमाण है कि प्राचीन निबन्धकारों यथा बल्लालसेन के दानसागर में उद्धृत श्लोक उपलब्ध ब्रह्मपुराण में नहीं मिलते अत: प० बलदेव उपाध्याय प्रकाशित ब्रह्मपुराण का समय 14 या 15 वीं शती मानते हैं वास्तव में बात ऐसी नहीं है। यह तो सच है कि उपलब्ध ब्रह्मपुराण में पर्याप्तभाग अत्यन्त अर्वाचीन है और इसके अनेक अध्याय गुप्तकाल या 10 वीं बारहवीं शती में जोड़े गये हों' परन्तु ग्रन्थ का पर्याप्त अंश महाभारतकालीन ही है क्योंकि जो श्लोक महाभारत या वायुपुराण से अक्षरश: मिलते हैं वे निश्चय व्यास या व्यासशिष्यों की रचनायें हैं। पुराण के तीर्थविषयक अधिकांश वर्णन निश्चय ही आधुनिक हैं।

पद्मपुराण—कुछ विद्वान्, यथा डा० लूडर्स आदि पद्मपुराण के कुछ आख्यानों यथा ऋष्यश्रृङ्ग कथा एवं तीर्थयात्रा वर्णन को महाभारत वनपर्व के वर्णनों से प्राचीनतर मानते हैं, और कालिदासकृत अभिज्ञानशाकुन्तल नाटक पर पदमपुराण का प्रभाव मानते हैं ये दोनों ही बाते अलीक एवं अप्रामाणिक है। पद्मपुराण का सूतकृत पाठ निश्चय ही प्राचीन एवं महाभारत-कालीन था, लेकिन वह पाठ ज्यों की त्यों उपलब्ध पद्मपुराण में है, यह

माननी अपने आपको छलना है। कालिदास के नाटक के आधार ही वर्तमान पद्मपुराण में शकुन्तलोपाख्यान घढ़ा गया है, महाभारत का उपाख्यान ही प्राचीनतर, मूल एवं ऐतिहासिक है। पद्मपुराण के अनेक अंश कालिदास से प्राचीनतर तो हो सकते हैं परन्तु स्थूलरूप से यह पाठ कालिदास से उत्तर-कालीन, किंवा गुप्तोत्तरकालीन, सम्भवतः तृतीयशती का है।

विष्णुपुराण—डा० आर० सी० हाजरा[1] का मत कि विष्णुपुराण का कृष्णचरित हरिवंशपुराण के कृष्णचरित से प्राचीनतर है, सर्वथा भ्रामक है। द्वादशसहस्रात्मक मूलहरिवंश उग्रश्रवा सौति की रचना थी, इस समय हरिवंश में चारसहस्र से अधिक श्लोक प्रक्षिप्त हैं अनेक पाठान्तर भी हैं और कलिवर्णन जैसे अंश शुङ्गकाल या गुप्तकाल में जोड़े गये हैं, फिर भी हरिवंश का प्राचीनरूप प्रायेण अक्षुण्ण है, यह पहिले बताया जा चुका है कि हरिवंश में प्रह्लादभक्ति जैसी वस्तुओं का सर्वथा अभाव है, जब कि उपलब्ध विष्णुपुराण में भक्तिभावना का प्राचुर्य है। अतः हरिवंश का पाठ विष्णु के उपलब्ध पाठ से प्राचीनतर हैं।

इस तथ्य का पहिले ही उल्लेख किया जा चुका है कि विष्णुपुराण की प्रवक्तृपरपम्परा अन्य पुराणों की प्रवक्तृपरम्परा से पर्याप्त भिन्न है। वायु-पुराणादि में उनके प्रवक्ता ब्रह्मा, वायु आदि 28 व्यास कथित हैं, जब कि विष्णुपुराण के प्रमुख प्रवक्ता ऋभु, भागुरि, दधीचि, पुरुकुत्स, नर्मदा, धृतराष्ट्र नागादि हैं[2] स्पष्ट ही इस परम्परा का सम्बन्ध दक्षिणभारत के नागों से सिद्ध होता है, इतिहास में इक्ष्वाकुवंशीय राजा पुरुकुत्स का सर्वप्रथम विवाह-सम्बन्ध नागकन्या नर्मदा से हुआ। अतः इस पुराण की दाक्षिणात्य परम्परा अत्यन्त प्राचीन है। इसकी पुष्टि प्रकारान्तर से तमिल साहित्य से भी होती है। विद्वानों ने तमिलग्रन्थों से एक विशेष उद्धरण उद्धृत किया है 'कठलवणं पुराणमोदियन्' (विष्णुपुराण का विशेषज्ञ)। यह वाक्य तमिल-ग्रन्थ 'मणिमेखलै' में मिलता है। 'मणिशेखलै' ग्रन्थ का रचनाकाल संगमयुग

(1) पुराणिक रिकाड्‌स आॅन हिन्दू रिट्स एण्ड कस्टम्स (पृ० 23)

(2) भृगुणा पुरुकुत्साय नर्मदायै स चोक्तवान्। (वि०पु० 6।8।45)
नर्मदा धृतराष्ट्राय नागाद्यःपूरणाय च।

में द्वितीयशती माना जाता है, यह काल और भी प्राचीनतर हो सकता है। स्वयं विष्णुपुराण से इसकी दाक्षिणात्य परम्परा की पुष्टि होती है।

मूल विष्णुपुराण की स्वतन्त्र दाक्षिणात्यपरम्परा तो महाभारतकाल से अनेक सहस्राब्दी पूर्व अपान्तरतमा सारस्वत (नवम व्यास) भार्गव और पुरुकुत्स ऐक्ष्वाक के समय की है। वर्तमानपाठ का मूल पराशर ने भारत युद्ध से पूर्व मैत्रेय (बकदाल्भ्य) ऋषि को सुनाया, परन्तु उपलब्ध विष्णु पुराण का पाठ वैष्णवभक्ति के प्रभाव में वाकाटक नागयुग (विक्रम पूर्व) में बनाया गया, अतः उपलब्ध पाठ भी दो हजार वर्षों से अधिक पुराना है।

वायुपुराण—इसकी प्राचीनता और मूल का उल्लेख पूर्वपृष्ठों पर किया जा चुका है। इसके कलिकालवर्णन जैसे कुछ अंशों को छोड़कर सम्पूर्ण ग्रन्थ उग्रश्रवा सौति और शौनकीय दीर्घसत्र (2900 वि० पू०) के समय का है और पाराशर्य व्यास कृत चतुसाहस्रीपुराणसंहिता के चारहजारश्लोक इसी में समाविष्ट मिलते हैं। यह कालपूजित और ऋषिपूजितपुराण व्यासपूर्व पुरुरवा के समय से हर्षवर्धन (सप्तमशती) तक समान रूप से महनीय रहा और आज भी सर्वाधिक प्रामाणिक पुराण है।

इस पुराण के कुछ अंश अर्वाचीन भी हैं जैसा कि संकेत किया जा चुका है।

श्रीमद्भागवतपुराण—यह पुराणपञ्चलक्षण समन्वित होने पर भी प्रामाणिक पुराण न होकर भक्ति या ज्ञानशास्त्र है। इस ग्रन्थ की रचना भी दक्षिण भारत में वैष्णवभक्तों के प्रभाव में हुई। काव्य, ज्ञान और भक्तिशास्त्र की दृष्टि से ग्रन्थ का रचयिता अनुपम और विचक्षण बुद्धि था, परन्तु उसमें ऐतिहासिकबुद्धि की न्यूनता थी। इस ग्रन्थ में द्रविडदेश और उसके नदी एवं तीर्थों का महात्म्य गाया गया है, अतः यह दाक्षिणात्य वैष्णवपरम्परा में रचा गया। मध्यकालीन आचार्य रामानुज मध्वाचार्य आदि ने भागवत के श्लोक अपने ग्रन्थों में उद्धृत किये, जिनका समय सप्तम शती से द्वादश शती के मध्य में था। कुछ विद्वान् इसको बोपदेव (14 वीं शती) की रचना मानते है, यह मत सर्वथा अयुक्त है, परन्तु भागवतपुराण का व्यास, सूत या शौनक से सीधा सम्बन्ध नहीं था, यह सब कुछ होते हुये भी यह कोई आधुनिक ग्रन्थ

नहीं है । अनेक प्रमाणों से यह विक्रम की प्रारम्भिक शती की रचना सिद्ध होती है, क्योंकि जैनग्रन्थ 'अनुयोगद्वारसूत्र' में भागवत का उल्लेख है, जो दो हजार वर्ष पुराना ग्रन्थ हैं ।

यह सम्भव है कि भागवत की रचना विष्णुपुराण के समान दक्षिणभारत में नवम व्यास अपान्तरतमा सारस्वत की परम्परा में हुई हो, क्योंकि इसमें सारस्वतकल्प का वर्णन है—

सारस्वतस्य कल्पस्य मध्ये ये स्युः नरोत्तमाः ।
तद्वृत्तान्तोद्भवं लोके तद् भागवतमुच्यते ॥
(मत्स्यपुराण 53 । 21)

उपलब्ध भागवत अन्य पुराणों के विपरीत एक हाथ और एक काल की रचना है ।

नारदपुराण—डा० हाजरा के मतानुसार उपलब्ध नारदपुराण की रचना दशमी शती में हुई, क्योंकि भारवि का एक श्लोक (आपदां परमं पदम्) नारदपुराण में मिलता है । इसमें बौद्धों की निन्दा की गई है ।

मूल या आदिम नारदपुराण इतना ही पुराना था जितने पुराने देवर्षि नारद थे, यह पहले ही मीमांसा की जा चुकी है, वर्तमान प्रकाशित नारदपुराण भले ही सातवीं या दशवीं शती की रचना मानी जाय, परन्तु अष्टादशपुराणों की परम्परा में इसका मूल पाठ अधिसीमकृष्ण और शौनक के समय (2900 वि० पू०) का होना चाहिए । इस समय इसके प्रक्षिप्तांश निश्चय ही अत्यन्त अर्वाचीन हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं ।

मार्कण्डेयपुराण—अधिकांश विद्वान्, विशेषतः पार्जीटर और वासुदेवशरण अग्रवाल, इस ग्रन्थ की रचना विक्रम की पांचवी शती में चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य के समय में मानते थे ।

मूल मार्कण्डेयपुराण देवासुरयुग में मार्कण्डेयऋषि ने रचा था, उस मूलग्रन्थ का कुछ भाग मार्कण्डेयसमस्यापर्व के रूप में महाभारत, वनपर्व में मिलता है । उसी मूल मार्कण्डेय के आधार पर महाभारतकाल में व्यासशिष्य जैमिनि को यह पुराण पक्षियों ने सुनाया, अतः इस पुराण का वर्तमानपाठ

महाभारतकालीन है, इसमें क्षेपक भी अधिक नहीं है. हाँ कुछ पाठ परिवर्तन संभव है। जो लोग इसमें 600 ई० की रचना मानते हैं, उनका मत अत्यन्त भ्रामक एवं बुद्धिविपर्यास है।

अग्निपुराण—मूल अग्निपुराण किसी आङ्गिरस या बार्हस्पत्यऋषि की प्राग्भारतकालीन रचना थी। वर्तमानपाठ का मूल महाभारतकालीन था, लेकिन उपलब्धपाठ गुप्तकाल के अन्त (चतुर्थशती) का है। कुछ विद्वान् इसको सातवीं या दशवीं शती का ग्रन्थ मानते हैं।

भविष्यपुराण—मूल भविष्यपुराण त्रेतायुगीन ऋक्ष व्यास (वाल्मीकि) से पूर्व भी विद्यमान था। वर्तमानपाठ का मूल शौनक के दीर्घसत्र में रचा गया। परन्तु भविष्यपुराण के पाठों में हस्तक्षेप 19 शती में अंग्रेजी राज्यकाल तक होता रहा।

ब्रह्मवैवर्तपुराण—इस पुराण का मूल बहुत प्राचीन नहीं था, सम्भवत वैष्णवों और वेदान्तियों की परम्परा में इसका उद्भव हुआ। यह सम्भव है मूल ब्रह्मवैवर्त बादरायण ब्रह्मसूत्रों के आसपास (2800 वि० पू०) रचा गया हो। परन्तु इस ग्रन्थ का वर्तमान पाठ अत्यन्त आधुनिक है और इसके कुछ अंश तो द्वादशी या पन्द्रहवीं शती में रचे गये। कुछ विद्वान् इस पर गीतगोविन्दकार जयदेव का प्रभाव मानते हैं।

लिंगपुराण—इसका मूल भी ब्रह्मवैवर्त के समान महाभारत युद्धकाल में था, इस पुराण में क्षेपक अतिस्वल्प है और अपने मूलरूप में ही यह प्रकाशित है, जो लोग इसको अष्टमी शती की रचना मानते हैं वे महान् भ्रम में है।

वराहपुराण—इसका मूल प्राग्भारतकाल या भारतयुद्ध काल था परन्तु शक काल म्लेच्छयुग में (विक्रमपूर्व) इसका वर्तमान पाठ बनाया गया, जब कि भारत में सूर्यमन्दिरों और सूर्यपूजा का विशेष प्रचलन हुआ। इसको दशम-शती की रचना मानना कोरी कल्पना मात्र है।

स्कन्दपुराण—इसके मूल प्रवक्ता सनत्कुमार ऋषि नारद के गुरु थे, अतः इसका मूल देवयुग में था। महाभारतयुग में व्यासशिष्यों ने उस प्राचीन सनत्कुमार पुराण का पुनसंस्करण बनाया और उसी की छाया पर प्राप्त स्कन्दपुराण

रचा गया। कुछ लोग इसको नवमशती में रचित मानते हैं वे भ्रम में ही हैं, यद्यपि इस पुराण का उपलब्ध पाठ बहुत प्राचीन नहीं, फिर भी वह आन्ध्रसातवाहन युग के अन्त (300 वि० पू०) का है।

वामनपुराण—इसका मूल महाभारतकाल में होते हुए भी कालिदास के अनन्तर इसके पाठों में परिवर्तन किया गया और शैवों ने इस वैष्णवपुराण को शैव बना दिया, अत वर्तमान पाठ को विक्रम की प्रथम या द्वितीय शती में बनाया गया, जबकि शैव राजाओं का प्राबल्य था।

कूर्मपुराण—यह वामनपुराण के तुल्य प्राचीन है, अत: व्यासशिष्य प्रोक्त होने पर भी इसका पाठ गुप्तयुग (प्रथमशती) में बनाया गया।

मत्स्यपुराण—इस पुराण में वर्णित (म० पु० 24 अ०) उर्वशी आख्यान का कालिदासकृत 'विक्रमोर्वशीय नाटक' से पर्याप्त साम्य है, अतः इसका वर्तमान पाठ तो कालिदास के अनन्तर निर्मित है, परन्तु इसका मूल शतपथोक्त पारिप्लवोपाख्यान से भी प्राचीनतर है, कम से कम वर्तमान मत्स्यपुराण का मूल पाठ व्यासशिष्यों का बनाया हुआ है। वर्तमानपाठ सातवाहनोत्तरयुगीन है।

गरुड़पुराण—इस पुराण का आयुर्वेदीय भाग वाग्भट्टकृत 'अष्टांगहृदय' ग्रन्थ से साम्य रखने के कारण विद्वान् इसको नवमशती की रचना मानते हैं। वाग्भट्ट चन्द्रगुप्तसाहसांक (शब्द सम्वत्प्रवर्तक, 135 वि० स०) का सम्य था अतः पुराण का उपलब्ध पाठ द्वितीयशती का है, परन्तु इस पुराण की मूल परम्परा मत्स्य के समान पारिप्लवोपाख्यान से पूर्वतर की है।

ब्रह्माण्डपुराण—यह वायुपुराण का एक पाठान्तर मात्र होने से, उसी के तुल्य प्राचीन हैं। मूल पाठान्तर, दोनों के पुराणों के सूतशिष्यों द्वारा निर्मित हैं, कुछ श्लोक प्रक्षिप्त हो सकते हैं, अतः इस आधार पर इसे गुप्तयुग की रचना मानना महती भ्रान्ति है, व्यास के श्लोक इस पुराण में सर्वाधिक सुरक्षित हैं।

परिशिष्ट

इतिहासपुराण संदर्भग्रन्थसूची

(Bibliography)

1. (i) रामायण महाकाव्य श्री पाद दामोदर सातवलेकर—स्वाध्याय मण्डल औंध (सतारा)
(ii) वाल्मीकीयरामायण—गीताप्रेस गोरखपुर।
2. (i) महाभारत—सुकथांकर—पूरा संस्करण।
(ii) महाभारत—गीताप्रेस गोरखपुर।
3. (i) हरिवंशपुराण—गीताप्रेस गोरखपुर।
(ii) हरिवंश—वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई (1847)

पुराण

1. अग्निपुराण—आनन्दाश्रम संस्कृतग्रन्थावली 1900
2. अहिर्बुध्न्यसंहिता—रामानुजाचार्य—अाड्यार 1916
3. कल्किपुराण श्रीनिगमागमपुस्तकभण्डार, काशी 1963
4. कालिकापुराण—वेंकटेश्वर प्रेस बम्बई
5. (i) कूर्म्मपुराण—बिब्लोथिका इण्डिका, कलकत्ता 1890
(ii) कूर्मपुराण—मनसुखराय मोर क्लाइवरोड, कलकत्ता 1961
6. गरुड़पुराण—सरस्वतीप्रेस कलकत्ता 1890
7. देवीभागवत—मनुसुखरायमोर, क्लाइवरोड, कलकत्ता
(ii) देवीभागवत—वेंकटेश्वर प्रेस बम्बई
8. (i) पद्मपुराण—नवलकिशोर प्रेस, लखनऊ
(ii) पद्मपुराण—आनन्दाश्रम संस्कृत ग्रन्थावली
9, बृहद्धर्मपुराण—बिब्लिथिका इण्डिका, कलकत्ता।
10. बृहन्नारदीयपुराण बिब्लिथिका इण्डिका, कलकत्ता।
11. ब्रह्मपुराण—आनन्दाश्रम, संस्कृतसीरीज,
12. ब्रह्मवैवर्तपुराण—कलकत्ता
13. ब्रह्माण्डपुराण—वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई। 1888

14. भविष्यपुराण—वेंकटेश्वरप्रेस, बम्बई
15, श्रीमद्भागवतपुराण—गीता प्रेस गोरखपुर
16. (i) मत्स्यपुराण—आनन्दाश्रम ग्रन्थावली
(ii) मत्स्यपुराण—मनसुखरायमोर, कलकत्ता
17. मार्कण्डेयपुराण—वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई
18. वामनपुराण—वेंकटेश्वर प्रेस, बम्बई
19. (i) वायुपुराण—हिन्दीसाहित्यसम्मेलन, प्रयाग।
(ii) वायुपुराण—संस्कृतिप्रकाशन, बरेली
(iii) वायुपुराण—बिब्लिथिका इण्डिका, कलकत्ता।
20. वाराहपुराण—बंगालएशियाटिक सोसाइटी, कलकत्ता
21. विष्णुपुराण—गीताप्रेस गोरखपुर
22. विष्णुधर्मोत्तरपुराण—वेंकटेश्वर प्रेस बम्बई

सन्दर्भग्रन्थ हिन्दीग्रन्थ

1. गिरधरशर्माचतुर्वेदी—पुराणपारिजात
2. मधुसूदन ओझा—पुराणनिर्माणाधिकरणम् जयपुर
मधुसूदन ओझा—पुराणोत्पत्तिप्रसङ्ग जयपुर
3 माधवाचार्यशास्त्री—पुराणदिग्दर्शन-दिल्ली सं 2014
4. महाभारत की नामानुक्रमणिका—गीताप्रेस गोरखपुर सं 2016
5. ज्वालाप्रसादमिश्र—अष्टादशपुराणदर्पण—श्रीकृष्णदास
बम्बई सं 1979
6. पं० भगवद्दत्त—भारतवर्ष का बृहद् इतिहास-दो भाग
इतिहासमण्डल-दिल्ली
7. पं० भगवद्दत्त वैदिकवाङ्मय का इतिहास दो भाग
सं सत्यश्रवा—(प्रणवप्रकाशन)-दिल्ली
8. रामशंकर भट्टाचार्य—(1) अग्निपुराणस्य विषयानुक्रमणी
भारतीयविद्या प्रकाशन, वाराणसी 1963
(ii) गरुड़पुराण—भूमिका विषयानुक्रमणी

चौखम्वा संस्कृत सीरीज, वाराणसी
(iii) पुराणगत वैदिकसामग्री का अनुशीलन
हिन्दीसाहित्य सम्मेलन प्रयाग 1965
(iv) इतिहासपुराण अनुशीलन इण्डोलोजीकल बुक हाउस, वाराणसी
9. महाभारतकोशः—चौखम्वाविद्या भवन, वाराणसी
10. श्रीकृष्णमणि त्रिपाठी—(i) पुराणतत्त्वमीमांसा—वाराणसी
(ii) अष्टादशपुराणपरिचय 11
11. वलदेव उपाध्याय — (i) पुराणविमर्श—चौखम्वा विद्याभवन
(ii) भागवतसम्प्रदाय—ना० प्र० स० काशी
12. कालूराम शास्त्री—पुराणवर्म
13. कामिल वुल्के—रामकथा—हिन्दीपरिषद् प्रयाग
14. वदरीनाथ शुक्ल—मार्कण्डेयपुराण एक अध्ययन
चौखम्वा, काशी 1960
15. बुद्धप्रकाश—महाभारत एक ऐतिहासिक अध्ययन
त्रिवेणी प्रकाशन, इलावाद
16. शांतिकुमार नानूराम व्यास—रामयणकालीनसंस्कृति
सत्साहित्य प्रकाशन, दिल्ली 1958

अंग्रेजी में संदर्भग्रन्थ

1. पार्जीटर—(i) एंशेण्ट इण्डियन हिस्टोरिकल ट्रेडीशन—मोतीलाल वनारसीदास दिल्ली
(ii) डाइनेस्टीज आफ दी कलि एज. ओक्सफोर्ड 1913
2. विलसन—विष्णुपुराण, इण्ट्रोडक्शन एण्ड ट्रान्सलेशन
3. किरफेल—(i) डास पुराण—पुराण पञ्चलक्षण वोन 1927
(ii) भारतवर्ष—स्टटगर्ट 1931
4. एच० सी० हाजरा—(i) स्टुडीज इन पुरानिक रिकार्ड आफ हिन्दू राइट्स् एण्ड कस्टम्स् ढाका 1940
(ii) स्टुडीज इन उपपुराणाज—2 वोल्यूमस्
संस्कृतकालेज, कलकत्ता

5. डी० आर० मनकड—(i) पुरानिक क्रानोलोजी
(ii) युगपुराण
6. पी० वी० काणे—हिस्ट्री आफ धर्मशास्त्र
7. बी० सी० ला—हिस्टोरिकल ज्योग्राफी आफ एंशेन्ट इण्डिया—पेरिस 1954
8. वी० सी० अग्रवाल—(i) वामनपुराण—ए स्टुडी 1964
9. मत्स्यपुराण—एस्टुडी—काशिराजट्रस्ट, वाराणसी
10. पुराण—ए रिसर्ज बुलेटिन—काशिराजट्रस्ट, वाराणसी
11. जेकोबी—डास रामायण बोन 1893
12. मजूमदार ए.के.—दी रामायण ए क्रिटिसिज्म
13. रामस्वामी शास्त्री—स्टुडीज इन रामायण, बडौदा 1941
14. सुकथांकर— (i) दी राम एपीसोड—पूना 1941
(ii) भार्गवस एण्ड महाभारत
15. चिन्तामणि वैद्य— दी रिडल आफ रामायण, बम्बई 1906
16. आर. आर. दीक्षितार— सम एस्पेक्ट्स आफ वायुपुराण मद्रास 1933
17. हापकिन्स—दी ग्रेट एपिक आफ इन्डिया न्यू हेवेन, येल यूनिवर्सिटी 1920
18. डी. आर. पाटिल—कल्चरल हिस्ट्री फ्रोम वायुपुराण
19. पुसाल्कर—स्टडीज इन एपिक एण्ड पुराणास आफ इन्डिया भा. विद्याभवन बम्बई 1953
20. आर. शास्त्री—स्टुडीज इन रामायण, बड़ौदा
21. ए. बी. एल.—स्टुडीज इन स्कन्दपुराण कैलाशप्रकाशन लखनऊ
22. पी. एन. मलिक—ए क्रिटिकल स्टुडी आफ महाभारत कलकत्ता 1939
53. सीतानाथ प्रधान—क्रोनोलोजीं आफ एंशेन्ट इन्डिया 1937
24. पी. के. गोडे—क्रिटिकल स्टडीज इन महाभारत, बम्बई 1944
25. हापकिन्स—एपिक माइथालोजी बम्बई 1915
26. चिन्तामाणि वैद्य—एपिक इन्डिया बम्बई 1907
27. महाभारत एन एनालाइसिस एण्ड इण्डेक्स ओक्सफोर्ड
28. जगन्नाथराव—दी एज आफ महाभारत मद्रास 1931
29. हेमचन्द्ररायचौधरी—पोलिटिकल हिस्ट्री आफ इन्डिया

हमारी अन्य परीक्षोपयोगी पुस्तकें

लेखक—डा० कुंवरलाल (व्यासशिष्य)

1. वैदिकसाहित्य का इतिहास	8.00
2. इतिहासपुराणसाहित्य का इतिहास	10.00
3. भारतीय संस्कृति	15.00
4. संस्कृतललितसाहित्य का इतिहास	12.00
5. निरुक्तसारदर्शन	15.00
6. उपनिषद्दर्शन	10.00
7. सेतिहाससांख्यदर्शन	12.00

इतिहासविद्याप्रक

दिल्ली